और अन्य कहानियाँ

: प्रकाशक :

हिन्दी विश्व-भारती कार्यालय,

चारबाग़, लखनऊ

प्रकाशक
श्री० राजराजेश्वर प्रसाद भार्गव,
हिन्दी विश्व-भारती कार्यालय,
चारबाग़, लखनऊ

प्रथम संस्करण
मूल्य
४॥) रु०

मुद्रक
पं० भृगुराज भार्गव
भार्गव प्रिंटिंग वर्क्स,
लखनऊ.

कहानियाँ

घमंडी पत्ते

पास-पड़ौस की पगडंडियों पर चलनेवाले राहगीरों के लिए यह पेड़ एक तरह की सराय-सा बना हुआ था.........

मैदान के बीचोबीच बरगद का एक बहुत बड़ा हरा-भरा पेड़ खड़ा था। वह कई सौ बरस का पुराना था और ज्यों-ज्यों उसकी उम्र बढ़ती जाती थी, त्यों-त्यों वह और भी ज़्यादा छायादार होता चला जाता था। उसकी लंबी लटें लटककर नीचे धरती को चूमने लगी थी और ज़मीन का रस चूसकर वे भी डालियों की तरह हरी-भरी हो चली थी—उनमें जगह-जगह नई कोपलें फूट निकली थी। इस तरह एक ही पेड़ के बहुत-से तने बन गए थे और ऐसा मालूम देता था मानों वे सब उस बूढ़े बरगद के पोते-परपोते हों, जो दिन-पर-दिन अपनी बढ़ती करते हुए कुनबे का दायरा बढ़ाते चले जा रहे हों!

इस बरगद की छाया में सैकड़ों थके-माँदे बटोही आकर आराम करते। जब जेठ-बैसाख की दोपहरी में लू की लपट से मैदान झुलसने लगता और सूरज माथे पर चढ़कर मानों अंगारे बरसाने लगता, तब दूर-दूर से आकर लोग इस बरगद की छाया में घड़ी भर के लिए अपनी तपन मिटाते, जिससे उसके नीचे एक मेला-सा लग जाता। ठंढे पानी के घड़े भरे जाते, लोग अपना-अपना सत्तू और गुड़ निकालकर कलेवा करते और तब सिर के नीचे गठरी रखकर छाँह में लेटे-लेटे वहीं दो घड़ी के लिए सुस्ता भी लेते। इस तरह पास-पड़ौस की पगडंडियों पर चलनेवाले राहगीरों के लिए यह पेड़ एक तरह की सराय-सा बना हुआ था। इसके साथ ही उसकी डालियों और टहनियों पर तरह-तरह के रंग-बिरंगे पखेरुओं के बसेरा लेने के कारण जो चहलपहल मची रहती थी उसकी छटा कुछ और ही थी—उस पर मानों चिड़ियों की राजधानी बसी थी! सुबह-शाम उनकी सुरीली बोलियों और मीठी चहकारों से वह पेड़ इस तरह झनझनाकर बज उठता जैसे कोई बहुत बड़ा अनोखा बाजा हो, जिसमें से एक साथ ही तरह-तरह के सुर निकलकर सारे आसमान को गुँजा दे रहे हों!

यह बरगद बेचारा आप तो बहुत ही भला और सीधा-सादा था, लेकिन उसके पत्ते बड़े छँटे हुए थे—उन्हें अपने ऊपर बड़ा घमंड हो गया था। वे नित जो यह देखते कि कितने ही आदमी उनकी छाँह से फ़ायदा उठाते हैं और कितने पखेरू उन्हीं का आसरा लेकर रात को बसेरा लेते हैं, तो उनके मन में यह घमंड का भाव उठने लगता कि 'भला हमसे बड़ा दुनिया में और कौन हो सकता है! हम ही धूप से झुलसे हुए, लू से लूँसे गए और प्यास से बिलबिलाते हुए लोगों को इस गर्मी में ठंढक पहुँचाने का दम रखते हैं! तभी तो सारी दुनिया को हमारी तारीफ़ के गीत गाने पड़ते हैं।' धीरे-धीरे उन्हें ऐसा घमंड हो चला कि जब हवा का कोई झोंका उनको गुदगुदाता हुआ निकलता तो वे तालियाँ बजा-बजाकर उसकी हँसी

इस तरह एक ही पेड़ के बहुत-से तने बन गए थे और ऐसा मालूम देता था मानों वे सब उस बूढ़े बरगद के पोते-परपोते हों……

उड़ाने लगते थे। एक दिन यों ही बातों-बातों में उन्होंने हवा के झोंकों से कहा—'सारी दुनिया में हरियाली हमारे ही दम से है। अगर हम न हों तो पेड़ कितने भोंड़े और भयानक दिखाई दें! सारा बाग़ उजड़ जाए और राहगीर रास्ता चलना ही छोड़ दें। फिर इन्हें यह सुहावनी और ठंडी छाया कहाँ मिले? अगर पत्ते न हों तो सारे बाग़ ऐसे नंगे दिखाई दें जैसे सूखी लकड़ियों के ढेर हों। ओ हवा के झोंको! ज़रा हमें तो देखो। हम कितने चमकीले और हरे-भरे नज़र आते हैं कि तुम भी हमारे हाथ चूम लेने को बेबस हो जाते हो। तुम तो हमारे पुराने साथी हो! क्या तुम हमारी बड़ाई नहीं जानते। हम कितने बलवान् हैं! जब आँधी के साथ एड़ी-चोटी का ज़ोर लगाकर तुम इस बरगद का नामोनिशान मिटाना चाहते हो तब हम पेड़ से उतर-उतर कर दूर तक तुम्हारा पीछा करते चले जाते हैं और तुम्हें भगाकर ही दम लेते हैं।'

हवा का झोंका बोला—'जाओ जी, रहने दो! बहुत बढ़-बढ़कर बातें बनाने लगे हो। अभी मुझको गुस्सा आ जाए तो ज़रा-सी देर में तुम्हें चुर्र-मुर्र करके रख दूँ। अभी कल की बात भूल गए क्या? जब मैं शाम को पासवाली भूड़ की रेत से लड़ता-भिड़ता तुम्हारी तरफ़ से निकल रहा था और तुम हमारी आपस की लड़ाई में कूद पड़े थे तो मैंने तुमको कैसी-कैसी पटख़नियाँ दी थीं और मार लपटों के कैसा बुरा हाल बनाया था कि तुम तड़प-तड़पकर ज़मीन पर लोटे-लोटे फिरते थे? क्या आज फिर उसी तरह मार खाने को जी चाहता है?'

पत्ते बोले—'जा-जा, बस रहने दे। तेरी क्या ताक़त है कि हमारे सामने मैदान में पाँव जमा सके! तूने हज़ारों बार अपने लाव-लश्कर से हम पर चढ़ाई की, लेकिन अब तक हमारा बाल बाँका नहीं कर सका! हम तो ज्यों-के-त्यों अपनी जगह पर डटे हैं!'

इतने में अचानक धरती के नीचे से एक धीमी-सी आवाज़ आई—

'सुनो पत्तो! तुम्हें हमारा एहसान मानना चाहिए।'

'यह कौन है?' पत्तों ने तुनककर कहा—'यह कौन है, जो ज़मीन के नीचे से बोल रहा है?'

फिर धीमी आवाज़ में सुनाई दिया—'यह हम हैं, जिन्होंने तुमको पाला-पोसा और यह रंग-रूप दिया है। हम

धरती के नीचे अँधेरे में रहते हैं। पर तुम्हारे लिए हरियाली और तरावट जमा करके ऊपर भेज देते हैं, जिससे तुम इतने हरे-भरे और सुन्दर दिखाई देते हो। हम हैं इस पेड़ की जड़ें। हमारे ही बल पर तुम जीवित हो। अगर हम मुरझा जायँ तो फिर तुम एक मिनिट के लिए भी ज़िन्दा नहीं रह सकते। तुम में और हम में बड़ा अंतर है। तुम्हारी बहार तो दो दिन की है—पतझड़ आने दो, फिर तुम सब मुरझाकर ज़मीन पर गिर पड़ोगे और लोग तुमसे जाड़े की अँधेरी रातों में आग जलाया करेंगे। तुम जल-भुनकर राख हो जाओगे। लेकिन हम जड़ें तब भी ज़िन्दा रहेंगी और दूसरे पत्तों को पैदा कर देंगी, जो तुम्हारी ही तरह नरम, चमकीले और हरे-भरे होंगे।'

धरती के नीचे पानी भी पत्तों और जड़ों की यह बहस सुन रहा था। उसने जो जड़ों की लम्बी-चौड़ी डींग की बातें सुनीं तो गुस्से के मारे वह उबल पड़ा और कहने लगा—'क्यों जी, तुमने पत्तों पर तो अपने एहसान जता दिए, लेकिन मेरे एहसान का कुछ भी ज़िक्र नहीं? क्या यह सच नहीं है कि तुम मेरे ही बल पर ज़िन्दा हो? तुम मेरे ही घूँट पी-पीकर पत्तों तक तरी पहुँचाते हो। अगर मैं न हुआ तो तुम दो दिन में मौत के घाट उतर जाओ।'

पानी की ये खरी बातें सुनकर जड़ें ऐंठ गईं, पत्तों को भी ताव आ गया और टहनियाँ भी अकड़ गईं, और इन सबने पानी से कहा—'बस, बस, अब ज़्यादा एहसान न जताओ। कर लो, जो कुछ तुम्हारे जी में आए।'

पानी ने जो यह सुना तो वह जड़ों से कतराकर निकल गया। अब क्या था— जड़ें बूँद-बूँद पानी को तरस गईं! पत्ते भी सूख गए और टहनियाँ भी झुक गईं! ऐसा मालूम देता था जैसे वह पेड़ न जाने कब का झुलसा हुआ है, जिसमें न तरावट है, न हरियाली। जब चिड़ियों ने पेड़ की यह हालत देखी तो वे सब फुर से उड़ गईं और राहगीरों ने भी अपना बोरिया-बिस्तर सँभाला और किसी दूसरे पेड़ को टटोला। इस तरह बरगद का वह शानदार पेड़ देखते-देखते ठूँठ हो गया!

आख़िर जब प्यास हद से ज़्यादा बढ़ गई तो बरगद ने सिर झुकाकर पानी से कहा कि जो कुछ हो चुका उसे भूलकर अब हमारी बेबसी पर तरस खाओ और फिर हमारे गले से लग जाओ। पानी पानी ही ठहरा—वह बूढ़े बरगद की यह बात

जब चिड़ियों ने पेड़ की यह हालत देखी तो वे सब फुर से उड़ गईं और राहगीरों ने भी अपना बोरिया-बिस्तर सँभाला ....

सुनकर पानी-पानी हो गया । उसने इन सबको माफ़ कर दिया। फ़ौरन् ही जड़ें ताज़ी हो गईं । पेड़ की नस-नस में फिर से ज़िन्दगी दौड़ गई । पत्ते हरे हो गए और खुशी के मारे फिर तालियाँ बजाने लगे। टहनियों की कमर सीधी हो गई और फिर से वह बरगद पहले जैसा शानदार पेड़ बन गया।

तब हवा का एक झोंका आया और तेज़ी से यह कहता हुआ गुज़र गया—'देखो, अब अपनी हद से आगे न बढ़ना, वरना फिर पछताना पड़ेगा !'

ताले की अकड़

सेठ लछमनदास को अपनी दुकान से भी ज़्यादा फ़िक्र दुकान के ताले-कुंजी की रहती थी । वह कहा करते थे कि दिन भर दुकान चलाना या माल बेचकर नफ़ा कमा लेना और बात है, और दुकान बंद करते वक़्त होशियारी से ताला बंद करना और कुंजियों का गुच्छा सँभालकर घर पहुँचाना दूसरी ही बात है। वह दुकान बंद करते वक़्त बीस-बीस बार ताले को झटका दे-देकर देखते कि वह ठीक से बंद हो गया है या नहीं। सेठजी अक्सर इस बात की शिकायत किया करते थे कि लोग सौदा बेचना तो जानते हैं, लेकिन सौदे के माल की चौकसी रखना और चोरों से बचाना नहीं जानते । वे दुकान बंद करते वक़्त घर पहुँचने की जल्दी में या दिन भर के काम की थकान दूर करने की फ़िक्र में दुकान को पूरी तरह से देखभालकर बंद नहीं करते। अक्सर ऐसा होता है कि घबराहट में न तो सब सामान ही सँभालकर ठीक तौर से बटोरा जाता है, न किवाड़ों के तख़्ते ही सही-सही लगाए जाते हैं, और ताला लगाते वक़्त तो लोग बहुत ही ज़्यादा लापरवाही से काम लेते हैं—वे ताले में कुंजी घुमाकर इतनी जल्दी निकाल लेते हैं कि वह पूरी तरह बंद भी नहीं हो पाता, केवल अटककर रह जाता है !

सेठजी की होशियारी की आदत का यह हाल था कि सुबह दुकान खोलते वक़्त भी वह एकदम आकर ताले में कुंजी नहीं डाल देते थे, बल्कि पहले उसे खूब झिंझोड़-झिंझोड़कर देखते थे कि कहीं रात में वह खुला हुआ तो नहीं रह गया था ! जब उन्हें पूरा भरोसा हो जाता कि ताला अच्छी तरह बंद है, तभी वह उसमें कुंजी डालकर घुमाते थे। और दुकान बंद करते वक़्त तो उनकी यह होशियारी पागलपन की हद तक पहुँच जाती थी—वे बीस बार ताले को ज़ोर-ज़ोर से खींचते और उतनी ही बार

वह एकदम आकर ताले में कुंजी नहीं डाल देते थे, बल्कि पहले उसे खूब झिंझोड़-झिंझोड़कर देखते थे कि कहीं रात में वह खुला तो नहीं रह गया था...... .....

उसमें ताली डालते और बाहर निकालते। उनकी इस ताला बंद करने की कार्रवाई में अच्छा ख़ासा सौ-पचास मन की तुलाई का वक़्त लग जाता था, साथ ही बेचारे ताले की भी कल-कल हिल जाती थी, लेकिन इस पर भी उनका हाथ न थकता था !

सच तो यह था कि उन्हें ताले और कुंजी से गहरी लगन थी। जब भी उनको देखा गया, कुंजियों का एक बड़ा-सा गुच्छा उनकी धोती से कमर पर बँधा हुआ नज़र आया। एक बार सेठजी अलीगढ़ की नुमाइश में गए थे। वहाँ लोगों ने सैकड़ों-हज़ारों रुपए का तरह-तरह का माल ख़रीदा, पर आपने क्या मोल लिया——वही पीतल का एक बड़ा-सा मज़बूत और ज़बर्दस्त ताला ! इस ताले को सेठजी बड़े शौक़ से घर लाए। रास्ते में भी रेलगाड़ी में बैठने के बाद कई बार बक्स से निकाल-निकालकर उन्होंने उसे देखा, फिर घर पहुँचकर कुनबे के सभी लोगों को बारी-बारी से उन्होंने वह ताला दिखाया, और दूसरे दिन सुबह ही लोग जब बाज़ार से होकर निकले तो उन्हें सेठजी की दुकान पर वही नया ताला चमचमाते हुए नज़र आया ! इस ताले की दो कुंजियाँ सेठजी ने ख़रीदी थीं, जिसका जोड़ा अब अलग से उनकी कमर पर धोती से लटका रहने लगा। लोग मज़ाक उड़ाते और कहते——'सेटजी को अलीगढ़ की नुमाइश में पसन्द भी आई तो क्या चीज़——सिर्फ़ यह ताला !' इस पर वह जवाब देते——'सुनो भाई, मैं हूँ एक दुकानदार। मुझे सबसे पहले अपनी दुकान की हिफ़ाज़त की फ़िक्र है। मैं इतना मालदार नहीं कि रात को चौकीदार बिठाऊँ। ले-देकर यह ताला ही एक ऐसी चीज़ है, जो दुकान की रखवाली करने में मेरे काम आ सकता है।' जब लोग उनसे कहते कि 'आपने दुकान के लिए कोई सामान क्यों नहीं ख़रीदा', तो वह जवाब देते कि 'दुकान के लिए सामान ख़रीदना उस वक़्त तक बेकार है, जब तक कि दुकान की चौकसी का ठीक तरह से बन्दोबस्त न हो। मैं पहले हिफ़ाज़त का सामान तो कर लूँ ! उसके बाद दुकान के सामान की ख़रीद भी होती रहेगी। यों ही सामान लाकर डाल दूँ और चोर-उचक्के हाथ साफ़ कर जायँ तो मैं क्या ख़ाक समेटूँगा !'

सेठजी याद रखकर हफ़्ते में एक बार ताला-ताली को तेल पिलाते, ताकि उनको ज़ंग न लगने पाए। इसके अलावा महीने में एक बार ताला-कुंजी दोनों नहलाकर साफ़ किए जाते और उन पर राख रगड़कर पालिश की जाती, जिससे वे शीशे की तरह दमकने लगते थे। अपनी इस चमक-दमक को देखकर तो ताला-ताली दोनों ही की तबीयत ख़ुश हो जाया करती, लेकिन रोज़ सुबह-शाम खुलने और बंद होने की वह दाँता-किलकिल उन्हें पसंद न थी। हर दिन कई बार ऐसे ज़ोर से बेचारी कुंजी का कान उमेठा जाता था कि चीख़-चीख़कर रोने को उसका जी चाहता था। और बेचारे ताले की भी अँतड़ियाँ इतनी बेरहमी से मरोड़ी जाती थीं और इतनी बेदर्दी से उसका कलेजा बार-बार ताली की नोक से बरमाया जाता था कि वह सिर पटक-पटककर मर जाना पसंद करता पर इस तरह की तकलीफ़ उससे नहीं सही जाती थी।

कुछ दिनों तक तो ताला इस मुसीबत को झेलता रहा। किन्तु आख़िर एक दिन उसका धीरज टूट गया और वह गुस्से से तिलमिला उठा। वह सेठजी से तो कुछ न कह-सुन सका, पर बिगड़कर कुंजी से कहने लगा——'यह भी अजीब बात है कि तू रोज़ाना सुबह-शाम मेरे हलक़ में घुसकर इस तरह मेरे पेट की अँतड़ियाँ मरोड़ने लगती है कि मेरी कल-कल ढीली हो जाती है। मैं ज़रा-सा सुस्ताकर आराम से बैठा नहीं कि बस तू फ़ौरन् छाती पर आ सवार हुई !' ताली ने कहा, 'इसमें भला मेरा क्या क़सूर है ! किसका गुस्सा और किस पर उतारा जा रहा है ! तुमने मुझे अपने हलक़ में घुसते हुए तो देख लिया, लेकिन उस घुमानेवाले हाथ को न देखा, जो मेरा कान मरोड़-मरोड़कर इस तरह की हरकत करने को मुझे मजबूर कर देता है। यह तो वैसी ही बात हुई जैसी कि उस ऊँटनी के क़िस्से से मालूम होती है, जो हाथ में बागडोर लिये हुए आगे-आगे चलते जा रहे अपने मालिक के पीछे-पीछे लंबे-लंबे डग भरती हुई लाचार चली जा रही थी और वह कम्बख़्त कहीं रुकने का नाम भी न लेता था। साथ में ऊँटनी का बच्चा भी घसिटता चला आ रहा था। जब वह दौड़ते-दौड़ते बहुत थक गया तो बिलबिलाकर मा से कहने लगा कि अम्मा, ज़रा तो ठहर जाओ, मैं तो चलते-चलते हाँप गया और तुम रुकने का

सिर्फ़ दो-चार हाथ ही में बेचारे ताले की कमर टूट गई और कराहता हुआ वह कुंजी की खुशामद करते हुए कहने लगा…

नाम भी नहीं लेतीं ! ऊँटनी ने गर्दन मोड़कर जवाब दिया कि मेरे लाल, तू यह तो देख कि मैं अपने मन से चल रही हूँ, या मेरी नकेल किसी और के हाथ में है, जो बिना रुके मुझे खींचे चला जा रहा है ! उस ऊँटनी के बच्चे की-सी ही बेवकूफ़ी की बात तुम भी कर रहे हो ! तुम मुझे ही डाटते-फटकारते हो और यह नहीं सोचते कि इसमें मेरा क्या बस है !' पर ताला इस पर भी न समझा और कहने लगा—'कुछ भी क्यों न हो, मैं इस ढिठाई को नहीं सह सकता। यदि आगे कभी तू ऐसी हरकत करेगी तो देख लेना कि मैं तुझे कैसा मज़ा चखाता हूँ !'

दूसरे दिन सुबह ही ज्योंही सेठजी ने ताला खोलना चाहा और कुंजी को घुमाया, त्योंही ताला बिगड़ गया और कुंजी से बोला—'तू चाहे जितनी जूझे पर मैं तो नहीं खुलूँगा ! देखता हूँ, कैसे खोलती है तू मुझे !' कुंजी ने कहा, 'बिगड़ जा मेरी बला से ! मेरा क्या जायगा ? कुछ तेरा ही बिगड़ जायगा।' आख़िर ताला न खुला। वह अपनी जगह पर अकड़ा ही रहा। सेठजी बहुत तिलमिलाए। पचीसों बार उन्होंने उसे झकझोरकर हिलाया। सैकड़ों नई-नई कुंजियाँ लगाईं। तेल पिलाया। फूँक मार-मारकर साफ़ किया। पर ताला टस से मस भी न हुआ। पसीने-पसीने होकर जब सेठजी हार मानकर बैठ गए, तब किसी ने सुझाया कि यह ताला यों न खुलेगा, किसी लुहार को बुलाओ। लुहार ने भी आकर तरह-तरह की तरकीबें कर देखीं, लेकिन उस पर भी वह ताला एक तिल भर भी न हिला। आख़िर और कोई चारा न देखकर लुहार ने अपना हथौड़ा सँभाला। बेचारे सेठजी का दिल अपने उस प्यारे ताले की पीठ पर इस तरह हथौड़े की चोटें पड़ते देखकर काँप उठा, पर साथ ही उसकी ढिठाई पर उन्हें बेतरह गुस्सा भी आ रहा था, इसलिए उन्होंने लुहार को रोका नहीं। सिर्फ़ दो-चार हाथ ही में बेचारे ताले की कमर टूट गई और गिड़गिड़ाकर वह कुंजी की खुशामद करते हुए कहने लगा—'बीबी, मैं भर पाया। मुझे माफ़ करो। अब ऐसी ढिठाई कभी न करूँगा।' ताली नाचकर कहने लगी—'हम तो पहले ही कहते थे कि रोज़-रोज़ ज़रा-ज़रा-सी बात पर रूठना और बिगड़ उठना ठीक नहीं। अब भी समझ में आया कि क़सूर किसका था, मेरा या सेठजी का ?' ताला

इसके बाद फिर कभी न बिगड़ा—वह रोज़ पहले की तरह खुलता और बंद होता रहा। और सेठजी ने भी उस दिन से एक नई सीख पाई। अब पहले की तरह कुंजी को घुमा-घुमाकर दिन में बीस बार ताले की अँतड़ियाँ मरोड़ना उन्होंने बंद कर दिया। बस, दिन में केवल एक बार सुबह दुकान खोलते वक़्त वह कुंजी घुमाते और दूसरी बार शाम को उसे बंद करते वक़्त!

पिंजड़े की गिलहरी

राजा साहब के महल का बाग़ क्या था, एक अच्छा ख़ासा चिड़ियाघर था! तरह-तरह के जानवर वहाँ पले हुए थे—वहाँ आप अफ़्रीक़ा के हाथी से लेकर आसाम के बड़े-बड़े चिउँटे तक देख लीजिए। हर जानवर के रहने के लिए अलग-अलग बन्दोबस्त था। अगर हाथी के लिए वहाँ सलाख़ों से घिरा हुआ एक छोटा-सा नक़ली जंगल बनाया गया था, तो चिउँटों के लिए भी खास तरह के रहने के ख़ाने बने हुए थे, जिनमें वे मज़े से रेंगते। इसी तरह मछलियों, मेंढकों, बत्तख़ों, मुर्ग़ाबियों, केकड़ों, कछुओं और मगर-घड़ियालों के लिए मौजूद थी एक बड़ी-सी झील, जिसमें डुबकियाँ लगाते हुए वे शिकारी के जाल से बेखटके रहकर मौज से अपने दिन काटा करते। शाम को राजघराने के बच्चे जब झील की संगमर्मर की सीढ़ियों पर से आटे की गोलियाँ बना-बनाकर पानी में डालते तो उन्हें खाने के लिए तरह-तरह की रंग-बिरंगी मछलियाँ किनारे पर आकर उछल-उछलकर मानों आपस में होड़ बदने लगतीं और अपने लाल, पीले, हरे, भूरे, और रुपहले-सुनहले रंग की चमक-दमक, देखनेवालों की आँखों में, चकाचौंध पैदा कर देती थी।

इस अनोखे चिड़ियाघर में एक ओर घने पेड़ों की डालियों से मोर, तोते, कबूतर, बाज़, बुलबुल, कोयल, फ़ाख्ता, कुमरी, मैना, पिद्दे जैसे रंग-बिरंगे पखेरुओं के छोटे-बड़े सुनहले और रुपहले पिंजड़े लटक रहे थे, तो दूसरी ओर हिरन, नील-गाय, चीतल, बारहसिंगे वग़ैरह के लंबे-चौड़े बाड़े बने हुए थे, जिनमें वे बेखटके विचरते रहते। इसी तरह कहीं पर भेड़ियों के भिट थे तो कहीं चीते और शेर के रहने की जगह थी, जिसे देखकर सचमुच के कछार का धोखा होता था। सबसे अलग था साँप-सँपोलियों, छिपकलियों, बिच्छुओं, बिसखपरों और अजगरों का मुहल्ला, जिसमें इन रेंगनेवाले ज़हरीले जीवों के रहने के लिए दीवारों और ज़मीनों में इस तरह बिल और सूराख़ बनाए गए थे कि देखनेवाले आसानी से उन्हें

राजा साहब के महल का बाग़ क्या था, एक अच्छा ख़ासा चिड़िया-घर था। तरह-तरह के जानवर वहाँ पले हुए थे··· ···········

मतलब यह कि ऑस्ट्रेलिया के कँगारू से लेकर अमेरिका के भेड़िए और अफ़्रीका के असली शेरबबर तक सभी जानवर इस महल में मौजूद थे···

रेंगते-सरकते देख सकें, फिर भी क्या मजाल कि कोई जानवर उनमें से बाहर निकलकर किसी को तकलीफ़ पहुँचाए ! राजा साहब ने यह जगह ऐसी तरकीब से बनवाई थी कि अंदर का छोटा से छोटा कीड़ा भी किसी तरह बाहर न आ सकता था, पर बाहरवाले लोग अंदर की एक-एक चीज़ को बड़ी आसानी से देख लेते थे !

मतलब यह कि ऑस्ट्रेलिया के कँगारू से लेकर अमेरिका के भेड़िए और अफ़्रीका के असली शेरबबर तक सभी जानवर इस महल में मौजूद थे, जिन्हें देखनवालों का वहाँ हमेशा एक मेला-सा लगा रहता था। राजा साहब ने अपने इन पालतू जानवरों की देखभाल के लिए एक अलग महकमा ही बना दिया था। हर जानवर को वक़्त पर रातिब दिया जाता। सबके मकानों की सुबह-शाम सफ़ाई की जाती। पिंजड़े धोए जाते और बीमारी दूर करनेवाली दवाइयाँ छिड़की जातीं। राजा साहब का कहना था कि जब हमने इन बेचारों को क़ैद कर रक्खा है तो इनके सुख-दुःख की देखभाल करना भी हमारा काम है। जो लोग जानवरों के लिए दयाभाव नहीं रखते वे जानवरों से भी गए बीते हैं। जिन जानवरों को आप पालें-पोसें उनके साथ उसी तरह प्यार का बर्ताव कीजिए जैसा आप अपने परिवार के साथ करते हैं। आदमी तो अपने दुःख-दर्द की टेर सुना सकता है पर बेचारा गूँगा जानवर क्या करे ! बहुतेरे लोग घोड़ों से अपनी रोटी कमाते हैं, वे उन्हें दिन भर ताँगों में जोतते हैं। धूप हो या वर्षा, सर्दी हो या गर्मी, इन बेचारों का तो दौड़-भाग ही से मतलब है। इस पर ज़रा भूल हुई नहीं कि चाबुक से खाल उधेड़ दी गई ! यही हालत दूसरे जानवरों की भी बनाई जाती है। आदमी इस बुरी तरह इनसे पेश आता है कि अगर इनके ज़बान होती तो भगवान् जाने ये जवाब में क्या-क्या न कहते ! राजा साहब को शक था कि कहीं उनके नौकर महल के इन जानवरों के साथ ऐसा ही बेरहमी का बर्ताव न करने लगें। इसीलिए वह अपने इन पालतू जीवों की पूरी-पूरी देखभाल आप ही करते थे।

यों तो राजा साहब अपने महल के इन सभी मेहमानों से बड़ा प्रेम करते थे, पर उनमें भी वह एक खूबसूरत गिलहरी को बहुत ज़्यादा चाहते थे, जो बड़ी दूर से इस चिड़ियाघर में

लाई गई थी। उसके रोएँ रेशम की तरह नरम और चमकीले थे और उसकी दुम के मुलायम और फूले हुए बाल बहुत ही प्यारे लगते थे। कई हज़ार रुपए उसे लाने में राजा साहब ने ख़र्च किए थे और प्यार में वह उसे 'महारानी' कहकर पुकारते। इस गिलहरी के लिए उन्होंने ख़ास तौर से एक पिंजड़ा बनवाया था, जिसमें मख़मल का फ़र्श बिछा हुआ था और जिसकी तीलियाँ सोने की बनी थीं। ये तीलियाँ दूर से सूरज की किरनों की तरह चमकती थीं। इस पिंजड़े के बीचोबीच एक गोल पहिया लगा था। जब गिलहरी उस पहिए पर चढ़ती तो वह तेज़ी के साथ रेल के पहिए की तरह घूमने लगता था। बेचारी नन्ही-सी गिलहरी इस घूमते हुए पहिए पर चढ़कर यह सोचा करती कि वह बहुत तेज़ दौड़ लगा रही है और पता नहीं कितनी दूर तक का चक्कर काट रही है! इस तरह अपने ख़याल में वह उस पर चढ़कर मानों सारी दुनिया की सैर कर आती थी, लेकिन सच पूछिए तो वह एक तिल भर भी अपनी जगह से न सरकती थी! दरअसल उसका हाल उस सपना देखनेवाले का-सा था, जो सपने में मीलों की सैर कर आए, पर सचमुच में जहाँ का तहाँ ही पड़ा रहे!

एक दिन की बात है कि पिंजड़े की यह भोलीभाली महारानी अपने उस घूमते हुए पहिए पर बैठकर अपनी ख़याली दौड़ दौड़ रही थी कि उड़ते-उड़ते एक चिड़िया उधर आ निकली और अचरज से इस तमाशे को देखने लगी। गिलहरी पहिए के हर चक्कर के बाद सोचती मानों उसने एक लंबी मंज़िल तय कर ली हो और इस ख़याली दौड़धूप के कारण हर चक्कर के बाद उसके चेहरे पर थकान की एक रेखा झलकने लगती। चिड़िया यह देखकर हैरान थी कि यह मामला क्या है! वह बड़ी देर तक इस तमाशे को देखती रही और अंत में जब इस चक्कर का कोई मतलब उसकी समझ में न आया तो उसने पर तौले और उड़कर पिंजड़े पर जा बैठी। गिलहरी ने मुँह उठाकर ऊपर देखा तो चिड़िया ने नरमाई से पूछा—'जंगलों की मेरी पुरानी सहेली! क्या तुम मुझे बताओगी कि यह तुम क्या कर रही हो?'

गिलहरी ने यह सुनते ही ऐसा मुँह बनाया जैसे किसी ने बड़े ज़रूरी काम के बीच टोककर उसका भारी नुक़सान कर दिया हो। बड़ी उतावली होकर वह बोली—'बहन, मुझे बात करने की फ़ुर्सत कहाँ? देखती नहीं, मुझे कितना काम है? चलते-चलते थकी जा रही हूँ। राजा साहब के हुक्म की पाबंदी के लिए कितनी दौड़धूप करना पड़ती है मुझे! देखो न, हर घड़ी सफ़र करती रहती हूँ!'

चिड़िया गिलहरी की बात सुनकर मुसकराई और बोली—

चिड़िया तो यह कहकर उड़ गई, पर पिंजड़े की वह भोली-भाली महारानी इसके बाद भी ज्यों की त्यों उस पहिए पर चक्कर काटते हुए अपनी ख़याली दौड़ दौड़ती रही!

'हाँ, देख रही हूँ मैं तुम्हारी दौड़धूप ! और यह भी देख रही हूँ कि इतनी मेहनत के बाद भी तुमने कितनी मंज़िलें तय की हैं !! कैसी ग़ज़ब की यह तुम्हारी दौड़धूप है कि इतनी दौड़ लगाते हुए भी तुम इस पिंजड़े में जहाँ की तहाँ बैठी दिखाई देती हो ! ख़ूब !! दुनिया के इस अनोखे अजायबघर में, जहाँ भगवान् ने तरह-तरह के जीव इन 'राजा साहब की तरह पाल रक्खे हैं, कितने ही लोग तुम्हारे ही जैसे हैं, जो एक क़दम आगे न बढ़ने पर भी यह सोचते रहते हैं मानों उन्हें पल भर के लिए भी फ़ुर्सत न हो !'

चिड़िया तो यह कहकर उड़ गई, पर पिंजड़े की वह भोलीभाली महारानी इसके बाद भी ज्यों की त्यों उस पहिए पर चक्कर काटते हुए अपनी ख़याली दौड़ दौड़ती रही !

कोयला और हीरा

ऊपर लंबा-चौड़ा पहाड़ खड़ा था और उसके नीचे ज़मीन के भीतर काफ़ी गहराई पर अँधेरे में छिपी थीं बहुत-सी खदानें—कोयले की, सोने की, अबरक़ की, राँगे की, हीरे की और न जाने किस-किस चीज़ की। ये खदानें सदियों से इसी तरह धरती के नीचे दबी पड़ी थीं। अभी तक आदमी के पैर उन तक न पहुँच पाए थे। हाँ, उनमें अंदर ही अंदर यह अफ़वाह गरम थी कि कुछ लोग धरती के ऊपर इन खदानों के आसपास खुदाई करते देखे गए हैं। इस ख़बर को लानेवाला एक कीड़ा था, जो ज़मीन में घुसता-घुसता नीचे इन खदानों तक आ पहुँचा था। जब यह ख़बर खदान के कोयलों ने सुनी तो वे ख़ुशी के मारे उछल पड़े और आपस में कहने लगे कि 'भगवान् करे जल्दी ही आदमी के पैर इन खदानों में पड़ें ताकि हमें इस कालकोठरी से छुटकारा मिले। यहाँ न तो ताज़ी हवा है, न नीला आसमान; न बहती हुई नदियाँ हैं, न लहलहाते हुए खेत; न कोई पेड़-पौधे ही दिखाई देते हैं, न रंग-बिरंगे पशु-पक्षी ही। भला कौन है जो उम्र भर इस क़ैद में पड़ा रहना पसंद करेगा? अगर यहाँ की खुदाई शुरू हो जाय और आदमी हमें इस अँधेरे क़ैदख़ाने से बाहर निकाल ले तो हम सदा के लिए उसके एहसानमंद रहेंगे।'

कोयलों की खदान के पास ही हीरों की खदान थी। जब उन्होंने कोयलों की यह बात सुनी तो चमककर वे कहने लगे—'बेवक़ूफ़ों, तुम इस खदान से निकलकर भी भट्ठी में झोंके जाओगे! इसलिए उस बनावटी आज़ादी के सपनों से फूलो मत! यह खदान की ज़िंदगी उस भट्ठी की दहकती हुई आग से फिर भी अच्छी है। यहाँ तो ज्यों-त्यों कर फिर भी दिन आराम से कट जाते हैं, पर बाहर निकलने पर तो दो ही दिन में जलकर तुम ख़ाक बन जाओगे!'

कोयले हीरों की यह बात सुनकर गुस्से से जलकर कोयला हो गए और बोले—'तुम तो डरपोक और कायर हो, जो इस अँधेरे क़ैदख़ाने में रहना पसंद करते हो। पर हम किसी दाम पर भी इस अपमान की हालत में रहने को तैयार नहीं। बला से अगर बाहर निकलने के बाद हमारी जान ही क्यों न चली जाय, पर और कुछ न सही हमें आज़ादी तो मिल जायगी।'

हीरों ने कहा—'तुम जिसे आज़ादी कहते हो वह दरअसल आज़ादी नहीं बल्कि ग़ुलामी होगी। हम तो खदान से बाहर निकल जाने पर भी या तो किसी बादशाह के ताज में जगह पाएँगे, या किसी महारानी के कानों के बुंदों में। पर तुम अपनी सोचो कि जब मज़दूर तुम्हें खदान से बाहर निकालकर फेंकेंगे तो तुम्हारी क्या हालत होगी! हीरा तो जहाँ भी जाएगा चमकेगा, पर कोयला जहाँ जाएगा वहीं उसे जलना पड़ेगा। इसलिए अच्छा है कि संतोष करके यहीं टिके रहो।'

कोयलों के बदन में चिनगारियाँ तो पहले ही उठ रही थीं, जब हीरों की यह बात उन्होंने सुनी तो वे आगबबूला

हो उठे और बिगड़कर बोले—'बस, बस, बातें न बनाओ। आज तुम्हारा यह रंग-रूप निखर आया है तो इस तरह शेख़ी बघार रहे हो! पर क्या भूल गए हो वे दिन जब तुम भी हम कोयलों के ही ख़ानदान में पलते थे और हम में से ही एक थे?'

हीरों ने कहा—'ठीक है, हम मानते हैं कि हम कभी तुम्हारे ही भाईबन्द थे। तुम्हीं से हम पैदा हुए। लेकिन आज तो कुदरत की करामात से हम जवाहरातों के मुखिया बन गए हैं और तुम वही काले-कलूटे कोयले बने हुए हो! तुम्हारा-हमारा अब मुक़ाबला ही क्या?'

कोयलों ने जवाब दिया—'ख़ैर, ज़्यादा बढ़-बढ़कर बोलना अच्छा नहीं होता। वक़्त आने दो, आप ही दोनों की परख हो जायगी। ज़रा इन खदानों की खुदाई तो होने दो। फिर देख लेना कि लोग पीछे पड़कर तुम्हें क़ैद करते हैं कि हमें। अगर सात तालों में बंद करके न रक्खे जाओ तो हमें कोयला न कहना।'

हीरे तो इसके बाद कुछ भी न बोले, लेकिन कोयलों के मन में भीतर ही भीतर हीरों के लिए डाह की आग जलती रही। वे चाहते थे कि जिस तरह भी हो इन खदानों की खुदाई शुरू हो जाय, ताकि उन्हें आदमी के हाथों हीरों की बुरी हालत बनते देखने का मौक़ा मिले। लेकिन जब तक आदमी को यह विश्वास न हो जाता कि यहाँ हीरों की खदान गड़ी पड़ी है तब तक वह खुदाई क्यों करने लगा? आख़िर सोचते-सोचते कोयलों को एक तदबीर सूझी और उन्होंने उस कीड़े को गाँठा, जिसने कुछ लोगों को ऊपर खदान खोदते हुए देखा था। उन्होंने उससे कहा कि तुम हीरे की एक कनी मुँह में दबाकर ऊपर ज़मीन पर जाओ। जब आदमी तुम्हें मुँह में वह कनी दबाए देखेंगे तो उनकी बाँछें खिल जाएँगी और वे यह जानकर कि यहाँ हीरे की खदानें हैं, तुरन्त खुदाई शुरू कर देंगे।

कीड़ा कोयलों के दम-दिलासे में आ गया और हीरे की एक कनी मुँह में लेकर रेंगता हुआ वह ऊपर जा पहुँचा।

हीरा तो जहाँ भी जाएगा चमकेगा, पर कोयला जहाँ जाएगा वहीं उसे जलना पड़ेगा.......

लोगों ने उसे जो देखा तो उन्हें भरोसा हो गया कि ज़रूर वहाँ हीरे की खदान छिपी है। वे उस लीक को देखते हुए चले
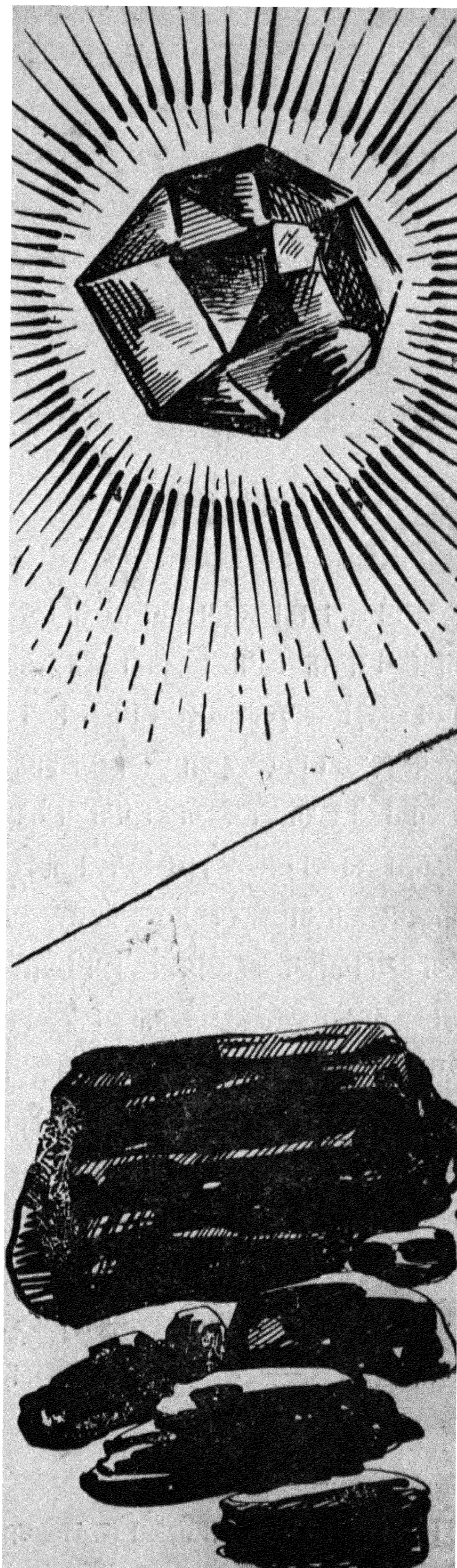
दूसरे ही दिन सैकड़ों मज़दूर कुदालें हाथ में लिये हुए वहाँ आ पहुँचे और खदान की खुदाई का काम शुरू हो गया.........

जो उस कीड़े के चलने से पहाड़ी रेती पर बन गई थी। चलते-चलते एक छोटे-से छेद के पास जाकर वह लीक ख़त्म हो गई। बस, लोगों ने समझ लिया कि वहीं से वह कीड़ा निकला था और ज़रूर उस ज़मीन के अंदर हीरे की खदान है। दूसरे ही दिन सैकड़ों मज़दूर कुदालें हाथ में लिये हुए वहाँ आ पहुँचे और खदान की खुदाई का काम शुरू हो गया। बारूद से पत्थर उड़ा दिए गए और बर्मों से चट्टानों का कलेजा बरमा दिया गया। कुछ ही दिनों में जब सभी खदानें निकल आईं तो लोगों की खुशी का कहना ही क्या था! सबसे पहले उन्होंने पत्थरों में से हीरों को निकाला और उनकी चमक-दमक देखकर किसी का नाम 'कोहनूर' रक्खा तो किसी का कुछ और। इन नगीनों को साफ़ करके उन्होंने सजा-कर तिजोरियों और अलमारियों में रक्खा। इसी तरह सोना, चाँदी, राँगा, सीसा, अबरक़ सभी को अपनी-अपनी शान के अनुसार मान दिया गया। लेकिन जब कोयलों की बारी आई तो पहले तो टोकरियों में भर-भरकर उन्हें ज़मीन पर डाला गया और फिर हथोड़ों से तोड़-तोड़कर भट्ठी में झोंकने के काम में लाया जाने लगा! जब इस तरह बुरी हालत होने लगी तो कोयलों को वे दिन याद आने लगे जब वे चैन से क़ुदरत की गोद में अपनी खदान के भीतर आराम की नींद सोते और बेखटके ज़िन्दगी बसर करते थे। साथ ही उन्हें हीरों की वह बात भी याद आई कि खदान से निकलने पर जिस आज़ादी का सपना वे देख रहे थे, वह कोरा एक सपना ही था—इस नक़ली आज़ादी से तो, जिसमें उन्हें आदमी की ग़ुलामी करते-करते सारी ज़िन्दगी बितानी थी, धरती के नीचे की वह क़ुदरती क़ैद ही अच्छी थी। उन्हें बार-बार यह सोचकर पछतावा होता कि बेकार ही डाह के मारे खदानों को खुदवाकर उन्होंने न केवल अपना ही बिगाड़ किया, बल्कि इन बेचारे हीरों की भी ज़िन्दगी में रोड़ा अटका दिया, क्योंकि बादशाहों के ताज और महारानियों के कानों के बुंदों में सजाए जाने पर भी वे बेचारे भी अब आज़ाद न थे—उन्हें भी अब सात-सात तालों की तिजोरियों में बंद रहना पड़ता था!

मगर के आँसू

गंगा नदी में रोज़-रोज़ बाढ़ नहीं आती, लेकिन जब आती है तो ऐसा ज़ोर बाँधती है कि भगवान् ही बचाएँ। एक बार इसी तरह जो बाढ़ आई तो पानी किनारों पर रेल पड़ा और मीलों तक जल-थल एक हो गया। पानी की उस तूफ़ानी धारा के साथ जहाँ बहुत-से जलजीव बह गए, वहाँ एक मगर भी बहता-बहता कहीं-से-कहीं जा पहुँचा। कुछ

दिन बाद जब बाढ़ का ज़ोर कम हुआ और पानी घटने लगा तो उस मगर ने भी सोचा कि अब यहाँ से फिर अपने पुराने अड्डे की तरफ़ चलना चाहिए। वह इस समय एक बहुत बड़े गड्ढे में पड़ा हुआ था, जिसके आसपास का बरसाती पानी मानों अपनी याद में कीचड़ और दलदल छोड़कर पीछे हट चुका था। जब मगर ने वहाँ से चलने के इरादे से गड्ढे के बाहर मुँह निकालकर देखा और उसे पानी की जगह कीचड़ दिखाई दी तो उसके पाँव तले की ज़मीन मानों खिसक गई। उसने देखा कि अब इस गड्ढे को छोड़ना ख़तरे से ख़ाली नहीं, इसलिए लाचार वह वहीं पड़ा रहा। धीरे-धीरे जब उस गड्ढे का भी पानी सूखने लगा तो मगर की जान पर आ बनी। ज़रा सोचिए तो कि बाँसों गहरे पानी में रहनेवाला कोई जानवर अगर सूखी धरती पर छोड़ दिया जाय तो उस पर क्या कुछ न बीत जायगी! बेचारे मगर ने हर तरह से कोशिश की कि सरकता-सरकता नदी तक पहुँच जाय, लेकिन एक तो धरती पर इतनी दूर घसिटना उसके बस से बाहर था, दूसरे वहाँ पड़े-पड़े वह इतना कमज़ोर हो गया था कि उससे हिला भी न जाता था। उस सूखे दलदल और कीचड़ में शिकार कहाँ? वह कीड़े-मकोड़े तो खाने से रहा और ताज़ी मछलियाँ और दूसरे जलजीव भला वहाँ कहाँ मिल सकते थे! मतलब यह कि वह दिन पर दिन दुबला होता गया और उसे वह ज़माना याद आने लगा जब वह नदी में सुख से रहता था। वह सोचता, 'कैसे दिन थे वे? आनन्द ही आनन्द था। न खाने-पीने की चिन्ता थी, न रहने की। मीलों तक नदी का पाट फैला था। ऊपर चमकता हुआ पानी था और उस पर चमचमाया करती थीं सूरज की सुनहली किरणें। पानी के नीचे ढेर-की-ढेर मछलियाँ, अनगिनत केकड़े और कछुए यहाँ से वहाँ तैरा करते थे—जितना जी चाहे खाओ और मौज उड़ाओ। अगर मुँह का स्वाद कुछ बदलने को जी चाहने लगा तो किनारे पर सरककर आ गए। कोई आदमी कमर-कमर पानी में नहा रहा है। बस दूर से ही निशाना बाँधा। नीचे-ही-नीचे पानी में सरकते रहे, तब बिजली की तरह झपटे और शिकार को हड़प कर गए। कैसा सोंधा मांस होता था! इसी तरह कभी कोई गाय और भैंस शाम को पानी पीने आई तो चुपके-चुपके पहुँचकर किसी की टाँग घसीट ली और उसे डकार गए!'

मगर को जब ये बातें याद आईं तो आज की अपनी हालत देखकर मानों उसके सीने पर साँप लोट गया। उसकी आँखों से मोटे-मोटे आँसू टपकने लगे। पर कौन था जिससे वह अपनी विपदा कहता! जंगल के सभी जानवर उससे जले-भुने हुए थे। बहुतेरी लोमड़ियाँ और गीदड़ उधर से गुज़रे। पर उन्होंने जो उसे कीचड़ में लोटता हुआ पाया तो जी भरकर हँसे और

वह इस समय एक बहुत बड़े गड्ढे में पड़ा हुआ था, जिसके आसपास का बरसाती पानी मानों अपनी याद में कीचड़ और दलदल छोड़कर पीछे हट चुका था.........

उसने उस गड्ढे में उतर-कर मगर को एक रस्सी में बाँध लिया और तब अपनी पीठ पर लाद-कर उसे खींचते हुए नदी की ओर चलने लगा'........

कहने लगे, 'कम्बख़्त मर चुके तो जंगल भर की दावत करें। इतना मांस मिलेगा कि हफ़्तों शिकार न करना पड़ेगा।' इन बातों को सुनकर मगर ग़ुस्से के मारे लाल हो जाता। पर क्या करता, बेबस था! एक तो परदेश, फिर कमज़ोरी, भूख-प्यास और वह क़ैद!

एक दिन की बात है कि एक शिकारी हिरन का पीछा करता हुआ उधर आ निकला। उसने मगर की वह हालत देखी तो उसे दुःख हुआ और वह कहने लगा—'दुनिया भी बड़ी अजीब जगह है। यह समुद्र का राजा मगर आज इस दलदल में बेबस पड़ा है और कोई इसका हाल पूछनेवाला भी नहीं!'

मगर ने शिकारी के ये हमदर्दी के शब्द सुने तो आँखों में बड़े-बड़े आँसू भरकर वह कहने लगा—'भैया शिकारी! भगवान् तुम्हारा भला करें। तुम बड़े दयालु मालूम होते हो। क्या तुम मेरी कोई मदद नहीं कर सकते?'

'मदद!' शिकारी ने कुछ सोचकर जवाब दिया, 'क्यों नहीं कर सकता! दुनिया का सारा कारबार ही एक दूसरे की मदद करने से चलता है। पर भाई सच्ची बात यह है कि मुझे तुम पर भरोसा नहीं। अगर तुम शपथ लेकर वादा करो कि मुझे कोई नुक़सान न पहुँचाओगे तो मैं तुम्हें इस मुसीबत से छुटकारा दिला दूँ।'

मगर ने बहुत-सी शपथें लीं और रो-रोकर कहने लगा—'भाई मेरे! दुनिया में सबसे ज़्यादा कमीना वह है जो किसी का एहसान न माने। यह क्योंकर हो सकता है कि आप मेरी जान बचाएँ और मैं आपको नुक़सान पहुँचाऊँ? आख़िर भल-मनसाहत भी तो कोई चीज़ है!'

मगर के उन बड़े-बड़े आँसुओं ने शिकारी का दिल पिघला दिया। उसने उस गड्ढे में उतरकर मगर को एक रस्सी में बाँध लिया और तब अपनी पीठ पर लादकर उसे खींचते हुए नदी की ओर चलने लगा। जब मगर ने आदमी के बदन की ख़ुशबू सूँघी तो उसके मुँह में पानी भर आया। वह बहुत दिन का भूखा था और अपनी पसंद की चीज़ को इतने नज़दीक पाकर उसका अजीब हाल हुआ जा रहा था। पर वह अपने मन को रोके चुपचाप लदा रहा।

थोड़ी देर में जब दूर से नदी का पानी चमकता हुआ दिखाई देने लगा तो शिकारी ने कहा—'लो अब उतरो। मैं थक गया हूँ।' इस पर मगर गिड़गिड़ाकर कहने लगा- —'भाई ! मुझमें एक गज़भर भी सरकने की ताक़त नहीं रही है। अगर तुम मुझे यहाँ छोड़ जाओगे तो मैं सिसक-सिसककर मर जाऊँगा।' शिकारी ने कहा—'अच्छा, घबराओ नहीं, मैं तुमको नदी के किनारे तक पहुँचाए देता हूँ।'

जब नदी का किनारा आ गया तो शिकारी ने फिर मगर को अपनी पीठ से उतारना चाहा। पर मगर बोला—'जहाँ इतनी तकलीफ़ की है, वहाँ इतनी दूर और सही कि पानी में ले जाकर मुझको उतार दो। मैं तुम्हारा एहसान उम्रभर न भूलूँगा।' इस पर शिकारी थोड़ा और आगे बढ़ा और नदी में उतर गया। जब उसके घुटने पानी में डूब गए तो उसने फिर मगर से उतरने के लिए कहा। परन्तु मगर गिड़गिड़ाकर फिर बोला—'दो क़दम और, मेरे भाई !'

अंत में जब पानी शिकारी की कमर तक आ गया तो उसने रस्सी ढीली कर दी और मगर को अपनी पीठ से उतारकर बोला—'लो भाई, अब तुम्हारा घर आ गया, अब मुझे छुट्टी दो।'

लेकिन शिकारी के मुँह से अभी ये शब्द पूरी तरह निकल भी न पाए थे कि पानी में उतरते ही मगर ने उसकी टाँग पर मुँह मारा और उसे अपने जबड़ों में दाब लिया।

शिकारी ने अकबकाकर कहा—'यह क्या ?' तो मगर ने जवाब दिया—'दया करो भाई ! मैं न जाने कितने दिनों से भूखा हूँ। क्या तुम मुझे भूखों मरता छोड़कर चले जाओगे ? जब एहसान किया है तो पूरा-पूरा एहसान करो, जिससे मेरी जान बच जाए।'

शिकारी ने गुस्से से लाल होते हुए कहा—'कम्बख़्त, कमीने ! क्या यही है मेरे एहसान का बदला ? बड़े-बूढ़ों ने सच ही कहा है कि बुरों के साथ भलाई करना भी उतना ही बुरा है जैसे भलों के साथ बुराई करना।'

मगर बोला—'बुरा मत मानो मेरे दोस्त ! क्या तुम अपने गुजर-बसर के लिए सैकड़ों जानवरों का शिकार नहीं करते ? तुमने मछलियों से नदियाँ ख़ाली कर दीं। तुम्हारे कारण जंगल में जानवरों का अकाल पड़ गया। पक्षियों से आसमान ख़ाली हो गया। फिर भी मुझसे पूछते हो कि मैं क्या कर रहा हूँ ? शर्म नहीं आती तुम्हें ?'

शिकारी ने कहा—'लेकिन मैंने तुम्हें मौत के पंजे से छुड़ाया है। अगर मैं तुम्हें न बचाता तो आज जंगल के जानवर तुम्हारी बोटी-बोटी नोच डालते। क्या यही न्याय है ?'

मगर ने कहा—'इस दुनिया का क़ानून ही यही है। लेकिन ख़ैर, तुम्हारे एहसान के बदले मैं तुम्हारे साथ इतनी रियायत कर सकता हूँ कि जब तक कोई तीसरा आकर हमारे मामले का फ़ैसला न कर देगा, मैं तुम्हें नहीं खाऊँगा।'

इस तरह शिकारी और मगर में तू-तू, मैं-मैं हो रही थी कि नदी के किनारे एक बूढ़ा घोड़ा पानी पीने आया। शिकारी ने पुकारकर उस घोड़े से कहा—'आप उस वक़्त तक पानी में मुँह न डालें, जब तक हमारी बात न सुन लें।'

घोड़े ने अपनी थूथनी पानी से निकालकर जिधर से आवाज़ आई थी उधर देखा और कहा—'क्या बात है ?'

शिकारी ने शुरू से सारा हाल सुनाया और कहा—'अब बताइए कि क्या यह ठीक है कि यह मगर मुझे निगल जाए ?'

घोड़े ने कहा,—'बेशक, इसमें कुछ भी बेजा नहीं है !'

शिकारी ने जो घोड़े का यह फ़ैसला सुना तो वह हैरान् रह गया और चीख़कर कहने लगा—'क्यों जी ! तुम तो आदमी के पुराने साथी हो। तुम्हें ऐसा अन्याय करते हुए शर्म नहीं आती ?'

घोड़े ने कहा—'शर्म मुझे आनी चाहिए या आदमी को ? अब बात छिड़ गई है तो सुनो आदमी की करतूतें। अभी जब-कि मैं बछेड़ा ही था, तुम्हारे एक भाई ने मुझे अस्तबल में बाँध दिया और मेरी आज़ादी छीन ली। मेरे मुँह में कँटीली

लगाम डाल दी। मज़बूत रस्सियों से मेरे पाँव बाँध दिए और चाबुक मार-मारकर मुझे बड़ी-बड़ी बेढंगी चालें सिखाईं—दुल्की, पोया, क़दम और सरपट। जब मैं सब करतब सीख गया तो मेरी पीठ पर ज़ीन कसी गई और मैं घुड़दौड़ में भेज दिया गया। हर दिन मीलों भागता था। पसीने-पसीने हो जाता था और अगर ज़रा-सी भी सुस्ती करता तो चाबुक के मारे खाल उधेड़ दी जाती। हरी-हरी घास के बदले सूखी पुरानी घास मुझे चबाना पड़ती थी। उसके बाद मैं पोलो के खेल में शामिल कर दिया गया। पोलो में जो-जो मुसीबतें मुझे झेलना पड़ीं, उनको न कहना ही अच्छा है। जब जवानी बीत गई और बुढ़ापा आया और कमज़ोरी के मारे मैं घुड़दौड़ में दौड़ने लायक़ न रहा तब मुझसे ताँगा खिंचवाया गया। कच्चे-कच्चे रास्तों में ढेर-का-ढेर सामान और सवारियाँ लादकर मुझे तेज़ी से भगाया जाता। रात में सिर्फ़ कुछ घंटे आराम के मिलते और दिन भर फिर वही मेहनत-मज़दूरी। जब मैं ताँगा खींचने के भी लायक़ न रहा तब एक दिन मारकर मुझे घर से निकाल दिया गया। ज़रा मेरी पीठ को देखो, कैसी घावों से भरी पड़ी है! यह सब ताँगे में जोते जाने का नतीजा है। एक बार ताँगा उलट जाने पर टाँग से हाथ धोना पड़ा था, जिससे लँगड़ाकर चलता हूँ। अब न मेरा कोई दोस्त है, न मददगार। यह है तुम आदमियों की भलमनसाहत! इसलिए मैंने इस मगर को जो यह सलाह दी कि वह तुम्हें निगल जाए तो इसमें अन्याय क्या है?'

शिकारी ने घोड़े की यह बात सुनकर मगर से कहा—'मुझे इसका फ़ैसला मंजूर नहीं। यह आदमी से बहुत जला-भुना है, इसलिए जो भी दोष लगाए सो कम है। किसी और से फ़ैसला कराओ।'

मगर ने कहा—'जैसी तुम्हारी मर्ज़ी!' इसी समय मौक़े से एक गाय नदी के किनारे घास चरते हुए उधर आ निकली। उसने जो शिकारी की यह बात सुनी तो वहीं से पुकारकर कहने लगी—'भाई मगर! अगर तुम इस आदमी को निगल जाओगे तो हम पर बड़ा एहसान करोगे। इस जैसा निगोड़ा दुनिया में दूसरा नहीं। मेरा दूध पिए, मेरे बछड़ों को हल में जोतकर नाज पैदा करे, उम्र भर मुझसे और मेरे बाल-बच्चों से काम ले, लेकिन जब मैं दूध देने के लायक़ न रहूँ तो मुझे घर से निकाल दिया जाय। वाह रे आदमी!'

मगर ने शिकारी से कहा—'बोलो, अब क्या कहते हो? अब तो दो ने तुम्हारे ख़िलाफ़ फ़ैसला दे दिया।'

शिकारी ने कहा—'किसी एक से और पूछ लो। आख़िर खाओगे तो ज़रूर ही तुम मुझे। लेकिन तनिक और ठहर जाओ।'

मगर ने कहा—'अच्छा, यह बात भी पूरी कर लो।'

इतने में एक ख़रगोश सामने की एक झाड़ी में बैठा हुआ दिखाई दिया। शिकारी ने गिड़गिड़ाते हुए उसे पुकारा। वह उचकता हुआ पास आया। शिकारी ने सारा मामला उसे सुनाया। ख़रगोश ने सुनकर कान हिलाए और उस भारी-भरकम मगर की ओर ग़ौर से देखा। फिर आदमी के दुबले-पतले मामूली बदन पर एक नज़र डालकर उसने कहा—'सुनो साहब,

ख़रगोश बोला—'वाह, यह भी ख़ूब रही! कहाँ मगर और कहाँ ज़रा-सी रस्सी! आप दोनों शायद मुझे बेवकूफ़ बना रहे हैं!..........'

वह बात कहो जो समझ में आए। भला यह किस तरह हो सकता है कि एक कमज़ोर आदमी इतने बड़े मगर को पीठ पर लादकर इतनी दूर तक ले आए!'

मगर ने कहा—'नहीं, यह बात सच है। इसी ने मुझे रस्सी में बाँधकर अपनी पीठ पर लाद लिया था।'

ख़रगोश बोला—'वाह, यह भी ख़ूब रही! कहाँ मगर और कहाँ ज़रा-सी रस्सी! आप दोनों शायद मुझे बेवक़ूफ़ बना रहे हैं!'

मगर ने कहा—'तुम भी अजीब जानवर हो! किसी बात पर भरोसा ही नहीं करते!'

ख़रगोश ने कहा—'कानों से सुनी बात पर भरोसा करना बेवक़ूफ़ी का काम है। अपनी आँखों से देखूँ तो जानूँ।'

मगर ने शिकारी से कहा—'भाई, इस बेवक़ूफ़ को आँखों से भी दिखाओ।'

शिकारी ने फ़ौरन् रस्सी उठाकर मगर को अच्छी तरह कसकर बाँध दिया और गठरी की तरह जकड़कर अपनी पीठ पर लादकर ख़रगोश से कहा—'देखो भाई, इस तरह मैं इस बदमाश मगर को पीठ पर लादकर सूखी धरती पर से नदी में लाया था।'

ख़रगोश ने कहा—'चलकर दिखाओ तो जानूँ।'

शिकारी बेचारा अपनी पीठ पर लादकर मगर को वापस नदी से बाहर लाया और सूखी धरती की ओर चलने लगा। ख़रगोश ने कहा—'मियाँ, बेवक़ूफ़ हो गए हो क्या? जान बची लाखों पाए। इस कमीने बदमाश को यों ही कमर पर लादे हुए शहर चले जाओ। इसकी खाल बहुत क़ीमती होती है। खाल उतारकर बेच खाओ। इसने पानी के तमाम जानवरों की जान आफ़त में डाल रक्खी है। यह परले सिरे का कपटी है। इसकी तो यही सज़ा है।'

दो चोंचोंवाली चिड़िया

समुद्र-पार किसी एक टापू में किसी समय एक ऐसी अनोखी जाति की एक चिड़िया पाई जाती थी, जिसके एक के बजाय दो चोंचें होती थीं, जिस तरह कि दोमुँहे साँप के दो मुँह होते हैं। ये चिड़ियाँ देखने में बड़ी ख़ूबसूरत और उड़ने में बहुत तेज़ थीं। जब शाम के वक़्त समुद्र की लहरों के ऊपर से उड़ती हुई ये वापस अपने घर लौटतीं, उस समय किनारे से बड़ा ही सुंदर दृश्य दिखाई देता था। अक्सर चलते हुए जहाज़ों से लोग झाँक-झाँककर उन्हें देखने लगते। कई लोग उन्हें 'समुद्री तोते' कहकर पुकारते थे।

ये चिड़ियाँ समुद्र के किनारे के घास-पात और फलों से अपना पेट भरती थीं। एक दिन ऐसी ही दो चोंचवाली एक चिड़िया समुद्र के किनारे-किनारे उड़ रही थी और आसपास की हरियाली में अपने चाव के फल खोज रही थी कि दूर से उसे एक नया फल दिखाई दिया जो आज तक उसने न खाया था। यह फल लाल रंग का था और बहुत ही लुभावना मालूम देता था। चिड़िया उस फल को देखते ही चहचहाती हुई नीचे उतर आई और उसने उस फल पर एक चोंच मारी। वह उसे बहुत ही मीठा मालूम हुआ और उसने फ़ौरन् उसे एक चोंच से कुतर-कुतरकर खाना शुरू कर किया।

जब दूसरी चोंच ने पहली चोंच को वह नया फल खाते देखा तो ललचाकर उसने उससे पूछा—'कहो बहन, कैसा है?' उस चोंच ने जवाब दिया—'अंगूर से भी ज़्यादा मीठा, अनार से भी ज़्यादा रसीला और सेब से भी ज़्यादा मज़ेदार! क्या कहना है इस फल का! मेरा तो ख़याल है कि समुद्री परियाँ इसी से अपना गुज़र-बसर करती होंगी। ऐसा फल मैंने न तो आज तक कभी चखा था, न ऐसी ख़ुशबू ही कभी सूँघी थी।' दूसरी चोंच ने बड़ी नरमाई के साथ कहा—

जब दूसरी चोंच ने पहली चोंच को वह नया फल खाते देखा तो ललचाकर उसने उससे पूछा—'कहो बहन, कैसा है ?…… ‥'

'तो फिर ज़रा हमें भी चखने दो न !' पहली चोंच ने कहा—'भला जैसा मैंने खाया वैसा ही तुमने खाया ! हम दोनों का पेट तो एक ही है। चाहे तुम खाओ या मैं खाऊँ, जायगा तो एक ही जगह !' दूसरी चोंच ने बिगड़कर कहा—'फिर भी चखाने में क्या हर्ज है तुम्हारा ? क्या तुम मेरा इतना भी हक़ नहीं समझतीं ?' पहली चोंच एक चटख़ारा लेकर बोली—'लो, तुम तो एक ज़रा-सी बात पर बिगड़ गईं ! एक ज़रा-से फल ही की तो बात है—अगर मैं ही उसे खा लूँगी तो कौन तुम्हारा बड़ा धन लुट जायगा !' दूसरी चोंच इस पर और भी ज़्यादा तमतमा उठी और कहने लगी—'अच्छा, मत दो। मेरा वक़्त आयगा तब मैं भी समझ लूँगी तुम्हें !' इस तरह बात ही बात में दोनों चोंचों में गहरी खटपट हो गई और उन्होंने एक दूसरे से बात करना और बोलना छोड़ दिया।

जब से इन दोनों चोंचों में अनबन हो गई तब से वे ऐसी ज़िद पर चढ़ गईं कि एक-दूसरे को तंग करने के लिए वे एकदम एक दूसरे से उल्टा काम करने लगीं। अगर एक चोंच मीठा खाती तो दूसरी नमकीन; किसी को एक तरह का खाना पसंद आता तो किसी को दूसरी तरह का। अगर एक नरम फल खा रही है तो दूसरी एकदम कड़ा फल कुतर रही है। उनकी इस आपसी लड़ाई से बेचारा पेट तंग आ गया। ये चोंचें जो एक साथ तरह-तरह की चीज़ें खातीं उन्हें पचाने में बेचारे पेट की आफ़त हो जाती। एक साथ कच्ची-पक्की, नरम-सख़्त, खट्टी-मीठी, गरम-ठंढी चीज़ें खाते-पचाते आख़िर पेट के कल-पुर्ज़े बिगड़ चले। उधर दोनों चोंचों की लड़ाई दिन पर दिन बढ़ती ही चली जा रही थी और उसकी सारी सज़ा भुगतनी पड़ती थी बेचारे पेट को। चोंचें तो सब-कुछ खाकर बराबर कर देतीं और तब पचाने के लिए चक्की पीसना पड़ती ग़रीब पेट को ही। आख़िरकार एक दिन तंग आकर पेट ने दिल से चोंचों की इस हरकत की शिकायत की। दिल ने कहा कि 'मैं ख़ुद बहुत दिनों से इन दोनों की यह लड़ाई देख रहा हूँ और हर घड़ी मुझे धड़कन बनी रहती है कि कहीं इनकी यह खटपट हम सबको न ले डूबे ! ऐसे गड़बड़ के बर्त्ताव से तो कभी अपनी धड़कन ही रुक जाने का मुझे अँदेशा है। मेरी समझ में नहीं आता कि किस तरह इस मामले को तय किया जाय। चलूँ, ज़रा दिमाग़ से पूछ देखूँ। देखें, वह क्या राय देता है ? वह सोच-समझकर ज़रूर कुछ-न-कुछ रास्ता बता देगा।'

लेकिन जब दिल और पेट दोनों ने दिमाग़ को खटखटाया तो मालूम हुआ कि वह बेचारा ख़ुद पहले ही से इसी सोच-

विचार में उलझा हुआ था। वह बोला—'तुम जो बात आज कहने आए हो, मैं वही बात इन चोंचों की लड़ाई के पहले दिन ही से सोच रहा हूँ। लेकिन क्या करूँ, लाचार हूँ। जब दिल ही, जो मेरा मंत्री है, कई बार मेरा कहना टाल देता है और जोश में आकर जो चाहे कर बैठता है तो फिर ये चोंचें भला काहे को मेरा कहना मानने लगीं! ख़ैर, देखिए एक बार फिर उन्हें समझाने की कोशिश करता हूँ।'

इसके बाद अपनी तारबर्क़ी खटखटाकर उसने उन चोंचों से कहना शुरू किया—'बेवक़ूफ़ो, अब भी आपस में मिल जाओ और यह आपस का लड़ाई-झगड़ा छोड़ दो, वरना तुम हम सभी की हालत ख़राब कर दोगी। सबको रोग लग जायगा और उस रोग का असर क्या तुम पर न पड़ेगा?'

पर बीच ही में उसकी बात काटकर वे चोंचें ची-चीं करती हुई बोल उठीं—'तुम हमारी आपसी लड़ाई में दख़ल देनेवाले कौन होते हो जी? हमारा जो जी चाहेगा सो करेंगी और अगर उससे बदन के दूसरे हिस्सों को नुक़सान पहुँचे तो हमारी बला से। इसकी फ़िक्र तुम्हें करना हो तो तुम करो, हमें परवाह नहीं।'

मतलब यह कि दिमाग़ ने हर तरीक़े से समझाया, लेकिन चोंचों ने एक न मानी। आख़िर दिल, दिमाग़ और पेट तीनों हार मानकर बैठ गए। इधर चोंचों की अनबन दिन पर दिन बढ़ती ही चली गई। एक दिन की बात है कि वह चिड़िया उड़ते-उड़ते एक ऐसे टापू में जा पहुँची, जहाँ एक बहुत ही ज़हरीली घास पैदा होती थी, जिसे खाते ही जानवर मर जाते थे। उस घास को देखकर डाह के मारे एक चोंच ने सोचा कि अगर मैं इसे खा लूँगी तो वह पेट में पहुँचकर उसे ज़हरीला बना देगी और इस तरह दूसरी चोंच ज़रूर ही मर जायगी। पर ठीक यही बात दूसरी चोंच ने भी सोची, जिसका नतीजा यह हुआ कि दोनों एक-दूसरे की जलन के मारे उसे खा लेने पर उतारू हो गईं। किन्तु जब इस इरादे से वे उस ज़हरीली घास की ओर झुकीं तो नाक ने उस घास की बदबू को सूँघकर तुरन्त दिमाग़ को यह ख़बर दी कि ये दोनों बेवक़ूफ़ चोंचें ज़हरीली घास खाकर हम सबकी ज़िन्दगी ख़तरे में डालने जा रही हैं। दिमाग़ ने फ़ौरन ही पेट को हुक्म

इस तरह बात ही बात में दोनों चोंचों में गहरी खटपट हो गई और उन्होंने एक दूसरे से बात करना और बोलना छोड़ दिया.......

दिया कि तुम इस ज़हरीली चीज़ को पचाने से इन्कार कर दो और अगर इस घास का एक तिनका भी अंदर पहुँचे तो उसे उबकाई-लेकर तुरन्त बाहर निकाल दो। पर पेट ने कहा कि मैं लाचार हूँ, दर असल इस ज़हर की हवा लगते ही उबकाई लेने की मुझ में ताक़त ही नहीं रह जायगी। इस पर दिल, दिमाग़ आदि सभी अंग घबड़ा उठे और सोचने लगे कि आख़िर किस तरह उन बेवक़ूफ़ चोंचों को उस ख़तरनाक काम से रोका जाय। उन्होंने चाहा कि तोड़-मरोड़कर उन्हें फेंक दें, परन्तु ऐसा करने की उनमें से किसी में भी ताक़त न थी। आख़िरकार दिमाग़ ने फिर उन नादान चोंचों को समझाना शुरू किया कि 'अरी ज़िद्दी लड़ाकू चोंचों, तुम क्यों ऐसी बेवक़ूफ़ी करके हम सबको तबाह कर रही हो!' परन्तु उन चोंचों ने सब-कुछ सुनी-अनसुनी कर दी और आख़िरकार वे उस ज़हरीली घास को खा ही गईं! नतीजा यह हुआ कि उस चिड़िया की सारी देह में ज़हर फैल गया। पेट में से ज़हरीले भाग उठने लगे, दिमाग़ चक्कर खाने लगा, आँखों की रोशनी उड़ गई, दिल बैठने लगा, पेट फूलकर कुप्पा हो गया और नस-नस नीली पड़ गई। तब एकाएक दिल की धड़कन भी रुक गई और उन नादान चोंचों की आपसी डाह और ज़िद के मारे बेचारी वह चिड़िया अपनी जान से हाथ धो बैठी!

अब किसी को न चिढ़ाना

एक तेंदुआ जंगल में बड़े मज़े में टहल रहा था। शिकार खा लेने के बाद उसकी आँखों में ख़ुशी का रंग झलक रहा था और ऐसा मालूम होता था जैसे वह नशे में हो। टहलते-टहलते वह अपनी ख़ुशी ज़ाहिर करने के लिए एकाध दहाड़ भी लगा देता था। उसे इस तरह करते हुए एक बन्दर ने देखा, और वह उसकी तमाम हरकतों की नक़ल उतारने लगा। बन्दर नक़ल उतारने में उस्ताद होता है और उसे नक़ल उतारने का शौक़ भी बहुत होता है। पहले उसने अपना मुँह भारी बना लिया। उसके बाद धीरे-धीरे तेंदुए की चाल चलना शुरू किया। कभी वह दो क़दम आगे जाता तो कभी पीछे को हट जाता। वह ऐसे गिन-गिनकर पैर रखता कि यह मालूम होता था जैसे तेंदुआ ही चल रहा हो। कभी रुककर तेंदुए की तरह दहाड़ने भी लगता।

तेंदुए ने बन्दर को जो अपनी नक़ल उतारते हुए देखा तो ग़ुस्से के मारे उसकी आँखों से चिनगारियाँ निकलने

बन्दर पेड़ की चोटी पर चढ़कर तेंदुए को और दिक़ करने लगा। कभी वह मुँह बनाकर चिढ़ाता, कभी कटकट दाँत निकालता।......... ....

लगीं और गुराकर वह कहने लगा—'अब ओ बहुरूपिए ! मेरा मज़ाक़ उड़ाता है ! ख़बरदार, वरना बोटी-बोटी कर दूँगा और खाल खींच लूँगा ।' बन्दर ने मुँह चिढ़ाकर कहा कि 'खाल खींचनेवाले मर गए !' तेंदुए ने कहा—'अच्छा ! एक तो चोरी और उस पर सीनाज़ोरी ! ठहर तो । मैं देखूँ तो तू कैसा बहादुर है !' यह कहकर तेंदुआ बन्दर पर झपटा । बन्दर ने जो छलाँग मारी तो पेड़ की चोटी पर ! तेंदुआ दाँत पीसकर रह गया ।

बन्दर पेड़ की चोटी पर चढ़कर तेंदुए को और दिक़ करने लगा । कभी वह मुँह बनाकर चिढ़ाता, कभी कटकट दाँत निकालता । कभी अपनी दुम उठाकर सलाम करता । कभी कूदता । तेंदुआ बन्दर की यह हरकतें देखकर और जल-भुन गया और चीख़कर कहने लगा—'अच्छा दोस्त ! कभी तो हाथ आओगे । कचूमर निकालकर न रख दूँ तो तेंदुआ न कहना ।' पर बन्दर की उछलकूद ज्यों-की-त्यों जारी थी । इसी समय जिस डाली पर बन्दर महाशय झूल रहे थे वह अचानक पेड़ से टूटी और वह क़लाबाज़ियाँ खाते हुए धम से आ टपके ज़मीन पर ! अब तेंदुए की बारी थी । वह झपटा और बात की बात में उसने बन्दर को झिंझोड़ डाला और कहा कि 'देख , अब तेरी क्या हालत बनाता हूँ । पहले तो मैं तुझे अपने भिट में बन्द करता हूँ और उसके बाद अपने रिश्तेदारों को बुलाकर तेरे गोश्त की एक-एक बोटी नोच-नोचकर सबको खिलाऊँगा ।'

अब तेंदुए की बारी थी । वह झपटा और बात की बात में उसने बन्दर को झिंझोड़ डाला और कहा कि 'देख, अब तेरी क्या हालत बनाता हूँ ....'

बन्दर का यह हाल था कि काटो तो ख़ून नहीं ! वह चुप, हैरान और बेहद शर्मिन्दा था । उसने तेंदुए से हाथ जोड़-कर माफ़ी माँगी, लेकिन तेंदुआ कहाँ माननेवाला था ! वह तो जला-भुना हुआ था । उसने बन्दर को पकड़कर अपने भिट में धकेल दिया और उसका मुँह एक भारी चट्टान से बन्द कर दिया । इस तरह बन्दर को क़ैद करके वह अपने दोस्तों और सगे-संबंधियों को न्यौता देने चला गया । बन्दर ने भिट के अन्दर फूट-फूटकर रोना शुरू किया और मदद के लिए वह चिल्ला-चिल्लाकर पुकारने लगा । लेकिन उसकी आवाज़ पर दया दिखानेवाला वहाँ कौन था ! देर तक वह इसी तरह रोता-पीटता रहा । उसकी आँखों में मौत फिर

रही थी। वह सोच रहा था कि 'अब तेंदुआ लौटता ही होगा और अपने तमाम साथियों क साथ मुझे नोच-नोचकर खा जाएगा। मैंने क्या ग़लती की कि उसे बिना कारण ही छेड़ा! यदि मैं उसकी मज़ाक़ न उड़ाता तो यह बुरा दिन न देखना पड़ता। लेकिन अब अपने किए का क्या इलाज? मैंने ख़ुद अपने पाँव पर कुल्हाड़ी मारी है। अब मेरा जो कुछ भी हाल हो वही ठीक है। हाँ, आज से मैं शपथ लेता हूँ कि 'हे परमात्मा, अगर मैं किसी तरह इस संकट से बच जाऊँगा तो फिर किसी का भी मज़ाक़ न उड़ाऊँगा!'

इस तरह बन्दर रो-पीट रहा था कि मौक़े से एक भेड़िया उधर से आ निकला। उस भेड़िए और बन्दर में बहुत पुरानी लाग-डाँट थी। वे दोनों एक दूसरे से नफ़रत करते थे। कई बार आपस में लड़ाई भी हो चुकी थी। भेड़िए ने जो उस भिट के अन्दर रोने-पीटने की आवाज़ सुनी तो बहुत ख़ुश हुआ और चिल्लाकर कहने लगा—'क्यों दोस्त, क्या हाल है? क्यों माँद के भीतर चीख़ रहे हो? क्या अपने नसीब को रो रहे हो?' बन्दर ने जो भेड़िए की आवाज़ सुनी तो वह फ़ौरन् समझ गया कि यह मेरा पुराना दुश्मन है, और मुझे इस हालत में देखकर ख़ुशियाँ मना रहा है।

लेकिन बन्दर होता है बहुत चालाक। उसने सोचा कि अगर इस समय इस भेड़िए को झाँसा दिया तो शायद इस क़ैद से छुटकारे की कोई सूरत पैदा हो सके। यह सोचकर उसने भेड़िए को जवाब दिया कि 'आपकी मेहरबानी के लिए धन्यवाद! पर मैं रो नहीं रहा हूँ बल्कि ज़रा गा-बजाकर अपना गला साफ़ कर रहा हूँ और खाना पचा रहा हूँ।' भेड़िए ने पूछा—'क्यों, क्या बात है?' बन्दर ने कहा—'एक भालू मेरा दोस्त है और आज उसने मुझे न्यौता दिया है। मैं और वह सुबह से इसी माँद में हैं। यहाँ हमने ढेरों गोश्त जमा कर लिया है। सुबह बड़ी उम्दा दावत रही। अब इस वक़्त वह अपने कुछ और दोस्तों को बुलाने गया है। वे आ जाएँ तो फिर दावत शुरू हो।'

भेड़िए ने पूछा कि 'इस माँद के ऊपर चट्टान क्यों रक्खी है?' बन्दर ने जवाब दिया कि 'मांस की ख़ुशबू बाहर न पहुँचे इसलिए, वरना कोई-न-कोई बनबिलाव जैसा मेहमान बिना बुलाए ही घुस आएगा।' भेड़िए ने कहा—'वाह दोस्त! क्या मुझे इस दावत में शरीक न करोगे?' बन्दर ने कहा कि 'अरे भाई, तुमसे तो पुराना संबंध है। मैं तुमको कैसे मना कर सकता हूँ। अच्छा, यह करो कि धीरे से इस भिट के पत्थर को सरकाकर अन्दर घुस आओ। लेकिन देखो, कोई तुम्हें अन्दर आते देखने न पाए।'

उसने यह किया कि भेड़िए की टाँगों में से निकलकर एक छलाँग में भिट के बाहर आ गया··· ··· ·· ·········

भेड़िया होता है बड़ा लालची और पेट का कुत्ता। उसने जो इतने मांस और दावत का नाम सुना तो उसके मुँह से पानी छूटने लगा और वह यह भूल गया कि बन्दर मेरा जानी दुश्मन है और कई बार उससे लड़ाई भी हो चुकी है। उसने आगे बढ़कर धीरे से भिट के मुँह पर की वह चट्टान सरका दी और भीतर घुस आया। उधर बन्दर पहले ही से तैयार बैठा था। उसने यह किया कि भेड़िए की टाँगों में से निकलकर एक छलाँग में भिट के बाहर आ गया और फ़ौरन् ही उसने वह पत्थर फिर वहीं जमा दिया। अब बन्दर के बजाय भेड़िया उस बला में फँस गया!

भेड़िए ने हैरान् होकर पूछा—'यार, यह क्या कर रहे हो?' बन्दर ने कहा—'सुनो, एक बदमाश तेंदुए ने बिगड़कर

मुझे इस गुफ़ा में बन्द कर दिया था। वह गया है अपने दोस्तों और रिश्तेदारों को बुलाने ताकि सब मिलकर मेरी बोटी-बोटी नोच लें और खा जाएँ। मेरे भाग्य ने तुम्हें यहाँ भेज दिया और तुम निकले ऐसे बुद्धू कि ज़रा से झाँसे में आकर इस क़ैदख़ाने में घुस आए! अब तुम तैयार हो जाओ। तेंदुआ अगर तुम्हारी हड्डी-पसली तोड़कर न रख दे तो मेरा नाम बदल देना!' यह कहकर बन्दर वहाँ से नौ-दो ग्यारह हुआ और कुछ दूरी पर एक पेड़ पर चढ़कर तेंदुए के आने की बाट जोहने लगा। वह यह सोचकर मन-ही-मन हँस रहा था कि अब तेंदुआ अपने दोस्तों और रिश्तेदारों को लेकर आता ही होगा और उसे यह ख़याल होगा कि उस भिट में बन्दर बन्द होगा। लेकिन जब खोलकर देखेगा तो मेरे बजाय यह भेड़िया निकलेगा। तब दोनों में ख़ूब लड़ाई होगी, और मैं मज़ा लूटूँगा। वह यह बात सोच ही रहा था कि सामने से तेंदुआ अपनी मंडली के साथ आता हुआ दिखाई दिया। उसने पास आकर भिट का पत्थर उठाया और अन्दर ज्योंही वह घुसने लगा कि उसे भेड़िए का चेहरा नज़र आया। तेंदुए के ग़ुस्से की कोई हद न रही। उसने यह सोचा कि इस भेड़िए ने मेरे भिट में घुसकर बन्दर को खा लिया है और अब इसीलिए छिपकर बैठा है कि मुझ पर भी एकाएक टूटकर हाथ साफ़ करे।

तेंदुआ यह सोचकर एकबारगी ही भेड़िए पर टूट पड़ा। भेड़िया भी मुक़ाबले के लिए तुल गया। दोनों में झपट होने लगी। दो पंजे भेड़िए ने खाए तो एक-दो तेंदुए ने भी। तेंदुए को मार खाते देखकर उसके साथी भी भेड़िए से लिपट गए और मिनटों में सबने मिलकर उसका सफ़ाया कर दिया। भेड़िया तो मर चुका था, मगर तेंदुआ भी मार खा-खाकर अधमरा हो गया था। वह ज़मीन पर पड़ा हुआ कमर के दर्द के मारे करवटें बदल रहा था कि इतने में बन्दर ने पास के पेड़ की चोटी से पुकारकर कहा—'क्यों दोस्त! कैसा मिज़ाज है? अब तो किसी बन्दर पर हाथ साफ़ करने का इरादा नहीं करोगे?' तेंदुए ने बन्दर की आवाज़ सुनकर सिर उठाया और कहा—'ठीक है, पर तुम भी बताओ कि अब तो फिर कभी किसी का मज़ाक़ नहीं उड़ाओगे?'

आख़िरी दाँव

सुजनसिंह का नाम शायद आज भी लाखों-हज़ारों आदमियों को याद होगा। वह हमारे देश के बड़े ज़बर्दस्त पहलवान थे। सैकड़ों दंगलों में बाज़ी मार चुके थे। देश का कोई पहलवान ऐसा नहीं था जिसे कुश्ती में सुजनसिंह ने न पछाड़ा हो। यह अजीब बात थी कि ऐसा भारी पहलवान होने पर भी उनका सीना कुछ भी न था। दूर से देखो तो यह मालूम होता जैसे कोई बौना बैठा हो! लोग उन्हें देख-देखकर अचरज से कहा करते थे कि बालिश्त भर का यह आदमी और इतना ताक़तवर! पर जब उनकी कुश्ती होती तब पता चलता था कि वह क्या थे। उनके मुक़ाबले में बड़े-बड़े पहलवान आए जो हाथी की तरह डीलडौलवाले और गैंडे की तरह ताक़तवर नज़र आते थे। लोगों ने जब देखा तो सबके बदन में सनसनी सी दौड़ गई। सब कहने लगे कि सुजनसिंह ज़रा-सा आदमी और उसके मुक़ाबले के लिए ये रुस्तम जैसे पहलवान! मगर जब लँगोट कसकर बजरंगबली की आवाज़ के साथ सुजनसिंह अखाड़े में कूदते और अपने से दुगुने-तिगुने डीलवाले पहलवानों को बात की बात में कमर में हाथ डालकर काँधे के ऊपर उठा लेते और ऐसे ज़ोर से चारों ख़ाने चित ज़मीन पर पटकते कि उनकी हड्डी-हड्डी बोल जाती, तब सभी लोग अचरज से मुँह बाए रह जाते! आख़िरकार सारे देश ने मान लिया कि सुजनसिंह अपने ज़माने के सबसे बड़े पहलवान हैं। महाराजा अलवर ने सुजनसिंह को 'रुस्तमे हिन्द' का ख़िताब दिया और रोज़ उनको घड़ा भर दूध, आधा सेर बादाम और सेर भर घी का रातिब देने का इंतज़ाम कर दिया। इसके अलावा पाँच सौ रुपया महीने की तनख़्वाह भी बाँध दी।
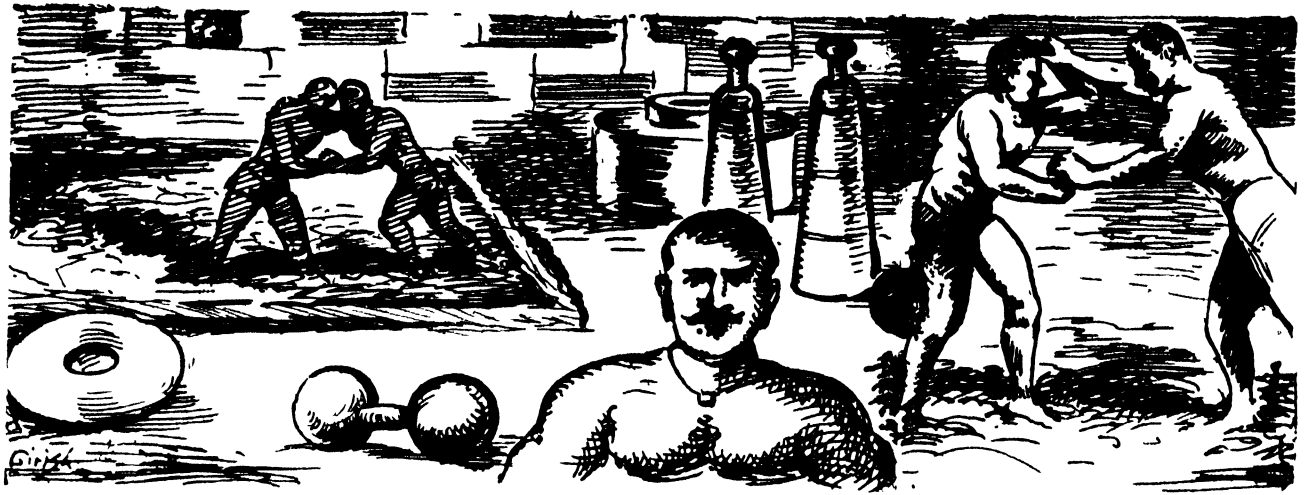
अर्जुनसिंह गोकि देखने में बड़ा तगड़ा था, लेकिन वह कुश्ती के दाँव-पेंच और पहलवानी के गुर बहुत कम जानता था। सुजनसिंह ने उसे नए-नए दाँवपेच सिखाना शुरू किया ....

दूर-दूर से लोग सुजनसिंह का नाम और उनके कारनामे सुनकर उनके पास आते रहते थे। एक दिन कहीं से एक पहलवान सुजनसिंह के पास आया। यह बड़ा ज़बर्दस्त और लंबे-चौड़े डीलवाला आदमी था। इसकी सूरत ऐसी बनी थी जिसे देखकर डर लगता था। आठ फ़ीट पाँच इंच का क़द, बयालिस इंच का सीना, चीते जैसी कमर, भरी हुई जाँघें, जिन पर मछलियाँ उभरी हुई, कसरती ठाठ, ऐसी मोटी गर्दन कि घुमाई न जा सके! सुजनसिंह इस पहलवान को देखकर बहुत ख़ुश हुए और उसका नाम-पता उन्होंने पूछा। पहलवान ने कहा—'उस्ताद, मेरा नाम अर्जुनसिंह है और मैं अटक पार का रहनेवाला हूँ। उस इलाक़े में मेरी कुश्ती की धूम है। लेकिन मैं आपकी शागिर्दी करने के लिए उतनी दूर से यहाँ आया हूँ।' सुजनसिंह ने पहलवान को अपने अखाड़े में दाख़िल कर लिया। पगड़ी बँधी और अखाड़े भर को बताशे और मिठाई बाँटी गई। अर्जुनसिंह गोकि देखने में बड़ा तगड़ा था, लेकिन वह कुश्ती के दाँव-पेंच और पहलवानी के गुर बहुत कम जानता था। सुजनसिंह ने उसे नए-नए दाँव-पेंच सिखाना शुरू किया और कुछ ही दिनों में उसे दंगल का उस्ताद बना दिया।

साल भर बाद सुजनसिंह ने महाराजा से कहा कि 'अन्नदाता! मैंने एक पट्ठे को तैयार किया है। मैं चाहता हूँ कि आप उसकी कुश्ती अपनी आँखों से देख लें।' महाराजा ने मंज़ूर कर लिया।

दूसरे दिन इलाक़े के सभी पहलवान इकट्ठा हुए। अखाड़े की खुदाई हुई। नई मिट्टी डाली गई। महाराज और सरदारों के लिए कुर्सियाँ लगा दी गईं। महाराजा ठीक वक़्त पर राजकुमार और अफ़सरों के साथ कुश्ती देखने आए। अर्जुनसिंह को महाराजा साहब के सामने पेश किया गया। महाराजा ने देखा कि आदमी के रूप में मानों हाथी खड़ा है! सीना निकाले बदन पर मिट्टी पोते हुए अर्जुनसिंह ने मुग्दर हिलाए और महाराजा को सलामी दी। उसके बाद उसने बनेठी और तलवार के भी करतब दिखाए। महाराजा ने बहुत तारीफ़ की और दर्शकों की भीड़ ने भी 'वाह, वाह' की आवाज़ से आकाश गुँजा दिया।

तब अर्जुनसिंह दंगल में कूदा। पहले उसने एक सौ डंड पेले और उसके बाद कहा—'है कोई माई का लाल जो मुझसे हाथ मिलाए?' सुजनसिंह ने इशारा किया और एक पहलवान, जो सुजनसिंह के पट्ठों में बहुत मशहूर था, लँगोट कसकर दंगल में कूदा। उस्ताद ने उसकी पीठ ठोकी। पहलवान ने अपने-अपने बाज़ू थपथपाए। अर्जुन ने हाथ मिलाया। महाराजा ने कहा, 'टक्कर तो बराबर की मालूम होती है। दोनों की जोड़ी ठीक बैठती है।'

कुश्ती शुरू हुई। पहले तो वह पहलवान अर्जुन को धकेलता चला गया। उसके बाद अर्जुन ने सीने में सिर अड़ाकर

उसे रेला। देर तक यही रेल-पेल और कुश्तमकुश्ता होती रही, यहाँ तक कि पहलवान की साँस उखड़ गई। तब अर्जुनसिंह ने उठाकर उसे ज़मीन पर पटक दिया। महाराजा 'वाह-वाह' कह उठे!

अब दूसरे पट्ठे की बारी आई। वह भी अर्जुनसिंह से कुछ देर तक अड़ा, पर आख़िर उसे भी चारों ख़ाने चित होना पड़ा। इसी तरह तीसरा, चौथा, और पाँचवाँ पहलवान, यहाँ तक कि सुजनसिंह के सभी शागिर्द दंगल में कूदे और अर्जुन से मात खाकर भाग खड़े हुए। अब अर्जुनसिंह का घमंड और देखनेवालों का आश्चर्य हद से बढ़ चुका था। महाराजा साहब ने उठकर मोतियों की एक माला अर्जुनसिंह के गले में डाल दी और सुजनसिंह से कहा—'उस्ताद! क्या कहना है! क्या पट्ठा तैयार किया है आपने!'

पर अभी सुजनसिंह कुछ कहने भी न पाए थे कि अर्जुनसिंह सीना तानकर बोला—'अन्नदाता! यह तो परमात्मा की देन है, उस्ताद बेचारे मुझे क्या सिखलाते? मैं तो उनसे भी दो-दो हाथ करने को तैयार हूँ।' महाराजा साहब ने कहा—'रही, मगर आज नहीं, कल। तुमने आज बहुत ज़ोर किया है। कल ताज़ा होकर उस्ताद से पकड़ करना। चलो, यह भी फ़ैसला हो जाय कि 'रुस्तमे हिन्द' सुजनसिंह हैं या तुम हो।'

अर्जुनसिंह ने कहा—'जो मालिक की मर्ज़ी।' सुजनसिंह बेचारे चुप थे। जिसको शागिर्द बनाया वही अपने से होड़ बदने लगा! साल भर क्या-क्या ज़ोर कराए, क्या-क्या दाँव-पेंच बतलाए! आज उन सब चीज़ों पर पानी फिर गया और जिसे भूँकना सिखाया वही अब काटने को आया! यह सोच-सोचकर उस्ताद के मन में एक कसक उठने लगी, पर वह ख़ून का-सा घूँट पी गए और दिल में कहने लगे, 'अच्छा बच्चा, देखो तो कल कैसा रगेदता हूँ।' उधर अर्जुनसिंह भी दिल में हवाई क़िले बाँध रहा था, 'उस्ताद जो मुझे बतला सकते थे, बतला चुके। अब इनके पास तो कुछ रहा नहीं। आज मैंने इनके सारे शागिर्दों के बल निकाल दिए। अब मेरे रास्ते का काँटा यही हैं। अगर कल इनको पछाड़ दिया, और पछाड़ना कोई मुश्किल भी नहीं, तो 'रुस्तमे हिन्द' का ख़िताब, महाराजा की
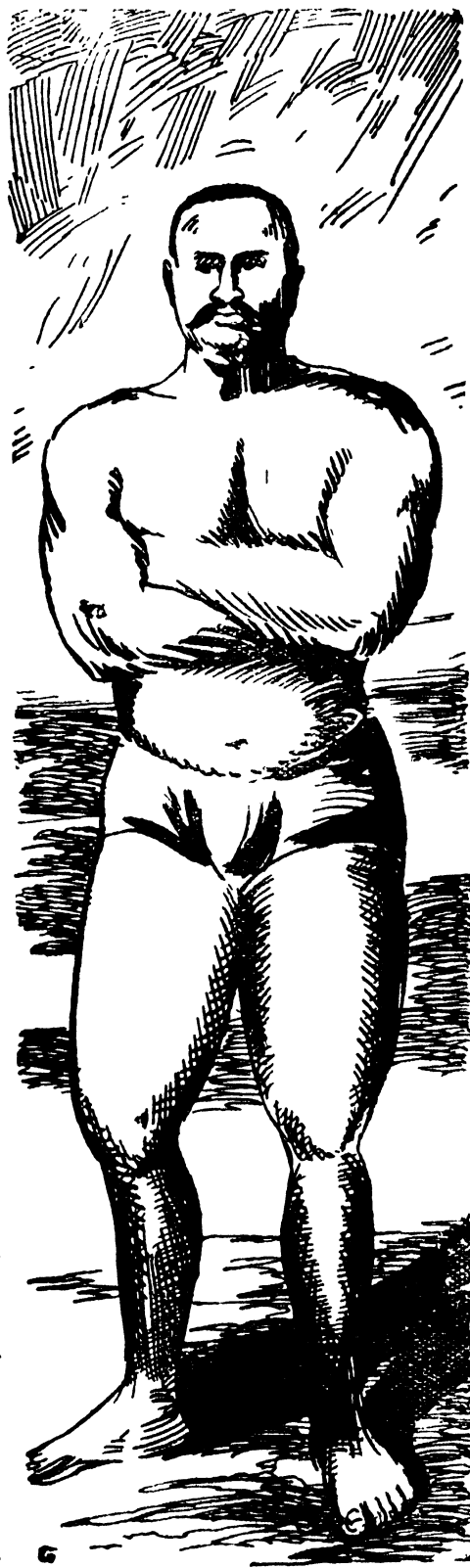
यह बड़ा ज़बर्दस्त और लंबे-चौड़े डील-वाला आदमी था। इसकी सूरत ऐसी बनी थी, जिसे देखकर डर लगता था। आठ फ़ीट पाँच इंच का क़द, बयालिस इंच का सीना…

नौकरी और पाँच सौ रुपया महीना तनख़्वाह पाऊँगा।'

रात-ही-रात में यह ख़बर बिजली की तरह शहर में दौड़ गई कि कल सुजनसिंह अपने शागिर्द अर्जुन से कुश्ती लड़ेंगे, जिसने अखाड़े के सारे पट्ठों को पछाड़ दिया है! अभी सूरज भी न निकला था कि हज़ारों आदमी महाराजा साहब के महल के सामनेवाले मैदान में इकट्ठा हो गए। सुबह आठ बजे ख़ुद महाराजा साहब भी आ पहुँचे और कुश्ती शुरू हो गई।

अर्जुनसिंह ने उनकी कमर में हाथ डालकर उन्हें उठाना चाहा। मगर उन्होंने ज़मीन को इस ज़ोर से पकड़ा था कि टस-से-मस न हुए!...

पहले अर्जुनसिंह अखाड़े में कूदा। पूरा पहाड़ जैसा था! महाराजा को दोनों हाथ जोड़कर उसने नमस्कार किया और फिर इकट्ठा लोगों पर उसने घमंड की एक नज़र डाली। तब उस्ताद भी अपनी जगह से उठे। छोटा-सा क़द, मामूली बदन, लेकिन साँचे में ढला हुआ! चेहरे पर बुढ़ापे के आसार, फिर भी बदन में जवानी की-सी फ़ुर्ती! उस्ताद ने बजरंगबली का नाम लेकर अर्जुन से कहा, 'ज़ोर करो!' वह ज़मीन पर औंधे पड़ गए और अर्जुनसिंह ने उनकी कमर में हाथ डालकर उन्हें उठाना चाहा। मगर उन्होंने ज़मीन को इस ज़ोर से पकड़ा था कि टस-से-मस न हुए! अर्जुन ज़ोर करते-करते पसीने में नहा गया। दर्शकों ने 'वाह-वाह' के नारों से आसमान गुँजा दिया। अब अर्जुन ने तरह-तरह के दाँव-पेंच शुरू किए। पर उस्ताद से दाँव-पेंच में कौन जीत सकता था! पहलवानी तो उनके घर की बाँदी थी। आख़िर अर्जुन हाँप गया और उस्ताद अपनी जगह से न हिल सके।

आख़िर उस्ताद ने जब एक अड़ंगा मारा तो अखाड़े का वह पहाड़ सूखे हुए पेड़ की तरह धम से ज़मीन पर चित गिर पड़ा..............

अब उस्ताद की बारी आई। उन्होंने ललकारकर अर्जुन से कहा, 'सँभल' और यह कहकर उन्होंने अपना आख़िरी दाँव चलाया। उन्होंने अर्जुन को ३५९ दाँव और उनके तोड़ बतलाए थे, लेकिन तीन सौ साठवाँ दाँव कभी मौक़ा आने पर काम में लेने के लिए अपने पास रख छोड़ा था। उसका तोड़ अर्जुन को मालूम न था। आख़िर उस्ताद ने जब एक अड़ंगा मारा तो अखाड़े का वह पहाड़ सूखे हुए पेड़ की तरह धम से ज़मीन पर चित गिर पड़ा! महाराजा ने दौड़कर उस्ताद को गले से लगा लिया। दर्शकों ने फूल बरसाए। अर्जुनसिंह ने उस्ताद के पाँव पकड़े। उस्ताद ने उसे गले से लगाकर कहा—'बेटा, इस सीख को हमेशा याद रखो कि साँप पकड़नेवाला साँप के काटे का मंत्र भी अपने पास रखता है!'

कल करे सो आज कर

लायलपुर के इलाक़े की धरती बड़ी उपजाऊ है—मानों सोना उगलती है! गेहूँ की पैदावार के लिए यह इलाक़ा सारे देश में मशहूर है। आसपास मीलों तक गेहूँ के खेत-ही-खेत चले गए हैं। सुबह सूरज उगते समय इन खेतों का दृश्य बहुत ही सुंदर दिखाई देता है। इन्हीं खेतों में चौधरी नन्दगोपाल का भी एक खेत था, जो कई बीघे ज़मीन में फैला हुआ था और जिसमें गेहूँ ऐसे लहलहा रहे थे मानों कोई लंबा-चौड़ा नदी का पाट हो!

चैत का महीना था और गेहूँ की बालियाँ सुनहरी पड़ गई थीं। इस साल गेहूँ की पैदावार बहुत ही अच्छी हुई थी। लोग कहते थे कि बीस-पचीस बरस से इतनी अच्छी फ़सल नहीं हुई। नन्दगोपाल के खेत में फ़सल इतनी भरपूर हुई थी कि पौधे बालों के बोझ से झुके पड़ते थे। वह हर दिन शाम को अपना खेत देखने जाता और अपने साथियों से कहता कि इस बार कटाई होने दो, महाजन का सारा कर्ज़ चुका दूँगा।

नन्दगोपाल के उसी खेत में एक चंडूल और उसका परिवार पिछले कई दिनों से बसा हुआ था। इसीलिए ज्यों-ज्यों फ़सल कटने का वक़्त नज़दीक आता जाता था, चंडूल के बच्चों की माँ की चिन्ता बढ़ती चली जाती थी। वह हर दिन अपने पति से कहती कि 'गेहूँ की फ़सल कटने का समय पास आ रहा है, लेकिन तुम रहने के लिए दूसरे घर की कोई फ़िक्र ही नहीं करते! अब तो कोई दूसरा ठिकाना ढूँढ़ना शुरू कर दो। अगर एकदम से खेत कटने लगेगा तो कहाँ बच्चों को लेकर भागते फिरोगे! क्यों नहीं आग लगने से पहले ही कुआँ खोद लेते?'

चैत का महीना था और गेहूँ की बालियाँ सुनहरी पड़ गई थीं। इस साल गेहूँ की पैदावार बहुत ही अच्छी हुई थी। लोग कहते थे कि बीस-पचीस बरस से इतनी अच्छी फ़सल नहीं हुई..................

चंडूल अपनी स्त्री की यह बातें सुनकर 'हूँ, हाँ' कर दिया करता और जब वह बहुत ज़ोर देती तो कह देता कि 'तुमको इतनी फ़िक्र क्यों है ? आख़िर मैं भी तो आँख मूँदे नहीं बैठा हूँ। तुम क्या जानो कि इस खेत का मालिक कौन है ! मैं उसको बरसों से जानता हूँ और हर साल देखता हूँ कि उसकी सुस्ती और लापरवाही से यह खेत सबके बाद कटता है। अभी इसके कटने में बहुत दिन बाक़ी हैं।'

आख़िर एक दिन वह आया कि किसान और मज़दूर दराँतियाँ लेकर आसपास के खेतों में आने लगे और गेहूँ की कटाई शुरू हो गई। गेहूँ के पौधों की क़तारें-की-क़तारें ग़ायब होने लगीं। जहाँ मीलों तक पके हुए खेत लहलहा रहे थे वहाँ अब साफ़ मैदान दिखाई देने लगे, जिनमें काटे गए गेहूँ के पुआल के ढेर पड़े थे।

अब तो मादा चंडूल बहुत घबड़ाई और चंडूल से कहने लगी कि 'तुम्हारी तो अक़्ल पर पानी फिर गया है। तुम्हारी इस लापरवाही से कहीं नन्हें-नन्हें बच्चों की जान पर न आ बने ! खेत बराबर कट रहे हैं। अगर तुम्हारी यही बेसुधी रही तो किसी दिन हमारा घोंसला भी किसानों की दराँतियों की भेंट चढ़ जायगा। आख़िर तुमने सोचा क्या है ?' चंडूल ने कहा, 'मुझे इसकी तुमसे ज़्यादा फ़िक्र है। आज तुम बच्चों से कह दो कि खेत में जो कोई आदमी आए, उसकी बातचीत ग़ौर से सुनते रहें और याद कर लें कि वह क्या कहता है ?'

उस दिन शाम को जब नर और मादा चंडूल दोनों दाना चुगकर घर आए तो बच्चों ने कहा, 'आज चौधरी नन्दगोपाल खेत में आए थे और अपने खेत को देखकर बहुत ख़ुश हो रहे थे। यह भी कह रहे थे कि अब फ़सल बिल्कुल तैयार है। कल हम अपने पड़ोसियों को लेकर आएँगे और कटाई शुरू कर देंगे।' मादा ने कहा, 'सुन लिया तुमने ! कल से कटाई शुरू होगी और तुमने अब तक कहीं बसेरा लेने की जगह भी न ढूँढ़ी ! चौधरी साहब पड़ोसियों को लेकर आएँगे—अब भी सोचो और समझो।' चंडूल ने जवाब दिया कि 'तुम फ़िज़ूल ही घबड़ा रही हो। अगर पड़ोसियों की मदद से ही खेत कटना है तो अभी इसमें दस-पाँच दिन और लगेंगे। जो काम अपने भरोसे पर नहीं किया जाता, उसके पूरे होने में बहुत

उसी खेत में एक चंडूल और उसका परिवार पिछले कई दिनों से बसा हुआ था। इसीलिए ज्यों-ज्यों फ़सल कटने का वक़्त नज़दीक आता जाता था, चंडूल के बच्चों की माँ की चिन्ता बढ़ती चली जाती थी..........

समय लग जाता है। मैं इतने वक़्त में घोंसला बनाने के लिए दूसरी जगह ढूँढ़ लूँगा। तुम फ़िक्र न करो।'

वह दिन बीता और दूसरा दिन आया, पर कोई भी आदमी खेत में न आया! तीसरा दिन भी यों ही ख़ाली चला गया। चौथे दिन शाम को चौधरी साहब फिर आए और झूमते-झूमते पौधों को देखकर कहने लगे कि 'अब पड़ोसियों से उम्मीद रखना बेकार है। वह तो हर दिन टाल देते हैं और उनका टालना ठीक भी है। अपना काम-काज छोड़कर दूसरे का हाथ वे क्यों बँटाने लगे। अब मैं कल पास के गाँव से अपने रिश्तेदारों को बुलाकर लाऊँगा और उनकी मदद से कटाई शुरू कर दूँगा।'

शाम को बच्चों ने फिर चंडूल से चौधरी साहब की सारी बातचीत कह सुनाई। मादा चंडूल ने ये बातें सुनकर फिर अपने पति से नए घोंसले की तलाश का तक़ाज़ा शुरू किया और कहा 'कि अब यह खेत कल ज़रूर कट जायगा। देखते ही हो कि आसपास के सब खेत कट चुके हैं। भई, अब तो अपनी बेखटके की नींद छोड़ो।' पर चंडूल ने फिर सुनी-अनसुनी करते हुए कहा कि 'तुम देखती ही रहो कि क्या होता है। अगर चौधरी साहब का यही इरादा है कि कटाई के लिए रिश्तेदारों को बुलवाएँ तो यह खेत अभी और दो-चार दिन नहीं कटेगा। वह जिन लोगों पर उम्मीद लगाए बैठे हैं वे भी तो अपने-अपने काम-धन्धों में लगे हैं! आजकल कौन बेकार बैठता है!'

चंडूल की यह बात भी सच निकली और फिर तीन-चार दिन तक कोई फ़सल काटने नहीं आया। इसके बाद तेज़ हवा चलना शुरू हुई। गेहूँ के दाने ज़मीन पर बिखरने लगे और हवा के झोंकों से पौधे दोहरे हो-होकर टूटने लगे। जब बालें बिखरने लगीं तो चौधरी साहब बहुत परेशान हुए और कहने लगे कि 'अगर अब भी खेत को न काटा गया तो गेहूँ का एक-एक दाना मिट्टी में मिल जायगा और मैं हाथ मलता रह जाऊँगा। आधी तो क्या, पाव फ़सल भी मेरे हाथ न लगेगी। मैंने अपने क़ीमती दिन पड़ोसियों और रिश्तेदारों की मदद की उम्मीद में बेकार गँवा दिए। यों तो मेरे सामने सबके सब इस काम में हाथ बँटाने का वादा कर लेते हैं, लेकिन समय पर कोई भी घर से नहीं निकलता! सब अपने-अपने खेतों में लगे रहते हैं। आज उन सबके यहाँ कटाई हो चुकी और मेरा खेत वैसा ही खड़ा है! आँधियों के दिन सामने आ गए हैं। अब ज़रा-सी देरी भी मुझे ले डूबेगी। अब दूसरा कोई चारा नहीं है। कल मैं ख़ुद ही आकर अपना खेत काटूँगा। आदमी अपना काम आप ही कर सकता है, दूसरों के आसरे बैठे रहना बेवक़ूफ़ी है!'

चिड़िया ने देखा कि चौधरी साहब भी अपने छोटे भाई के साथ हाथ में दराँतियाँ लिये खेत काटने को चले आ रहे हैं ....

शाम को बच्चों ने चंडूल स कहा कि 'आज चौधरी साहब अपनी ग़फ़लत पर बहुत पछता रहे थे कि उन्होंने पड़ोसियों और रिश्तेदारों की आस क्यों लगाई! वह यह फ़ैसला कर गए हैं कि कल खेत ख़ुद काटेंगे।'

चंडूल ने कहा, 'बेशक! अब यह खेत कल ज़रूर कटना शुरू हो जायगा। हमें सुबह होते ही यहाँ से चल देना चाहिए।'

यह कहकर वह घोंसला बनाने के लिए दूसरी जगह की तलाश में निकल गया और रातभर जंगलों में छानबीन करता रहा। मादा चिड़िया अपने बच्चों को लिये हुए उसकी बाट जोहती बैठी रही। जब कोई पत्ता

हिलता तो इस उम्मीद में कि उसका नर आ गया वह इधर-उधर गर्दन उठाकर देखने लगती, और जब चंडूल को न पाती तो झुँझलाकर रह जाती। इतने में सुबह हो गई और लोग अपने-अपने खलियानों में चलते-फिरते नज़र आने लगे। चिड़िया ने देखा कि चौधरी साहब भी अपने छोटे भाई के साथ हाथ में दराँतियाँ लिये खेत काटने को चले आ रहे हैं। इधर चौधरी साहब ने खेत में क़दम रखा, उधर चंडूल भी नए घोंसले के लिए जगह ढूँढ़कर आ पहुँचा और उन्होंने खेत काटना अभी शुरू भी न किया था कि उसके पहले ही वह अपने बाल-बच्चों को लेकर वहाँ से उड़ गया!

गधे का शिकार

बहुत दिन हुए हिमालय पहाड़ की तराई में एक शेर रहता था—बहुत ज़बर्दस्त और बड़ा बहादुर। पूरे इलाक़े में उसके नाम के डंके बजते थे। नैपाल और भूटान की सरहदों तक उसका राज्य था! किसी दूसरे शेर की मजाल न थी कि उसके इलाक़े में पैर धर सके। कई बार आसपास के जंगलों के चीतों, तेंदुओं, गुलज़ार शेरों और बबरशेरों ने मिलकर उस जंगल को हाथियाना चाहा, लेकिन सफल न हो सके। वह दूर-दूर की सैर कर चुका था और शिकार के लिए उत्तर में नैपाल तक और दक्खिन में विंध्याचल तक धावे मारा करता। जब जंगल का यह राजा अपनी कछार में से निकलकर दहाड़ता तो हाथियों का दिल दहल उठता और पखेरू पेड़ों पर से ऐसे नीचे गिर पड़ते मानों पके फल टपक पड़े हों—ऐसा था उसका दबदबा!

इस शेर के साथ बहुत दिनों से एक लोमड़ी भी रहती थी, जो उसके लिए नए से नया और मोटे से मोटा शिकार फँसाकर लाती और जब शेर उसका शिकार कर लेता तो ख़ुद भी खाता और उस लोमड़ी को भी खिलाता। एक बार ऐसा हुआ कि कई दिन तक लगातार पानी बरसता रहा और शेर अपनी कछार से बाहर न निकल सका। जब आसमान साफ़ हुआ तब भूख के मारे तड़पता हुआ वह शिकार की खोज में निकला। साथ में हमेशा की तरह वह लोमड़ी भी थी। बहुत-से झाड़-झंखाड़ पार करने पर अंत में शेर ने एक पगडंडी पकड़ी, जो किसी बस्ती को जाती थी। इस पर लोमड़ी ने उससे कहा—'आप जिस रास्ते पर चल रहे हैं, उससे मुझे ख़तरे की बू आती है। अच्छा हो कि यहाँ से लौट चलिए और अपने जंगल में ही शिकार खेलिए।' शेर को ग़ुस्सा आ गया और उसने लोमड़ी से कहा—'तू क्या मुझे डरपोक बनाना चाहती है?'

जब आसमान साफ़ हुआ तब भूख के मारे तड़पता हुआ वह शिकार की खोज में निकला। साथ में हमेशा की तरह वह लोमड़ी भी थी……
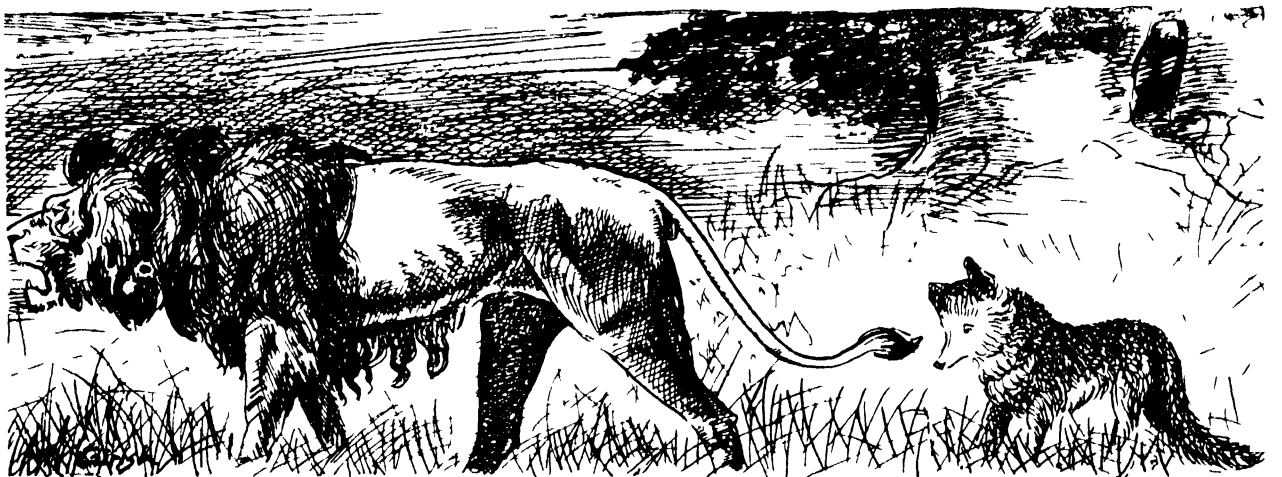
लोमड़ी ने कहा—'जी नहीं, डरपोक नहीं बल्कि दूरंदेश। हम जिस रास्ते पर चल रहे हैं, यह आदमियों के आने-जाने का रास्ता है। आदमी तरह-तरह के हथकंडों से जंगल के जानवरों को फँसाया करता है। मैं डरती हूँ कि कहीं हम भी किसी बला में न फँस जाएँ!'

शेर ने कहा—'ज़्यादा बातें बनाने की ज़रूरत नहीं। हम जो हुक्म दें उस पर अमल करती रहो।'

लाचार लोमड़ी चुपचाप शेर के पीछे-पीछे चलती रही। कुछ ही देर में हवा के एक तेज़ झोंके के साथ इन लोगों को शिकार की बू मालूम हुई। शेर ने लोमड़ी से कहा—'क्या मालूम देता है?'

लोमड़ी ने कहा—'हम लोगों से दाहिने हाथ की ओर चार-पाँच सौ क़दम पर कोई शिकार मौजूद है। यह बू उसी की आ रही है।'

शेर ने कहा—'हम तो पहले ही कहते थे न! आज बड़े नेक सगुन के साथ घर से चले है। तभी तो निकलते ही शिकार मिला।'

लोमड़ी ने कहा—'पर मुझे तो इसमें धोखा ही मालूम हो रहा है। आनेवाली बू यह बतलाती है कि हमारा शिकार कहीं पास ही मौजूद है और अचरज तो यह है कि हमारी आहट पाकर और बू सूँघकर भी वह अब तक भागा नहीं, जबकि शेर की बू पाकर कोसों दूर से ही जानवर भाग जाते हैं!'

शेर ने कहा—'जिसकी मौत आ जाती है, फिर वह भागा नहीं करता।'

लोमड़ी बेचारी फिर चुप हो गई। उधर शेर पंजे तौलकर आगे बढ़ा। उसने देखा कि सामने एक भैंसा एक पेड़ से बँधा खड़ा है। लोमड़ी ने शेर से कहा—'ज़रा होशियारी से काम लीजिए, शिकारी भी कहीं यहीं छिपा है।' शेर ने कहा—'सामने आए हुए शिकार को छोड़ देना बेवक़ूफ़ी है और कायरता भी। अब जो कुछ भी हो!' यह कहकर वह ग़ुर्राया और बदन तौलकर भैंसे पर झपट पड़ा। अचानक दन से गोली चली और शेर के पंजे को ज़ख़्मी करती हुई निकल गई। लोमड़ी दूर से चिल्लाई कि 'अब भी वक़्त है, निकल

उसने देखा कि सामने एक भैंसा एक पेड़ से बँधा खड़ा है.........

जाइए।' जब पंजे पर चोट मालूम हुई तो शेर भी कुछ समझा। इतने में एकाएक फिर से कई गोलियाँ बरस पड़ीं। शेर घायल होकर लोहूलुहान हो गया। पर किसी तरह हिम्मत करके वह दुश्मनों के घेरे से निकल गया। लोमड़ी इससे पहले ही नौ-दो-ग्यारह हो गई थी।

इस मौक़े पर शेर को बहुत-सी चोटें आईं। उसके बदन में कितनी ही जगह खाल में छर्रों से छेद हो गए। काफ़ी दिनों तक शेर अपनी माँद में ही पड़ा रहा और अपना इलाज कराता रहा। फिर भी कोई फ़ायदा न हुआ। लोमड़ी ने तरह-तरह की जड़ी-बूटियों और दवाओं से शेर को अच्छा करना चाहा, परन्तु उसके घाव न भरे। आख़िरकार उसकी खाल फटने लगी, घावों में नासूर पड़ गए, हाथ-पाँव की ताक़त जवाब दे गई और वह मुर्दा जैसा होकर पड़ रहा। लोमड़ी शेर की यह हालत देखकर बहुत घबड़ाई, क्योंकि शेर की इस बीमारी से उसकी भी जान के लाले पड़ गए थे। जब शेर ही को खाने को न मिलता था तो लोमड़ी किस तरह पेट भरती! मालिक ही भूखों मरने लगे तो नौकर क्या करेगा! आख़िर तंग आकर लोमड़ी ने शेर से कहा—'दवा भी कर ली और दुआ भी। लेकिन अबकी बीमारी ऐसी बुरी लगी है कि बढ़ती ही चली जाती है। कोई और इलाज हो तो बतलाइए, वह भी किया जाय!' शेर ने कहा—'सिर्फ़ एक आख़िरी इलाज और रह गया है। अगर किसी तरह से गधे के कान, नाक, और दिमाग़ खाने को मिल जाएँ तो फ़ायदे की उम्मीद हो सकती है। मगर यहाँ गधा कहाँ?' लोमड़ी ने कहा—'आप घबड़ाएँ नहीं, दुनिया में गधों की कमी नहीं। अगर इस दवा पर आपको विश्वास है तो अभी ढूँढ़कर लाती हूँ।'

तुरन्त ही लोमड़ी किसी एक गधे की तलाश में निकली। वह थोड़ी ही दूर चली थी कि उसने देखा कि एक धोबी नदी के किनारे कपड़े धो रहा है और उसका गधा मैदान में सूखी घास चर रहा है। लोमड़ी चुपके-चुपके उस गधे के पास गई और उसे झुककर प्रणाम करने के बाद उसका कुशल-समाचार पूछा। गधे ने ठंढी साँस भरकर कहा—'मेरा क्या हाल पूछती हो बहन! न सुख है न मौत। दिन भर लदाई करता हूँ और रात भर सूखी घास के तिनके चबाता रहता हूँ।' लोमड़ी ने कहा—'अचरज है कि आप जैसा बुद्धिमान् और बहादुर इस ज़िन्दगी से इस तरह ऊबा हुआ रहे। अरे साहब, शहर को लात मारिए, जंगल को चलिए। वहाँ न खाने की कमी है न पीने की।'

लेकिन वह बहुत कमज़ोर हो गया था। इसलिए गधे तक पहुँचने से पहले ही धम से ज़मीन पर गिर पड़ा और गधा 'ढिपों-ढिप' करता हुआ भागा......

गधे ने जो अपने लिए 'बुद्धिमान्' और 'बहादुर' ये शब्द सुने तो वह बहुत ख़ुश हुआ और धोबी की आँख बचाकर तुरन्त ही लोमड़ी के साथ हो लिया। लोमड़ी उसे बहलाती-फुसलाती शेर की कछार तक ले आई। उधर शेर ने जो गधे की बू सूँघी तो बेचैन होकर वह अपनी रही-सही ताक़त बटोरकर कछार से निकल आया और गधे पर झपटा। लेकिन वह बहुत कमज़ोर हो गया था। इसलिए गधे तक पहुँचने से पहले ही धम से ज़मीन पर गिर

पड़ा और गधा 'ढिपों-ढिपों' करता हुआ भागा। शेर को गधे के इस प्रकार भाग निकलने का बड़ा रंज हुआ। मगर लोमड़ी ने अपना धैर्य न छोड़ा और वह फिर एक तदबीर सोचकर गधे के पास आई। गधा देखते ही बोला—'वाह जी, तुमने तो मेरी जान लेने के सामान कर दिए थे!' लोमड़ी ने क़हक़हा मारा और कहा—'अगर यह बात न हो तो लोग तुमको गधा क्यों कहें? अरे बेवक़ूफ़, वह कोई असली शेर थोड़े ही है। अगर सचमुच का शेर होता तो क्या तुम बचकर भाग सकते थे? वह तो बुज़ुर्गों ने जंगल की हिफ़ाज़त के लिए काग़ज़, मिट्टी और कपड़े का बनाया है, जिससे कि जानवर उसे देखकर डर जाएँ और भाग जाएँ! तुम उसे असली शेर समझ बैठे! आख़िर गधे ठहरे!'

'हुज़ूर, इस गधे के न कान थे, न नाक थी, और न दिमाग़.......

गधे ने जो लोमड़ी की ये बातें सुनीं तो वह फिर उसके जाल में फँस गया और उसके साथ फिर जंगल की ओर पलट चला। उसने जो नरम-नरम घास देखी तो चरने में लवलीन हो गया और जब पेट भर चुका तब उसे आराम की सूझी और थोड़ी ही देर में वह एक छायादार पेड़ के नीचे बैठकर ऊँघने लगा।

अब शेर के लिए बड़ा अच्छा मौक़ा था। वह फ़ौरन् कछार से निकला और बात की बात में गधे को चीर-फाड़कर बराबर कर दिया। उसके बाद वह लोमड़ी से बोला कि 'देखो! मैं ज़रा नहा आऊँ। नहाने के बाद इसके कान, नाक और दिमाग़ को खा जाऊँगा। तब तक तुम यहीं रहना।' शेर तो यह कहकर चला गया, उधर लोमड़ी ने दिल में सोचा कि यह माल भी कब-कब मिलता है। मैं ही यह सब-कुछ चट करके क्यों न लाभ उठाऊँ। इसलिए शेर के आने के पहले ही लोमड़ी ने गधे के कान, नाक और दिमाग़ का सफ़ाया कर दिया और तब वह आराम से बैठ गई।

शेर ने वापस आकर जब गधे को उथला-पुथला तो उसे उसके न कान मिले, न नाक मिली और न दिमाग़। ग़ुस्से में भरकर उसने लोमड़ी से पूछा कि 'इसके कान, नाक और दिमाग़ कहाँ हैं?' लोमड़ी ने बड़े अदब के साथ जवाब दिया—'हुज़ूर, इस गधे के न कान थे, न नाक थी, और न दिमाग़। सिर्फ़ पेट ही पेट था। अगर इसके कान होते तो भला यह मेरी चिकनी-चुपड़ी बातों पर कान धरता? और अगर नाक होती तो शेर की बू सूँघकर भी भला यह मौत के इतने क़रीब आने की बेवक़ूफ़ी करता? और अगर इसके दिमाग़ ही होता तो फिर यह गधा क्यों कहलाता? यह तो खाली पेट का कुत्ता था। लालच में आकर यहाँ आ गया और मुफ़्त में अपनी जान गँवा बैठा!'

असली और नक़ली का फेर

किसी सरकसवाले ने एक बार ढिंढोरा पिटवाकर यह एलान किया कि उसके रंगमंच से जो आदमी सबसे अच्छा और सबसे अचरजभरा करतब दिखाएगा, उसको पाँच सौ रुपया दिया जायगा। हिन्दुस्तान में मदारियों की क्या कमी है! उसका यह एलान सुनकर बहुत-से तमाशा दिखानेवाले इनाम की उम्मीद पर अपने-अपने करतब दिखाने के लिए

जमा हो गए। बीसियों ताश के खेल दिखानेवाले दौड़ पड़े। सैकड़ों नट अपनी-अपनी टोलियाँ लेकर सरकस में आ धमके। कई मशहूर पहलवानों ने भी अपने नए-नए दाँव-पेंच दिखाने के लिए वहाँ आकर अखाड़े जमा दिए। ख़बर पाते ही देखने-वालों का भी मेला लग गया। चारों तरफ़ से शौक़ीन लोग टूट पड़े। खूब टिकिट बिके। रुपयों का ढेर लग गया। लेकिन जब तमाशा शुरू हुआ तो किसी ने भी कोई ऐसा खेल न दिखाया जो लोगों को पसंद आता। उस दिन सब दर्शक सरकसवाले को जी ही जी में कोसते हुए वापस गए।

दैवयोग से उन्हीं दिनों बंगाल की तरफ़ का एक मदारी भी वहाँ आया हुआ था। इसका नाम था नन्हें जादूगर। यह जादू-वादू तो कुछ भी न जानता था, लेकिन था बड़ा चालाक और छँटा हुआ बहुरूपिया। वह ताश के पत्ते देखते ही देखते ग़ायब कर देता, और फिर उन पत्तों को जहाँ से चाहता निकाल देता। यह सब उसके हाथ की सफ़ाई थी। एक बार उसने दर्शकों में से किसी एक का दस रुपए का नोट माँग लिया और उस पर एक निशान बना दिया। फिर भीड़ के बीच में खड़ा होकर किसी एक आदमी को अपने पास आने को कहा। एक लड़का तुरन्त दौड़ता हुआ उसके पास जा पहुँचा। उसने वह नोट उस लड़के को दे दिया और कहा कि जहाँ जी चाहे उसे छिपा कर रख लो। लड़के ने अपने कमरबंद में वह नोट अच्छी तरह से बाँध लिया।

अब ताली बजाकर नन्हें ने लोगों से कहा कि देखिए, अब यह नोट देखते-देखते ग़ायब होता है। यह कहकर फिर उसने एक ताली बजाई और एक, दो, तीन कहकर लड़के से कहा कि 'लाओ हमारा नोट!' पर लड़के ने जो कमरबन्द को खोलकर देखा तो नोट लापता! सब लोग हैरान् रह गए और जिस आदमी का नोट था उस बेचारे का तो चेहरा उतर गया। उसने समझा कि अब मेरा यह नोट गया सो गया ही गया। लेकिन मदारी ने कहा कि घबड़ाइए नहीं। आपका नोट मैं दूँगा। यह कहकर उसने आसपास के लोगों पर एक नज़र डाली और पीछे कुर्सी पर बैठे हुए एक नवाब साहब के सामने जाकर वह खड़ा हो गया। बड़े अदब के साथ उसने उनसे कहा—'हुज़ूर, माफ़ कीजिएगा। इस बेचारे का नोट सरकार को नहीं लेना चाहिए।' बेचारे नवाब साहब का मुँह शर्म से लाल हो गया। सब दर्शक अचरज से उनकी तरफ़ देखने लगे। मदारी ने हाथ जोड़कर कहा—'सरकार, नोट आपने ऊपर की जेब में रक्खा है।' नवाब साहब ने खिसियाने-से होकर जब जेब में

कुछ मिनिट वह चुप खड़ा रहा। फिर चुपके ही चुपके उसने टर-टराना शुरू किया, जैसे कोई मंत्र पढ़ रहा हो.....................

हाथ डाला तो सचमुच उसमें दस रुपए का नोट मौजूद था, जिस पर कि मदारी का बनाया हुआ वह निशान बना था। सब लोग तालियाँ पीटकर 'वाह वाह' करने लगे, और नवाब साहब ने दूसरी जेब से पाँच-पाँच रुपए के और दो नोट निकालकर इनाम के तौर पर मदारी के हाथ पर रख दिए।

सच तो यह था कि नन्हें का हाथ नए-नए करतबों के दिखने में इतना साफ़ था कि जैसा खेल चाहो वैसा ही वह कर दिखाता। जानवरों की आवाज़ों की नक़ल तो वह इस ख़ूबी से किया करता था कि देखनेवाले दंग रह जाते थे। अगर परदे के पीछे छिपकर वह बिल्ली की बोली बोलता तो चूहे मारे डर के बिलों में छिप जाते थे। जब वह शेर की तरह दहाड़ता तो घोड़े रास छुड़ाकर भागने लगते थे। कुत्ते की तरह जब वह भूँकता तो बिल्ली दुम दबाकर चूहों के बिल में छिपने की जगह ढूँढ़ने लगती थी। इसी तरह जब वह मुर्ग़ी के बच्चों की आवाज़ बनाता तो मुर्ग़ी 'कुर कुर कुर' करती हुई दाना छोड़कर घबराकर इधर-उधर बच्चे को ढूँढ़ने लगती थी।

इन नक़ली आवाज़ों से जानवरों को धोखा देना इतनी अजीब बात नहीं, जितना कि आदमी को धोखे में डाल देना। एक बार ऐसा हुआ कि रात के बारह बजे नन्हें ने एक मसजिद के नीचे खड़े होकर मुर्ग़े की आवाज़ में बाँग देना शुरू कर दी। मसजिद के मुल्ला ने जो लगातार मुर्ग़े की आवाज़ें सुनी तो समझा कि सुबह हो गई और वह अज़ान दे बैठा। बाद में जब यह पता चला कि यह मुर्ग़ा न था नन्हें की शरारत थी, तो मुल्ला बहुत ग़ुस्सा हुआ, मगर कर ही क्या सकता था!

एक बार नन्हें अपने एक दोस्त के घर गया हुआ था। वहाँ एक कहारिन अपना काम-काज कर रही थी। नन्हें उसको दिक़ करने के लिए उसके बच्चे की आवाज़ में रोने लगा। बेचारी औरत काम-काज छोड़कर दौड़ती चली आई और अपने बच्चे के बजाय जब उसने नन्हें को रोते देखा तो झुँझलाकर रह गई।

मतलब यह कि नन्हें जानवरों, पखेरुओं और आदमियों की नक़ल उतारने और इस तरह के बीसियों खेल दिखाने में बड़ा कमाल रखता था। और तारीफ़ तो यह थी कि सारे करतब वह अकेला ही करता था। इसलिए उसने सरकसवाले का वह

देहाती यह सुनकर हँस पड़ा और अपने कपड़ों में से सुअर का बच्चा निकालकर उसने सबको दिखाया……

एलान सुना तो एक दिन वह भी अपने खेल दिखाने के लिए सरकस के अखाड़े में आ पहुँचा—उसका नाम सुनकर आज पहले से भी ज़्यादा दर्शक इकट्ठा हो गए थे। सरकसघर लोगों से खचाखच भरा हुआ था। तिल धरने की भी जगह न थी। लोग नन्हें के करतब देखने के लिए इतने बेचैन हो रहे थे कि समय से पहले ही वे तालियाँ बजा रहे थे। सरकस का मालिक बार-बार मंच पर आकर कहता था कि अभी नौ बजने में देर है, फिर भी तालियों की गूँज किसी तरह कम न होती थी।

आख़िर नौ की घंटी बजी और उसके साथ ही रंगमंच का परदा उठा। सामने नन्हें खड़ा हुआ दिखाई दिया। लोगों ने फिर तालियाँ बजाकर उसका सम्मान किया। पहली नज़र में ऐसा मालूम होता था जैसे वह कोई पगला हो। कुछ मिनिट वह चुप खड़ा रहा। फिर चुपके ही चुपके उसने टरटराना शुरू किया, जैसे कोई मंत्र पढ़ रहा हो। और तब एकाएक वह ज़ोर से कहने लगा—'छू मंतर भई छू मंतर, अगड़म बगड़म आजा, आजा ओ जंगल के राजा।'

यह मंत्र पढ़ते-पढ़ते उसने मुँह से सुअर की बोली बोलना शुरू किया। ऐसा मालूम होने लगा जैसे असली सुअर ही बोल रहा है! सब-के-सब दर्शक अचरज से दाँतों तले उँगली दबाने लगे। तब कुछ मनचले लोग चिल्ला उठे कि इसके कपड़ों को टटोलो, यह सुअर का बच्चा छिपाकर लाया है। मगर जब तलाशी ली गई तो उसके कपड़ों में कुछ भी न निकला! अब तो मारे वाह-वाह के सारा अखाड़ा गूँज उठा। सरकसवाला भी बहुत खुश हुआ और उसने अपनी एलान की हुई इनाम की रक़म नन्हें के हवाले कर दी।

दैवयोग से उसी भीड़ में किसी गाँव का एक चौधरी भी मौजूद था। उसने नन्हें का यह खेल ख़त्म होने पर एलान किया कि मैं भी कल सब भाइयों को अपना एक खेल दिखाऊँगा और अगर नन्हें से मेरा खेल अच्छा न हो तो जो चोर की सज़ा हो वही मेरी सज़ा हो। लोगों ने यह सुनकर चौधरीजी का बहुत मज़ाक़ उड़ाया, क्योंकि अब सब पर नन्हें की काफ़ी धाक बैठ चुकी थी। फिर भी दूसरे दिन सरकस में पिछले दिन से भी ज़्यादा लोग आए और सो इसीलिए कि उस देहाती का मज़ाक़ उड़ाएँ।

उस देहाती ने क्या किया कि एक सुअर का बच्चा कपड़ों में तरकीब से छिपा लाया। पहले नन्हें जादूगर ने सुअर की बोली बोली; जिसे सुनकर सबने तारीफ़ के पुल बाँध दिए। सारा सरकसघर तालियों से गूँज उठा। उसके बाद मंच पर आया वही देहाती और उसने अपने कपड़ों में छिपे हुए सुअर के बच्चे का कान मरोड़ा, जिससे वह चीख़ने लगा। यह आवाज़ असली सुअर की थी, फिर भी सब लोग चिल्ला उठे कि 'वाह, कैसी बनावटी आवाज़ है। अभी सौ साल नन्हें की शागिर्दी करो!' देहाती यह सुनकर हँस पड़ा और अपने कपड़ों में से सुअर का बच्चा निकालकर उसने सबको दिखाया और कहने लगा कि 'भाइयो, नन्हें के बारे में जो ख़याल आप लोगों के मन में जम गया है, उसके कारण बहरा और अंधा बन जाना ठीक नहीं। आप सुअर की असली आवाज़ को नन्हें की बनावटी आवाज़ के सामने ठुकरा रहे हैं!'

यह बात सुनकर सब लोग बुरी तरह झेंपे और नन्हें भी चुपके से नौ-दो-ग्यारह हुआ।

केंचुए की करामात

बहुत दिन दिन पहले की बात है, हिमालय की तराई में एक रियासत थी, जिस पर एक राजा राज्य करता था। उसके दो लड़के थे—दोनों ही बड़े भले और बुद्धिमान्। सारी प्रजा उन्हें दिल से चाहती थी और वे भी उनके सुख-दुःख में हाथ बँटाते थे। दोनों राजकुमारों में आपस में बड़ा प्रेम था। एक भाई को दूसरे के बिना सुख सुख न मालूम होता था। उनके पिता उनके इस आपसी प्रेमभाव को देखकर बहुत खुश होते थे।

एक दिन ये दोनों भाई सैर करने निकले। घूमते-फिरते एक झील के किनारे जा पहुँचे। गरमी के दिन थे और बड़ी तेज़ धूप पड़ रही थी। दोनों राजकुमार गरमी से पसीने में नहा गए। झील को देखकर उनकी तबीयत जो लहराई तो पानी में कूद पड़े। झील के बीचोबीच एक बड़ी लम्बी-चौड़ी चट्टान पानी के ऊपर उभरी हुई थी। दोनों भाई तैरते-तैरते वहाँ तक जा पहुँचे और दम मारने के लिए उस चट्टान पर चढ़ गए। वे घूमते-घूमते थककर चूर हो गए थे, इसलिए ज्यों ही पैर फैलाकर वे लेटे त्यों ही नींद ने उन्हें आ घेरा और वे ऐसे सोए कि कई घंटों तक उनकी आँख न खुली।

इसी बीच एकाएक ज़मीन में गड़गड़ाहट पैदा हुई और चट्टान ऊपर को उठने लगी। धीरे-धीरे वह इतनी ऊँची हो गई कि फिर किसी आदमी का वहाँ तक पहुँचना मुश्किल हो गया। देखते-ही-देखते एक पहाड़ ज़मीन के अन्दर से उभर आया और उस चट्टान ने उस पहाड़ की सबसे ऊँची चोटी पर जगह पाई! इधर वे राजकुमार अब तक गहरी नींद में पड़े सो रहे थे।

जब कई दिन तक वे दोनों सैर करके वापस घर न आए तो राजा को बड़ी चिंता हुई और उसने इन्हें काफ़ी ढुँढ़वाया, लेकिन कहीं भी उनका पता न चला। और पता चलता भी कैसे? जहाँ पहले झील, मैदान और जंगल थे, अब वहाँ पहाड़ और उनकी चोटियाँ थीं। सारी काया पलट गई थी।

दैवयोग से आसपास के जंगल के सभी जानवर उस राजा से बहुत प्रेम करते थे, क्योंकि वह उनसे भी वैसा ही बर्त्ताव करता था। उन्होंने जब राजा को अपने बेटों की तलाश में भटकते देखा तो आपस में मिलकर तय किया कि अब किसी-न-किसी तरह पहाड़ पर चढ़कर राजकुमारों को जगा देना चाहिए। इसके लिए सबसे पहले शेर ने छलाँग मारी, लेकिन कई गज़ उछलकर वह फिर नीचे आ गिरा। फिर हाथी ने पहाड़ को टक्करें मार-मारकर धकेल देना चाहा, लेकिन उसका सिर लहू-लुहान हो गया और हिम्मत हारकर उसे भी ज़मीन पर बैठ जाना पड़ा। हिरनों ने भी बहुत उछाल भरी, लेकिन पहाड़ की ऊँचाई के आगे वे भी चौकड़ी भरना भूल गए। बारहसिंगे भी पहाड़ के टेढ़े-मेढ़े पेड़ों में उलझकर आगे न बढ़ सके। मतलब यह कि जितने भी जानवर थे, सबने कोशिशें कीं, लेकिन वह चट्टान इतनी ऊँची थी कि कोई भी वहाँ तक न पहुँच सका।

झील के बीचोबीच एक बड़ी लंबी-चौड़ी चट्टान पानी के ऊपर उभरी हुई थी। दोनों भाई तैरते-तैरते वहाँ तक जा पहुँचे…… ….

अब पक्षियों की बारी आई—बीज़, चील, नीलकंठ, पूदने, गिद्ध और उक़ाब सभी बारी-बारी से उड़े। मगर कोई चौथाई रास्ते में पहुँचकर और कोई इससे भी कम दूर उड़कर औंधे मुँह गिर पड़ा।

सबके आख़िर में रह गया एक बेचारा केंचुआ—ज़मीन पर रेंगनेवाला कीड़ा। उसने कहा कि मै उस चट्टान पर पहुँचकर राजकुमारों को जगा दूँगा। यह सुनकर सब पशु-पक्षी उसका मज़ाक़ उड़ाने लगे। चूहा बोला—'पाँव रख दूँ तो मियाँ कुचल जाएँ।' चील ने कहा कि 'निगल लूँ तो पेट भी न भरे।' हाथी ने चिंघाड़ मारी कि 'मुझे तो यह ग़रीब नज़र भी नही आता।' सबने कुछ-न कुछ चुटकी ली। लेकिन केंचुए ने सबकी सुनी-अनसुनी कर दी और पहाड़ पर चढ़ना शुरू कर दिया।

जिस तरह घड़ी में घंटे की सुई रेंगती है, केंचुआ भी उसी तरह धीरे-धीरे रेंग रहा था। पर वह रुकता नहीं था और ऊपर चढ़ता ही चला जा रहा था। यहाँ तक कि कुछ देर में वह आँखों से ओझल हो गया। अब नंगी चट्टानें ख़त्म हो गई थीं और पहाड़ की बर्फ़ से ढकी हुई चोटियाँ शुरू हो गई थीं। फिर भी उसने हिम्मत न हारी। वह अपनी ताक़त के माफ़िक बढ़ता ही चला जा रहा था। आख़िर वह उस पहाड़ की सबसे ऊँची चोटी पर जा पहुँचा, जहाँ दोनों राजकुमार उस बेहोशी की नींद में मस्त लेटे पड़े थे।

केंचुए ने राजकुमारों को नींद से चौंकाने के लिए बारी-बारी से उनके पैरों में काटा, लेकिन वे न जागे। उसने बहुत कोशिशें कीं, पर सब बेकार। आख़िर पेट और सीने पर होता हुआ वह एक भाई के कान में घुस गया। वहाँ जाकर वह बहुत-कुछ चीख़ा-चिल्लाया, फिर भी उसकी आँख न खुली। अब वह दूसरे भाई के कान में पहुँचा। लेकिन उसने भी एक न सुनी। अब तो वह बहुत ही निराश हो गया। उसकी सारी मेहनत बेकार हुई जा रही थी। आख़िर उसे एक निराली तदबीर सूझी। वह एक भाई की नाक में घुस गया। जब साँस बन्द हुई तो उस राजकुमार को छींक आई और

मतलब यह कि जितने भी जानवर थे, सबने कोशिशे कीं, लेकिन वह चट्टान इतनी ऊँची थी कि कोई भी वहाँ तक न पहुँच सका.......

वह तुरन्त उठ बैठा। उसने दूसरे भाई को भी झिंझोड़कर उठाया और जब वे दोनों जाग गए तो अपने को झील के

चट्टान के बजाय पहाड़ की चोटी पर पाकर वे बहुत घबड़ाए। लेकिन केंचुए को देखकर उनकी हिम्मत बँधी। उन्हें यह भरोसा हो गया कि वे इसी दुनिया में हैं और ज़मीन से ज़्यादा ऊँचाई पर नहीं हैं। वे उसके पीछे-पीछे धीरे-धीरे चले और कुछ ही समय में पहाड़ से नीचे उतर आए और अपने घर जा पहुँचे।

आखिर उसे एक निराली तदबीर सूझी। वह एक भाई की नाक मे घुस गया…… ‥

उस दिन से केंचुआ ज़मीन के भीतर चला गया। वह तब से ज़मीन के नीचे ही रहता है और फ़जूल डींग हाँकनेवालों की सूरत तक देखना पसन्द नहीं करता!

घमंड का फल

बगुला सिर झुकाए तालाब के किनारे खड़ा था। ऐसा मालूम देता था जैसे वह गहरे विचार में हो। तालाब की सारी मछलियाँ उसे अपना दुश्मन जानती थीं और उसके पास न फटकती थीं। वह सोच रहा था कि अगर मछलियाँ इसी तरह उससे दूर-दूर रहेंगी तो उसका बसर कैसे होगा!

इन्हीं दिनों झील की एक मछली बरसात के पानी में बहकर उस तालाब में चली आई थी। तालाब की मछलियों ने मेह-मान समझकर उसकी काफ़ी ख़ातिर की थी। पर वह उनकी परवा ही नहीं करती थी। वह बड़ी डींग हाँकनेवाली और

बगुला सिर झुकाए तालाब के किनारे खड़ा था। ऐसा मालूम देता था जैसे वह गहरे विचार में हो…………… …… ………………

घमंडी थी। उसे अपने रंग-रूप और होशियारी पर बड़ा घमंड था। वह अपनी चालाकी के नित नए क़िस्से सुनाया करती और तालाब की मछलियों के मैले-कुचैले रंग और उनकी सीधी-सादी बातों पर चुटकियाँ लेती रहती थी।

तालाब के बन्द पानी में दम भर को भी उसका जी न लगता था। वह बगुलों और मुर्ग़ाबियों को मनमाने ढंग से ऊँचाई पर उड़ते देखकर सोचा करती कि इनकी तरह अगर मेरे भी पर लग जायँ तो मैं भी उड़कर फिर तालाब से झील में चली जाऊँ। एक दिन जब उसका दिल बहुत घबड़ाया तो अपनी पड़ोसिनों से वह बोली—'आओ,' ज़रा किनारे की ही सैर कर आएँ।' इस पर उन्होंने काँपकर कहा—'किनारे पर जाना ठीक नहीं। वहाँ एक बड़ा पुराना मक्कार बगुला रहता है और कितनी ही मछलियों को वह धोखे से मार चुका है।' यह बात सुनकर झील की मछली को हँसी आ गई और उसेन अपने चमकते हुए बदन को लहरों से ऊपर उभारकर कहा—'मेरी भोली-भाली बहनो! मैं जिस देश की रहनेवाली हूँ, वहाँ इससे भी बड़ी-बड़ी डरावनी बलाएँ हैं—मगर, घड़ियाल, बड़े-बड़े कछुए और केकड़े। पर मैंने इन सबसे लड़-भिड़कर पानी में हुकूमत की है। यह बेचारा बगुला भला मेरा क्या बिगाड़ लेगा! तुम हरगिज़ इससे न डरो। मैं एक ही दिन में उसके होश दुरुस्त कर दूँगी।'

नई मछली की ये बातें सुनकर एक बूढ़ी मछली पानी की सतह से ऊपर आई और प्यार के साथ बोली—'मेरी प्यारी बेटी! मुझे कितने ही बरस इस तालाब में रहते-सहते हो गए हैं और अनगिनत बाल-बच्चों को इस दुष्ट बगुले के पेट में हज़्म होते मैं देख चुकी हूँ। यह छँटा हुआ ऐयार और ग़ज़ब का मक्कार है। ऐसे-ऐसे दाँव-पेंच चलाता है कि बड़ी-बड़ी चालाक मछलियाँ इसकी बातों के जाल में फँस जाती हैं और वह उनको चट कर जाता है। बुद्धिमानी इसी में है कि अपने पर ज़्यादा घमंड न करो और बचकर रहो।'

झील की मछली ने यह सुनकर बुढ़िया की खिल्ली उड़ाते हुए कहा—'बूढ़ी माँ! आपकी सीख और मेहरबानी के लिए धन्यवाद! पर मैं झील की रहनेवाली हूँ, तालाब की बसनेवाली नहीं। मैंने दूसरी ही दुनिया देखी है, घाट-घाट का पानी पीया है.

वह बगुलों और मुर्ग़ाबियों को मन-माने ढंग से ऊँचाई पर उड़ते देखकर सोचा करती कि इनकी तरह अगर मेरे भी पर लग जायँ तो मैं भी उड़कर फिर तालाब से झील में चली जाऊँ........

कितने ही मगर-मच्छों के नीचे से निकल चुकी हूँ, कितने ही केकड़ों को उल्लू बनाया है। एक बार तो एक पुराने घाघ मछुए के जाल में फँसकर भी मैं ज़िन्दा बचकर निकल आई! फिर भला इस बगुले की क्या ताक़त है कि अपने फन्दे में मुझे फँसा ले! मेरी प्यारी दादी! आप देखेंगी कि मैं इस बगुले को वह चरका दूँगी कि उम्र भर याद रक्खेगा। शायद मुझे विधाता ने इसी से आपके देश में भेजा है कि अपनी बहनों और माताओं को इस बला से छुटकारा दिलाऊँ।'

तालाब की मछलियों ने नई मछली की जो ये डींग-भरी बातें सुनीं तो बुरा मानकर चुप हो गईं ....

तालाब की मछलियों ने नई मछली की जो ये डींग-भरी बातें सुनीं तो बुरा मानकर चुप हो गईं। इनमें से एक बड़ी-बूढ़ी धीरे से बोली—'हमें क्या ग़रज़ है, जो भली सलाह देकर उल्टे तानें सुनें! इसे अपनी चालाकी पर घमंड है, लेकिन समझ-बूझ इसमें ज़रा भी नहीं। यह दुश्मन को अपने सामने बेवक़ूफ़ समझती है। ख़ैर, भुगतने पर अपनी अक़्ल आप ठिकाने आ जायगी।'

झील की मछली ने जो तालाब की मछलियों को चुप देखा तो उसने सोचा कि सब मेरे रोब में आ गईं। यह सोचकर वह फूली न समाई और धीरे-धीरे अकड़ती हुई तालाब के उस पार चली जहाँ बगुलाराम एक टाँग सिकोड़े भगत बने मछलियों की घात में खड़ा था। उसने जो दूर से एक ख़ूबसूरत, चमकदार मछली को अपनी तरफ़ आते देखा तो उसके मुँह में पानी भर आया। पर वह था बड़ा ही छँटा हुआ ऐयार। इसलिए मन ही मन सोचने लगा कि किस तरह इस मछली को धोखे से अपने पास बुलाया जाय।

ख़ूबसूरत मछली किनारे से कुछ दूरी पर आकर रुक गई और पुकारकर कहने लगी—'अजी ओ! तुम कौन हो और तुमने यहाँ क्यों अड्डा जमाया है?' इस पर बगुले ने बड़ी नरमाई से जवाब दिया—'महारानीजी! मैं इस तालाब का चौक़ीदार हूँ और यहाँ दिन-रात पहरा देता हूँ।'

उस घमंडी मछली ने जो अपने लिए 'महारानी' नाम सुना तो वह बहुत ख़ुश हुई और बोली—'सुना गया है कि तुम इस तालाब की भोलीभाली मछलियों को बहुत तंग करते हो! हमें यह बात पसंद नहीं।' इस पर बगुले ने बड़े आदर-भाव से कहा—'मैं तो कभी का यहाँ से चला गया होता, लेकिन मेरे पास एक धरोहर है और मुझे यह हिदायत मिली है कि जब इस तालाब की महारानी इस तरफ़ को आएँ तो इस धरोहर का हाल उन्हें बता दिया जाय। महारानीजी, मैं हर घड़ी इसी बात की बाट जोहते हुए यहाँ खड़ा रहता हूँ कि आप किनारे पर आएँ और अपनी यह अमानत ले जाएँ।'
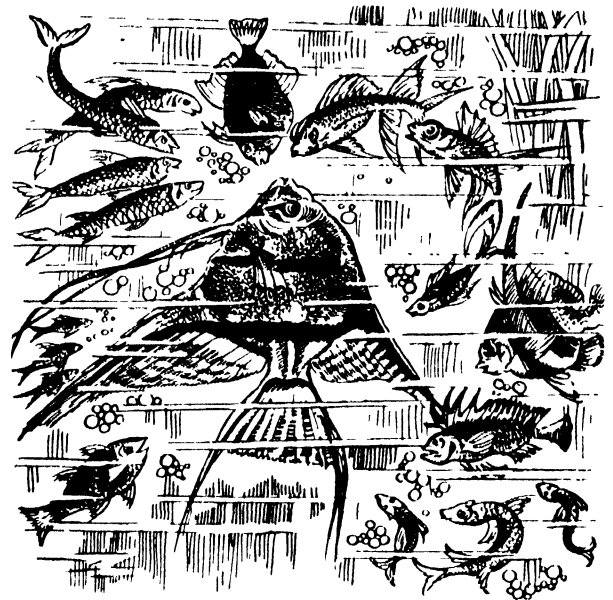
देखते ही देखते वह बगुले के सामने जा पहुँची और वह कुछ कहे उसके पहले ही उसका निवाला बन गई।
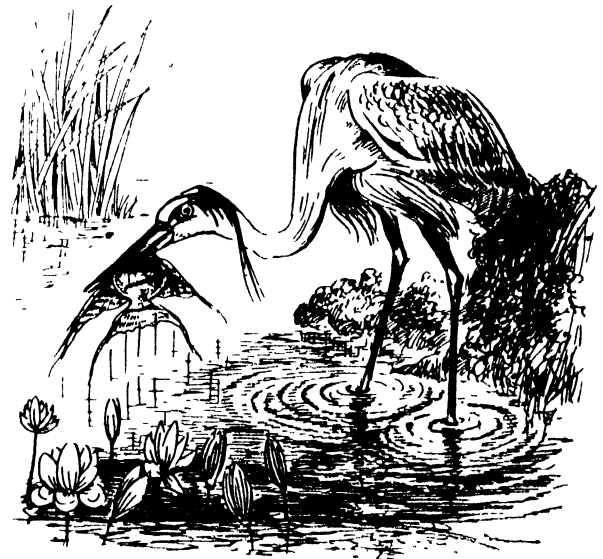
झील की मछली बगुले की ये बातें सुनकर पानी-पानी हो गई। पर डर के मारे वह आगे न बढ़ सकी। दूर से ही चिल्लाकर पूछने लगी कि 'वह धरोहर क्या है ?' बगुले ने कहा कि 'मेरे पास एक चमकदार मोती है, जो समुद्र की गोद से निकाला गया है। यह मोती समुद्र के राजा ने ख़ास तौर से आपके लिए भेजा है, ताकि आप इसे पहनकर तालाब और झील की सारी मछलियों पर राज्य किया करें।'

अब झील की मछली की ख़ुशी का क्या ठिकाना था! उसने बगुले से कहा— 'क्यों जी, दिल से तो तुम बड़े भलेमानुस मालूम होते हो, पर ये तालाब की सारी मछलियां तुम्हें बुरा क्यों कहती हैं ?' 'इसलिए महारानी साहबा', बगुले ने कहना शुरू किया 'कि इनमें से हर एक का यही मन है कि मैं यह मोती उसके ही हवाले कर दूं। पर इस तालाब भर में आप जैसी सुन्दरी एक भी नहीं। यह मोती तो बस आपके ही लिए है। महारानी साहिबा! आइए, ज़रा मेरे पास आइए! मैंने इस अनमोल मोती को अपने पेट में छिपा रक्खा है ताकि कोई इसे चुरा न सके। भगवान् को धन्यवाद है कि आज मै इस काम को पूरा कर रहा हूँ, जो मुझे उस राजा ने सौंपा था।'

मछली अपनी होशियारी के घमंड में बगुले की चाल को न समझी और अपनी तारीफ़ के पुल बँधते देखकर ऐसी बेख़बर हो गई कि देखते ही देखते वह बगुले के सामने जा पहुँची और वह कुछ कहे उसके पहले ही उसका निवाला बन गई!

सच है, जो अपनी चालाकी पर घमंड करता है, और बड़े-बूढ़े समझदार साथियों की सलाह नहीं मानता, उसका ऐसा ही बुरा हाल होता है!

छब्बे बनने गए सो दुबे रह गए

बरगद का दरख़्त कई कारणों से पेड़ों का सरदार माना गया है। एक तो उसकी छतरी बहुत फैली हुई और घनी होती है। दूसरे वह देखने में भी बड़ा ख़ूबसूरत होता है और उसकी ज़मीन तक लटकती हुई लटें तो बहुत ही भली लगती हैं। तीसरे वह इतनी ताक़त से धरती में से पानी खींचता है कि अक्सर उसके पत्तों में से पानी रिसता हुआ दिखाई देता है। चूँकि वह बहुत घना और ऊँचा होता है, इसलिए पक्षी भी उसी पर अपना घोंसला बनाना ज़्यादा पसंद करते हैं और उस पर बसेरा लेकर कई तकलीफ़ों से बच जाते हैं। परन्तु एक ज़माने की बात है कि किसी एक जंगल में ऐसा एक बरगद का पेड़ था, जो हरा-भरा और शानदार था, फिर भी जिसके पास कोई भी चिड़िया बसेरा लेने को फटकती तक न थी! कारण यह था कि उसके ऊँचे सिरे पर एक बाज़ का घोंसला था, तने के एक कोटर में एक बिल्ली ने अपना डेरा जमा रक्खा था, और उसकी जड़ों में बने हुए एक भिट में एक मोटा-ताज़ा भेड़िया डटा हुआ था! इस तरह उसके ऊपर, तले और बीच में तीनों जगह तीन भयंकर शिकारी जीव बसे हुए थे। किसी भी चिड़िया या मामूली जीव-जन्तु की मजाल न थी कि उस पेड़ के पास फटके। इसीलिए उस सारे जंगल में यह पेड़ बरगद के बजाय 'मौत का पेड़' कहलाता था और हर घड़ी उसके आस-पास दूर-दूर तक सन्नाटा बना रहता था। चिड़ियाँ बाज़ के डर से वहाँ से दूर भागती थीं। जानवर भेड़िए के भय से वहाँ पाँव न धरते थे और अगर कोई कभी भूला-भटका वहाँ आ जाता तो फिर वापस नही लौट पाता था—ऊपरवालों को बाज़ दबोच लेता और नीचेवालों को भेड़िया। अब रह गई बिल्ली, सो बेचारी मानों चक्की के दो पाटों के बीच पिसी जा रही थी! उसमें न तो इतनी हिम्मत ही थी कि बाज़ और भेड़िए से लड़ सकती और न यही उसे मंजूर था कि घर छोड़कर कहीं और चली जाय। उसके सात पुरखे उसी कोटर में अपनी ज़िन्दगी बिता गए थे और सच पूछो तो उस बरगद के पुराने रहनेवालों में वही एक बची थी। भेड़िया और बाज़ तो बाद में ज़बर्दस्ती आकर वहाँ बस गए

थे। इसीलिए उसका जी नहीं चाहता था कि बाप-दादों के उस ख़ान्दानी घर को उजाड़कर कहीं और जा बसे। लेकिन अगर न जाय तो करे भी क्या? आख़िर बाज़ और भेड़िए के पड़ोस में उसका निभना भी तो मुश्किल था!

उस बरगद से कुछ ही दूरी पर रहती थी एक लोमड़ी, जो इस बिल्ली की बड़ी पुरानी सहेली थी। बिल्ली को लोमड़ी की चतुराई और बुद्धिमानी पर पूरा भरोसा था। कई बार वह उसकी सलाह से लाभ उठा चुकी थी। एक दिन दोपहर को, जब बाज़ और भेड़िया अपने-अपने शिकार की खोज में कहीं गए हुए थे, बिल्ली ने सोचा कि चलो इस मामले में लोमड़ी से भी सलाह करें। वह ज़रूर कोई ऐसी तरकीब बताएगी, जिससे यह रोज़ की परेशानी और उलझन दूर हो जाय। यह सोचकर वह लोमड़ी के घर पहुँची। लोमड़ी ने जो अपनी सहेली को दोपहर में बेमौक़े अपने घर आते देखा तो उसे अचंभा हुआ और वह कहने लगी—'कहो बहन, कुशल तो है! इतने दिनों से तुम कहाँ थीं? बहुत दिनों में भेंट हुई! तुमने तो इधर आना ही छोड़ दिया।' बिल्ली ने कहा—'बहन, क्या बताऊँ? ऐसी आपदा में फँस गई हूँ कि भगवान् दुश्मन को भी न डाले!' लोमड़ी ने पूछा—'बताओ तो सही, ऐसी क्या विपदा आ पड़ी! आख़िर मैं किस दिन काम आऊँगी!' बिल्ली ने सारा हाल लोमड़ी को बताया और अंत में कहने लगी कि 'अब तुम्हीं बताओ कि मैं क्या करूँ! मैं इस समय इसी काम के लिए तुमसे सलाह लेने आई हूँ।'

लोमड़ी ने कहा—'बड़े-बूढ़ों ने कहा है कि जब ताक़त से काम न चले तो बुद्धि से काम निकालना चाहिए। जहाँ तलवार नहीं चल सकती वहाँ तदबीर चल जाती है। यह बात साफ़ है कि तुम न बाज़ को उसके घोंसले से उड़ा सकती हो और न भेड़िए को उसके भिट से भगा सकती हो। तुम्हारे पास न तो इतनी ताक़त है और न कोई ज़बर्दस्त साथी ही है। ले-देकर सिर्फ़ एक तदबीर है, जिससे तुम दोनों पर क़ाबू पा सकती हो। और वह यह कि किसी-न-किसी तरह बाज़ और भेड़िए में अनबन करा दो। जब दोनों में बैर हो जायगा तो वे आपस में लड़कर मर मिटेंगे और तुम अपना मतलब बड़ी आसानी के साथ पूरा कर लोगी।'

कारण यह था कि उसके ऊँचे सिरे पर एक बाज़ का घोंसला था, तने के कोटर में एक बिल्ली ने अपना डेरा जमा रक्खा था, और उसकी जड़ों में बने हुए भिट में एक मोटा-ताज़ा भेड़िया डटा हुआ था...

बिल्ली ने कहा—'यह तो ठीक है, लेकिन मुझमें इतनी सूझ कहाँ कि इस काम को पूरा कर सकूँ! बिना तुम्हारी मदद के यह काम नहीं हो सकता।'

लोमड़ी ने कहा—'मुझे तुम्हारा काम करने से क्या इन्कार हो सकता है! पर तुम्हें थोड़ी तकलीफ़ उठानी पड़ेगी।'

बिल्ली ने कहा—'वह क्या?'

लोमड़ी ने कहा—'मैं कुछ दिन तुम्हारे घर जाकर रहूँगी ताकि बाज़ और भेड़िए से ख़ूब मेलजोल बढ़ा लूँ। जब दोनों मुझको अच्छी तरह मानने लगेंगे और मुझ पर भरोसा करने लगेंगे तो फिर बड़ी आसानी से मेरी बात का उन पर असर होने लगेगा।'

बिल्ली ने कहा—'अच्छी बात है। मैं आज ही अपना घर ख़ाली कर दूँगी। तुम उसमें आ जाओ।'

लोमड़ी न जाने कितने दिनों से इसी ताक में थी कि बिल्ली के घर पर क़ब्ज़ा जमाए, क्योंकि उस बरगद के तने में रहने की वह बहुत बढ़िया साफ़-सुथरी जगह थी। जब भी लोमड़ी बिल्ली के उस घर को देखती थी उसे अपने भिट का ख़याल आ जाता था जो एक गन्दी, मैली और काँटों से भरी हुई झाड़ी में बना था। लोमड़ी ने जब बिल्ली को अपना घर छोड़ने को तैयार पाया तो वह बहुत ख़ुश हुई और बिल्ली से कहने लगी कि 'तुम भरोसा रक्खो कि मैं ज़्यादा दिन तुम्हारे घर में नहीं रहूँगी। ज्योंही बाज़ और भेड़िए का सफ़ाया हुआ, त्योंही बस फिर तुम्हारा घर तुम्हारे लिए ख़ाली हो जायगा।'

बिल्ली यह सुनकर अपने बाल-बच्चों को लोमड़ी के घर ले आई और लोमड़ी ने जाकर उसके घर पर क़ब्ज़ा जमा लिया।

बाज़ और भेड़िए ने जो बिल्ली के घर में लोमड़ी को देखा तो उन्हें बहुत अचरज हुआ। लोमड़ी ने दोनों से कहा कि 'आपके पड़ोस में रहने के लिए मैं बहुत दिन से बेचैन थी। इसलिए मैंने बिल्ली से यह घर ख़रीद लिया है।' इसके साथ लोमड़ी ने बाज़ और भेड़िए की तारीफ़ के पुल बाँधना शुरू किया और कहा कि 'आप ऐसे बहादुर हैं, ऐसे भलेमानुस हैं आदि।' दोनों लोमड़ी के मुँह से अपनी तारीफ़ सुनकर बहुत ख़ुश हुए। इस तरह धीरे-धीरे लोमड़ी ने उन दोनों के दिल में जगह पैदा कर ली और वे अपनी इस नई पड़ोसिन पर बहुत भरोसा करने लगे।

अब लोमड़ी ने उन दोनों को अलग-अलग एक-दूसरे के ख़िलाफ़ उभाड़ना शुरू किया। बाज़ से उसने कहा कि 'भेड़िया

लोमड़ी ने पूछा—'बताओ तो सही ऐसी क्या विपदा आ पड़ी! आख़िर मैं किस दिन काम आऊँगी।'……………………'……
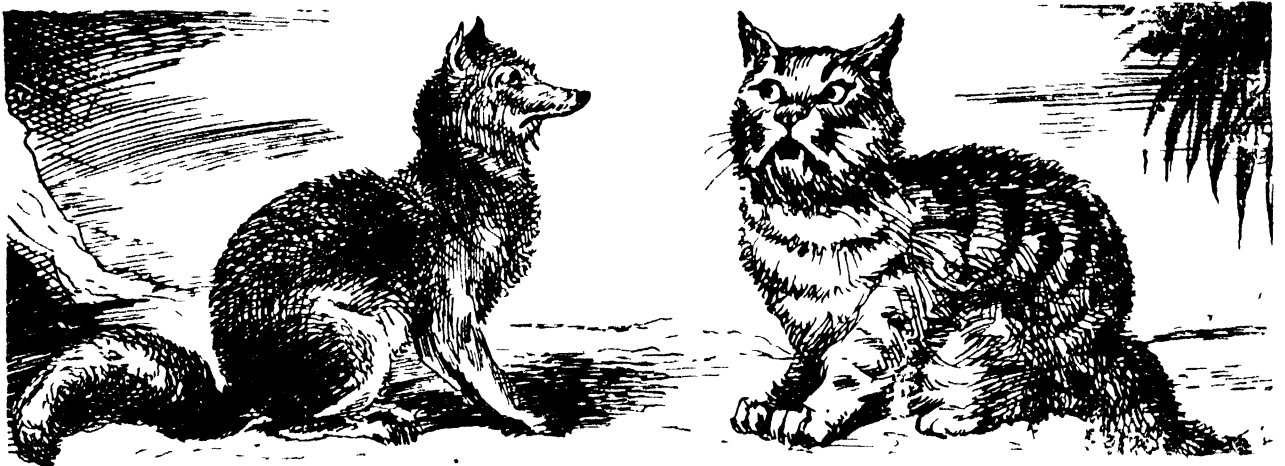
तेरी ताक में हैं'; भेड़िए से कहा कि 'बाज़ तेरे बच्चों को उठा ले जाना चाहता है।' नतीजा यह हुआ कि एक दिन बाज़ और भेड़िए में बड़ी घमासान लड़ाई हुई। बाज़ ने अपने तेज़ पंजों से भेड़िए का मुँह नोचा और उसकी आँखें फोड़ डालीं। भेड़िए ने बाज़ को झिंझोड़कर उसका पेट फाड़ डाला। आख़िरकार दोनों लड़-भिड़कर मर गए और लोमड़ी ख़ुशी-ख़ुशी यह तमाशा देखती रही।

अब बिल्ली ने आकर लोमड़ी को उसके वादे की याद दिलाई। लोमड़ी हँसकर कहने लगी—'मेरी प्यारी बहन, अगर तुमको इस घर पर क़ब्ज़ा दे दिया जाय तो फिर कोई बाज़ या भेड़िया तुम्हें सताने को आ जायगा। यहाँ तो तुम मुझे ही रहने दो। मैं ही इस घर में निडर होकर रह सकती हूँ। तुममें यहाँ रहने की ताक़त कहाँ?'

बिल्ली अपनी मूर्खता पर बहुत पछताई। पर अब वह क्या कर सकती थी? अपना-सा मुँह लेकर चली गई। उसकी हालत उन चौबेजी जैसी हो रही थी, जो गए थे छब्बे बनने सो दुबे ही रह गए!

आज़ादी का मोल

एक घने जंगल में रात के समय भूख का मारा एक भेड़िया शिकार की तलाश में इधर-उधर घूम रहा था। उसे शिकार मिले हुए कई दिन बीत चुके थे। कमज़ोरी और भूख ने दो क़दम चलना भी उसके लिए दूभर कर दिया था। लेकिन पेट की आग बुरी बला है। वह घूमते-घूमते तंग आ गया था, फिर भी हाथ-पाँव तोड़कर बैठ जाने को उसका जी न चाहता था। उस जंगल से एक पगडंडी सीधी शहर की ओर जाती थी। भेड़िए ने सोचा कि चलो जंगल में बसर न चला तो शहर ही चलें। हो सकता है कि वहाँ पेट भरने का कोई मौक़ा निकल आए। यह सोचकर वह उस पगडंडी पर हो लिया।

वह अभी थोड़ी ही दूर गया होगा कि एक मोटे-ताज़े पालतू शिकारी कुत्ते से उसकी भेंट हो गई। कुशल-मंगल पूछने के बाद कुत्ते ने भेड़िए से पूछा—'भई, यह क्या हाल बना रक्खा है! कुछ बीमार हो क्या?'

भेड़िए ने ठंढी साँस भरकर कहा—'हाँ, बीमार हूँ। लेकिन मेरे रोग का कोई इलाज नहीं।

कुत्ते ने कहा—'आख़िर, बताओ तो क्या शिकायत है?'

भेड़िए ने जवाब दिया—'बेकारी और भुखमरी! दोस्त, जिस अभागे को चार-चार दिन खाने को न मिले, वह अगर सूखकर हड्डियों का ढाँचा न हो जाय तो और क्या हो! हाल यह है कि जब से तुम्हारी भावज गुज़री हैं, मैं अकेला रह गया हूँ। पहले दोनों मिलकर शिकार किया करते थे और बुरे-भले गुज़र चल जाती थी। पर जब से उसे मौत ने दबोचा, मुझ पर वह संकट आया कि भगवान् दुश्मन पर भी न डालें। एक तो भिट से निकलने को ही जी नहीं चाहता, और अगर पेट से तड़पकर निकलता भी हूँ तो हाथ-पाँव में इतना दम नहीं कि शिकार कर सकूँ। मरनेवाली क्या मरी, मुझे भी मार गई!'

कुत्ते ने भेड़िए की यह कहानी सुनी तो उसे बहुत रंज हुआ। उसने उसे दिलासा देते हुए कहा—'ख़ैर, मरनेवाली का रंज कब तक मनाओगे! जो नसीब में लिखा था हो गया। अब मेरी सलाह मानों तो एक बात कहूँ।'

भेड़िए ने कहा—'वाह, नेकी और पूछ-पूछ!'

कुत्ते ने कहा—'जंगल को लात मारो और मेरे साथ शहर को चलो। मैं जिसके यहाँ रहता हूँ, वह बड़ा मालदार और अमीर आदमी है। तुम मेरी जो हालत देख रहे हो, यह सब उसकी ही दया का फल है। सुबह को बढ़िया कलेवा,

दोपहर को पेटभर खाना, शाम को मोटर की सैर और रात को नरम गद्दों पर आराम। शानदार कोठी, उस पर नौकर-चाकर भी! अब बताओ, इससे ज़्यादा और क्या चाहिए! ज़िन्दगी ज़िन्दगी बन जायगी भाई!'

भेड़िए ने अचरज से पूछा—'और काम?'

कुत्ते ने कहा—'काम! अजी, काम ही क्या है! मालिक के यहाँ पहरा देना। हर नए आदमी को आते देखकर भूँक देना, गुर्रा देना! मालिक ने समझा बड़ा चौकस है और बस!'

भेड़िए ने कहा—'अजी, यह तो बहुत ही मामूली काम है। मैं खुद जंगल में गँवारों की तरह रहने-सहने, शिकार के लिए धक्के-मुक्के खाने, भिट में सिर छिपाए पड़े रहने और शेर की टहलचाकरी करने से तंग आ गया हूँ। भगवान् के नाम पर तुम मुझे इस तकलीफ़ से छुटकारा दिलाओ।'

कुत्ते ने कहा—'अच्छे काम में देर क्यों की जाय! तुम अभी मेरे साथ चलो।'

कुत्ता और भेड़िया दोनों शहर की ओर चल पड़े। रास्ते में भेड़िए ने अपने साथी से शहर के हाल पूछना शुरू किया। कुत्ते ने कहा—'सुनो, शहर की ज़िन्दगी तुम्हारे देहात से बिल्कुल अलग होती है। गाँव में दिन को चहल-पहल रहती है और शहर में रात को। गाँव में पैदल चलना अच्छा समझा जाता है और शहर में बुरा। गाँव में आदमी रोटी खाते हैं और शहर में रोटी आदमी को खाती है। गाँव में काम हैं आदमी नहीं, और शहर में आदमी हैं काम नहीं। गाँव में तंदुरुस्ती ही खूबसूरती मानी जाती है और शहर में हमेशा कुछ-न-कुछ दवा खाते रहना ही फ़ैशन में गिना जाता है। यों समझो कि शहर और देहात में वही भेद है, जो दिन और रात में होता है। फिर भी मेरे भाई, शहर शहर है, गाँव गाँव!'

भेड़िया इन बातों को कुछ तो समझा और कुछ बिल्कुल न समझा। लेकिन वह चुप रहा। चलते-चलते अचानक उसकी निगाह कुत्ते की गर्दन पर पड़ी, जिसमें सुनहरे काम का एक पट्टा पड़ा हुआ था। भेड़िए को यह देखकर बहुत अचरज हुआ और उसने कुत्ते से पूछा—'दोस्त, गले में यह कंठा कैसा पहने हुए हो?'

कुत्ते ने जवाब दिया—'यह कंठा नहीं, पट्टा है।'

भेड़िए ने कहा—'कंठा हो या पट्टा, पर बताओ कि इसे तुम क्यों पहने हो।'

चलते-चलते उसकी निगाह कुत्ते की गर्दन पर पड़ी, जिसमें सुनहरे काम का एक पट्टा पड़ा हुआ था..................
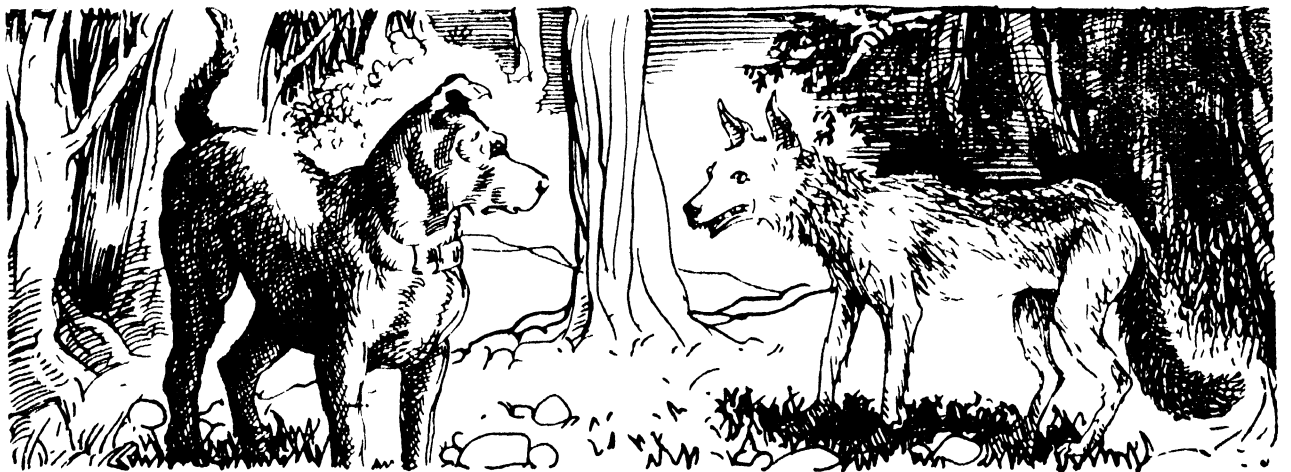
कुत्ते ने कहा—इसमें ज़ंजीर बाँधी जाती है।'

भेड़िए ने कहा—'क्यों?'

कुत्ते ने जवाब दिया—'इसलिए कि मैं अपने मालिक से जान छुड़ाकर भाग न सकूँ।'

भेड़िए को यह सुनकर गुस्सा आ गया और वह बिगड़कर कहने लगा—'वाह दोस्त, वाह! क्या तुम मुझको भी अपनी तरह क़ैदी बनाने के लिए लिये जा रहे हो? क्या यही दोस्ती है?'

कुत्ते ने कहा—'बिगड़ो मत दोस्त! ज़ंजीर गले में पहनने से क्या होता है, यह तो सोचो! इसके मुक़ाबले में आराम कितना मिलता है?'

भेड़िए ने कहा—'ऐसे आराम को दूर से सलाम! सबसे बड़ा आराम है अपनी आज़ादी। इस ग़ुलामी के आराम से तो जंगल की तकलीफ़ की ज़िंदगी लाख दर्जे अच्छी है, जहाँ मैं किसी का चाकर तो नहीं! अच्छा विदा!'

भेड़िया वापस अपने जंगल की ओर चल दिया और शहर का कुत्ता उसे अचरज से देखता ही रह गया!

जैसी करनी वैसी भरनी

एक गहरे कुएँ में बहुत-से मेंढक रहते थे और वह कुआँ रात-दिन उनकी टर-टर की आवाज़ से गूँजता रहता था। इन मेंढकों का एक राजा भी था, जो बहुत बूढ़ा हो चुका था और उसके बुढ़ापे की वजह से उसकी रियाया उसके कहने पर न चलती थी। जब तक वह जवान और ताक़तवर था, सब मेंढक उसके नाम से थर्राते थे; लेकिन कमज़ोरी और बुढ़ापे ने उसे इन सबकी निगाह में नीचा बना दिया था। यह बात उस बेचारे को बहुत बुरी लगती थी। वह जब अपनी रियाया को अपनी परवा न करते देखता तो जी ही जी में बहुत कुढ़ता। मगर करता क्या? कमज़ोर और बेबस कर ही क्या सकता है?

एक दिन वह जी बहलाने के लिए कुएँ से बाहर निकला और अभी थोड़ी ही दूर फुदकता-फुदकता गया होगा कि उसने दूर से एक काले नाग को बिल से सिर निकालते देखा। उसने सोचा कि 'अगर यह साँप मेरा दोस्त बन जाय तो फिर से मैं

एक गहरे कुएँ में बहुत-से मेंढक रहते थे और वह कुआँ रात-दिन उनकी टर-टर की आवाज़ से गूँजता रहता था। इन मेंढकों का एक राजा भी था, जो बहुत बूढ़ा हो चुका था ....
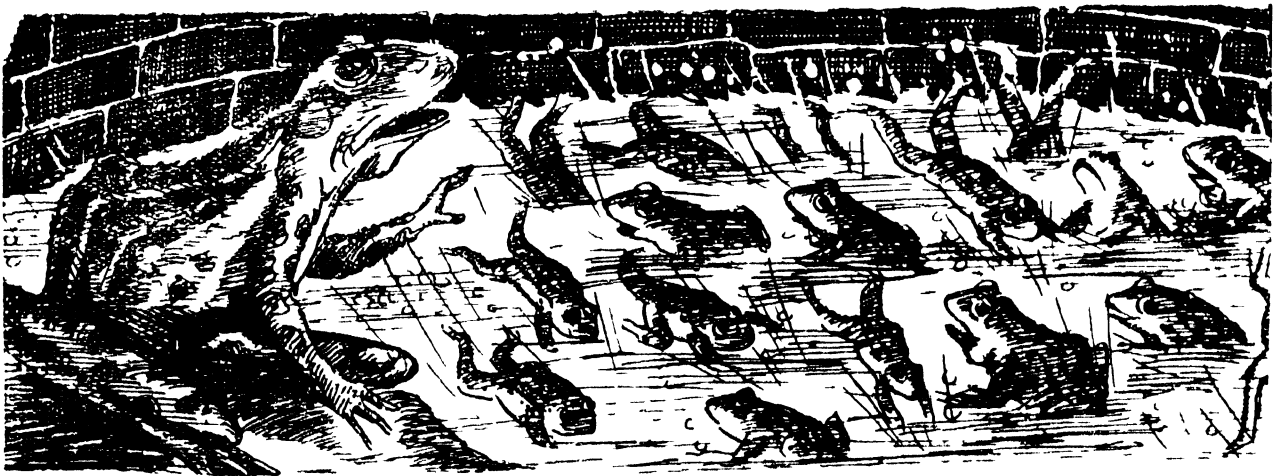
अपनी रियाया पर हुकूमत करने लगूँगा। मैं इसे अपना मेहमान बनाऊँगा और इसे मेरे साथ देखकर मेरी सारी रियाया काँप जायगी। मैं रोज़ एक मेंढक उसके लिए तय कर दूँगा और चुन-चुनकर उन्हीं मेंढकों को उसके हवाले कर दूँगा जो मेरे ख़िलाफ़ बलवा फैलाने की कोशिश करते हैं।'

यह सोचता हुआ वह मेंढक आगे बढ़ा और नाग के बिल के पास पहुँचकर उसने पुकारा—'नागराज !'

साँप ने जो यह एक नई आवाज़ सुनी तो उसे बड़ा अचरज हुआ। उसने बिल ही में से जवाब दिया—'कौन हो तुम ! और मुझे क्यों पुकार रहे हो ?'

'मैं मेंढकों का राजा हूँ', मेंढक ने जवाब दिया, 'और तुम्हें अपना दोस्त बनाना चाहता हूँ।'

यह बात नाग की समझ में न आई। उसने कहा—'मैं एक ज़बर्दस्त नाग हूँ और तुम जानते हो कि नाग मेंढकों को ज़िन्दा नहीं छोड़ता। फिर मैं नहीं समझता कि तुम मुझे अपना दोस्त क्योंकर बना सकते हो।'

'मैं तुम्हें बहुत अच्छी तरह अपना दोस्त बना सकता हूँ', मेंढक ने कहा, 'और इसीलिए मैं तुम्हारे पास एक विनती करने आया हूँ। मुझे उम्मीद है कि तुम मेरी मदद करोगे।'

नाग ने कहा—'मुझे क्या मदद करनी होगी ?'

मेंढक ने कहा—'मैं मेंढकों का राजा हूँ। मैं अपनी रियाया के हाथों बहुत तंग आ चुका हूँ। वह मुझसे फिर गई है और मेरा हुक्म बिल्कुल नहीं मानती। अगर तुम मेरे साथ रहोगे तो वह फिर मुझसे दबने लगेगी।'

नाग ने कहा—'यह तो ठीक है, लेकिन मेरे और तुम्हारे बीच भाईचारा क्योंकर हो सकता है ! और अगर हो गया तो निभेगा कितने दिन ?'

मेंढक ने जवाब दिया—'भाई ! ज़रूरत अनजान लोगों को भी एक दूसरे के साथी बना देती है। दुनिया में सैकड़ों बातें ऐसी होती रहती हैं। अभी कुछ दिन पहले की बात है। पास के जंगल में एक कोयल ने कौए की दुश्मनी से तंग आकर तुम्हारी ही बिरादरी के एक ज़हरीले साँप से दोस्ती गाँठ ली और साँप ने ज़रूरत से बेबस होकर उस काली-कलूटी कोयल को अपना दोस्त बना लिया।'
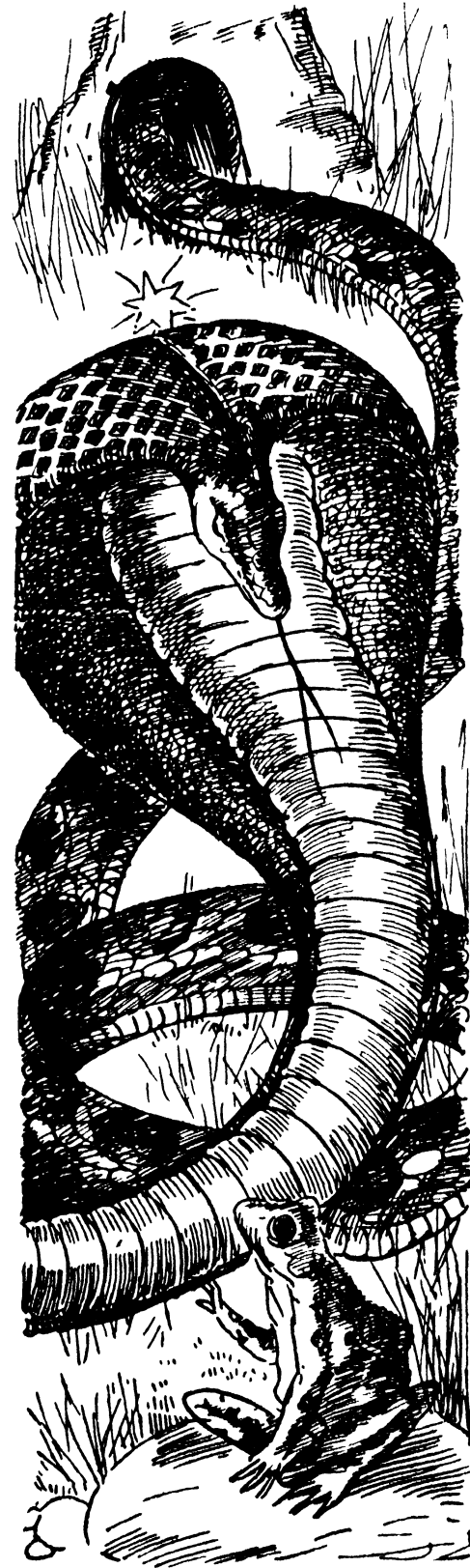
मेंढक ने कहा—'मैं मेंढकों का राजा हूँ। मैं अपनी रियाया के हाथों बहुत तंग आ चुका हूँ। वह मुझसे फिर गई है और मेरा हुक्म बिल्कुल नहीं मानती। अगर तुम मेरे साथ रहोगे तो वह फिर मुझसे दबने लगेगी…'

नागराज ने कहा—'भई! यह तो बहुत अचरजभरी बात है, जो तुमने मुझे सुनाई! क्या मैं तुमको पूरी कहानी सुनाने की तकलीफ़ दे सकता हूँ? अजीब दिलचस्प मामला है यह तो!'

मेंढक ने कहा—'जी हाँ, सुनिए। पास के जंगल में एक आम के पेड़ पर एक कोयल रहती थी। वह जब भी अंडे देती, एक कौआ उड़ता-उड़ता आता और उन्हें तोड़कर उड़ जाता। कोयल उस दुष्ट कौए के हाथों तंग आ गई थी। एक दिन बहुत-सी कोयलें उस कौए पर झपटीं। ख़ूब गुत्थमगुत्था हुई। ख़ूब नोक-पंजे चले। लेकिन उस बदमाश कौए ने इस पर भी अपनी हरकत न छोड़ी। मौक़े से उसी पेड़ के नीचे एक बड़ा ज़बर्दस्त साँप भी रहता था, जो कई सौ बरस का बूढ़ा था। वह बुढ़ापे के कारण बहुत कमज़ोर हो गया था। उसे अब आँखों से बहुत कम दिखाई देता था। ऐसी बेबसी में उसे शिकार कहाँ से मिलता? अगर वह कभी बिल से सिर निकालता तो वही कौआ तीर की तरह उस पर झपटता और उसके फन के आसपास उड़ने लगता था। कौआ समझ चुका था कि अब यह साँप किसी काम का नहीं रह गया था। अगर किसी तरह उसकी आँखें फोड़ दी जायँ तो सिर पटक-पटककर मर जायगा और सब खटका दूर हो जायगा। उस साँप में न अब झपटने की ताक़त थी और न चोंट करने की। इसलिए वह बेचारा बल खाकर रह जाता और फिर अपने बिल में चला जाता। वह चाहता था कि किसी तरह इस दुष्ट कौए से पिंड छूटे! कोयल साँप और कौए की यह आपस की लागडाँट जानती थी। आख़िरकार एक दिन वह डरते-डरते साँप के पास आई और उसको अपना दुःख-दर्द सुनाया। साँप ने कहा, क्या करूँ मेरा बस नहीं चलता; दुष्ट दाँव पर नहीं चढ़ता; अगर एक बार भी मेरे हाथ लग जाय तो कच्चा ही चबा जाऊँ। कोयल ने कहा, इसकी तरकीब यह है कि आप मेरे घोंसले में छिपकर बैठ जाइए; जब कौआ अंडे तोड़ने अन्दर घुसेगा तो आसानी के साथ मार खा जायगा। साँप ने यह बात मान ली और इस तरह दोनों ही को उस दुष्ट कौए से छुटकारा मिल गया। सुना आपने, ज़रूरत किस तरह एक दूसरे को साथी बना देती है?'

नाग ने कहा—'यह बात तो ठीक है। पर कुएँ में मेरे खाने-पीने का क्या इंतज़ाम होगा?'

साँप ने कहा—'यह धोखा किसी और को देना। मालूम होता है कि मेरे पंजे से तुम निकल भागना चाहते हो! मगर ऐसा नहीं हो सकता। तुम मेरी आँखों में धूल नहीं झोंक सकते।' यह कहकर नागराज ने उस मेंढकों के राजा को अपने मुँह में दबोच लिया...

मेंढक ने कहा—'नागराज, आप इसकी चिन्ता न करें। हर दिन एक मोटा-ताज़ा मेंढक आपको खाने के लिए मिला करेगा। लेकिन शर्त यह है कि आप मुझे और मेरे बाल-बच्चों को कोई नुक़सान न पहुँचाएँ।'

नागराज थोड़ी देर तक गर्दन नीचे डाले सोचता रहा कि 'मैं अब बुड्ढा हो गया हूँ। शिकार करने की ताक़त दिन पर दिन हवा होती जाती है। अच्छा है, इस बेवक़ूफ़ मेंढक से दोस्ती कर शिकार के झंझट से छूट जाऊँ। आख़िर इसमें मेरा हर्ज ही क्या है!' यह सोचकर उसने अपना सिर उठाया और मेंढक से कहा—'अच्छा, तुम वादा करो कि मुझे भूखा न मरने दोगे।' मेंढक ने वादा किया और साँप अपने बिल से बाहर निकल आया। तब वे दोनों एक दूसरे से दोस्तों की तरह मिले और ख़ुशी-ख़ुशी कुएँ में कूद पड़े। कुएँ के मेंढकों ने जो अपने राजा के साथ एक काले नाग को आते देखा तो वे डर के मारे टर्राना भूल गए और जैसा वह बूढ़ा मेंढक कहता वैसा ही करने लगे। मेंढकों के राजा ने जब अपनी रियाया पर इस तरह फिर से क़ाबू पा लिया तो मारे ख़ुशी के वह फूला न समाया। उसने साँप को हमेशा के लिए अपना मेहमान बना लिया और हर दिन एक मेंढक उसको देना तय कर दिया।

पर एक दिन आया जब कि कुएँ के सभी मेंढक धीरे-धीरे साँप की भेंट चढ़ गए और अब उसके खाने के लिए कुछ न रहा! एक-दो दिन तो वह मन मारकर पड़ा रहा, लेकिन कब तक इस तरह मन मसोसकर रहता? पेट की आग बुरी बला है। जब वह भूख से विकल हो गया तो बूढ़े मेंढक को उसने अपने पास बुलाया और उससे बोला—'तुमने वादा किया था कि मैं तुम्हें कभी भूखा नहीं मरने दूँगा। अब बताओ, मैं क्या करूँ? दो दिन से एक कौर तक मेरे मुँह में नहीं पहुँचा।'

मेंढक ने नाग की यह बात जो सुनी तो वह मन में बहुत घबड़ाया और सोचने लगा कि बेकार ही मैंने इस साँप को बुलाकर मानों अपनी मौत को न्यौता दिया! पर वह था बहुत चालाक। उसने साँप से कहा—'वाह दोस्त, तुम इतने ही में घबड़ा गए! मैं अभी बाहर जाकर नए मेंढकों को बसाने के लिए कुएँ में लाता हूँ। जब वे आ जाएँगे तो तुम फिर मौज करना।'

साँप ने कहा—'यह धोखा किसी और को देना। मालूम होता है कि मेरे पंजे से तुम निकल भागना चाहते हो! मगर ऐसा नहीं हो सकता। तुम मेरी आँखों में धूल नहीं झोंक सकते।' यह कहकर नागराज ने मेंढकों के उस राजा को अपने मुँह में दबोच लिया।

सच है, जो दूसरों के लिए कुआँ खोदता है, वह ख़ुद औंधे मुँह उस गड्ढे में गिरता है!

साथी वही जो वक़्त पर काम आए

एक आदमी कहीं दूर की सफ़र के लिए रवाना हुआ। चलते समय उसकी बुड्ढी माँ कहने लगी—'बेटा, इतनी दूर जा रहे हो; रास्ते में कोई-न-कोई साथी ज़रूर होना चाहिए।'

उसने कहा—'माताजी, सफ़र में अपना आपा सँभालना मुश्किल होता है और कई बार तो साथी से उल्टी तकलीफ़ बढ़ जाती है।'

बुढ़िया ने कहा—'लेकिन कभी-कभी आड़े वक़्त उससे मदद भी मिलती है।'

माँ की ममता का ख़याल करके आख़िर वह चुप हो रहा। बुढ़िया ने एक नेवला पाल रक्खा था, जो उससे बहुत हिला हुआ था। वह बहुत तगड़ा और होशियार था और बुढ़िया ने उसे बहुत-कुछ सिखाया-पढ़ाया था। उस नेवले को अपने लड़के के हवाले करते हुए उसने कहा—'इसे तुम अपनी सफ़र में किसी समय भी अलग न करना!'

उसने नेवले को उठाकर अपनी झोली में डाल लिया और माता के पैर छूकर वह अपनी सफ़र के लिए चल दिया। राह में बार-बार उसे यह विचार आता था कि माता ने साथी भी दिया तो क्या—एक नेवला, जो न बातें करके जी बहला सकता है और न समय पर किसी काम में हाथ बँटा सकता है! लेकिन माँ की मर्ज़ी उसे पूरी करना थी, इसलिए उसने उस नेवले का साथ न छोड़ा। चलते-चलते जब दोपहर हो गई तो आराम करने के लिए वह एक पेड़ के नीचे लेट गया। पास ही नेवला भी बैठ गया। कुछ देर बाद जब उसकी आँख खुली तो वह चौंककर उठ खड़ा हुआ। वह क्या देखता है कि उसके पाँव के पास एक बड़ा विषैला काला नाग मरा पड़ा है और पास ही नेवला उसकी चौकसी कर रहा है! फ़ौरन् वह ताड़ गया कि ज़रूर यह साँप, जब वह नींद में था, तब उसे डसने के लिए ही आया होगा, पर नेवले ने अपनी जान पर खेलकर उसका काम तमाम कर दिया। उसने परमात्मा को धन्यवाद दिया और अब उसे अपनी माँ की दूरंदेशी समझ में आई। वह कहने लगा कि बड़े-बूढ़े जो कुछ करते हैं, सोच-समझकर ही करते हैं।

उसने देखा कि नेवले के बदन पर यहाँ-वहाँ कई घाव हैं, जो साँप के साथ लड़ाई लड़ते समय उसे लगे हैं। वह सोचने लगा कि अब साँप का ज़हर इस नेवले के बदन में दौड़ जायगा और यह बेचारा मर जायगा। यह सोचकर वह रंज करने लगा। थोड़ी देर में उसने देखा कि उस नेवले के मुँह में एक बूटी दबी है और वह उसे उन घावों पर मल रहा है! जहाँ-जहाँ वह उस बूटी को मलता था, घाव अच्छे होते जाते थे! इस तरह उस विष का असर बात की बात में दूर हो गया! यात्री ने सोचा कि यह एक नई बात मालूम हुई! वह फ़ौरन् झाड़ी में घुसा और वहाँ से उसी तरह की जड़ी-बूटी उखाड़कर उसने अपने थैले में भर ली और तब आगे को रवाना हुआ।

इस तरह मंज़िलें तय करता हुआ वह चला जा रहा था कि एक दिन एक ऐसी रेतीली जगह में वह जा पहुँचा, जहाँ दूर-दूर तक किसी तालाब या झील का नामोनिशान न था। उसे बड़े ज़ोर से प्यास लग रही थी और उसका गला सूखा जा रहा था। नेवला भी प्यास के मारे हाँफ रहा था। आख़िर थककर वह एक रेत के टीले से लगकर बैठ गया और नेवले को उसने झोली से बाहर निकाल दिया। उसने देखा कि नेवला यहाँ-वहाँ रेत को सूँघता फिर रहा है। उसे अचंभा हुआ कि आख़िर इस रेतीली ज़मीन में यह किस चीज़ की खोज में है! थोड़ी देर में उसने देखा कि नेवला रेत में एक जगह एक बहुत बड़ा गड्ढा बना रहा है। यात्री सोच में पड़ गया। अब नेवला उस गड्ढे से

फ़ौरन् वह ताड़ गया कि ज़रूर यह साँप जब वह नींद में था तब उसे डसने के लिए ही आया होगा.............................।

यात्री ने ज़ोर लगाकर उस पत्थर को जो निकाला तो ठंडे पानी का एक सोता नीचे से उबल पड़ा……..

बाहर निकला और यात्री की धोती दाँतों में पकड़कर उसे चलने का इशारा करने लगा। यात्री उठकर नेवले के पीछे हो लिया और उसने उस गड्ढे में झाँककर देखा। वह बहुत गहरा था और एक पत्थर से ढका हुआ था। यात्री ने ज़ोर लगाकर उस पत्थर को जो निकाला तो ठंडे पानी का एक सोता नीचे से उबल पड़ा! यात्री नेवले की समझ पर अचरज करने लगा, साथ ही मन ही मन अपनी माँ को उसकी दया के लिए धन्यवाद भी देने लगा। उसने जी भरकर पानी पीया और नहा-धोकर वह फिर से ताज़ा हो गया। नेवले ने भी अपनी प्यास बुझा ली और तब शाम को वे दोनों फिर वहाँ से रवाना हो गए।

चलते-चलते वह यात्री एक ऐसे शहर के पास पहुँचा, जो बहुत शानदार और बड़ा था, किन्तु जहाँ के रहनेवाले सभी लोग बेचैन और दुःखी दिखाई दिए। यात्री को अचंभा हुआ कि आख़िर इन लोगों पर ऐसी क्या आफ़त आ पड़ी है, जो इस तरह ये सब रंजीदा दिखाई देते हैं! जब पूछा तो लोगों न उसे बताया कि यहाँ की राजकुमारी अपने बग़ीचे में फूल चुन रही थी कि उसे एक काले नाग ने काट लिया। तब स वह बेहोश पड़ी है। उसका सारा बदन ज़हर से नीला हो गया है। वह न बोलती है, न आँख खोलती है। शहर के सभी वैद्य, हक़ीम और झाड़-फूँक करनेवाले दवाओं और मंत्रों से ज़हर उतारने की कोशिश कर चुके। लेकिन कोई फ़ायदा नहीं हुआ।

यह सुनते ही यात्री को अपनी जड़ी-बूटी का ध्यान आया और वह सीधे राजा के महल की ओर लपका। बहुत कोशिश करने पर वह राजा के पास तक पहुँच पाया। वहाँ जाकर जब उसने कहा कि 'मैं राजकुमारी का इलाज करूँगा' तो पहले तो सब काई उसका मुँह ताकने लगे, पर आख़िर राजा ने कहा—'अच्छा, तुम भी अपनी दवा परख लो।' यह कहकर वह उसे लेकर महल के उस कमरे में पहुँचा जहाँ राजकुमारी बेसुध पड़ी थी। यात्री राजकुमारी के पास बैठ गया और उसने अपनी झोली म से नेवले को निकालकर कुछ इशारा किया। वह उछलकर पलंग पर चढ़ गया और राजकुमारी के बेहोश बदन को यहाँ-वहाँ सूँघने लगा। सूँघते-सूँघते वह एक

सूँघते-सूँघते वह एक जगह रुक गया और बूटी को मुँह में दबाकर वहाँ मलने लगा। यही वह जगह थी, जहाँ नाग के दाँतों का निशान था। थोड़ी देर ही में राजकुमारी के पसीना आना शुरू हुआ और पंद्रह मिनट के बाद तो वह पसीने से मानों नहा गई। इस तरह उसके बदन का सारा ज़हर पसीने की राह निकल गया...... ....

जगह रुक गया और बूटी को मुँह में दबाकर वहाँ मलने लगा। यही वह जगह थी जहाँ नाग के दाँतों का निशान था। थोड़ी देर ही में राजकुमारी को पसीना आना शुरू हुआ और पन्द्रह मिनट के बाद तो वह पसीने में मानों नहा गई। इस तरह उसके बदन का सारा ज़हर पसीने की राह निकल गया और वह आँखें खोलकर उठ बैठी! उसके आँखें खोलते ही शहर में धूम मच गई, ख़ुशी के बाजे बजने लगे और ग़रीबों को दान दिया जाने लगा। राजा ने उस अजनबी यात्री को गले से लगा लिया और कहा कि 'तुमने मेरी बच्ची की जान बचाई है, इसलिए मैं चाहता हूँ कि उसका ब्याह तुम्हारे ही साथ कर दूँ।'

यात्री ने कहा कि 'मैं अपनी माँ से पूछे बिना कोई जवाब नहीं दे सकता।' यह कहकर वह वहाँ से वापस अपने घर की ओर रवाना हो गया और जब उसे अपनी माँ की इजाज़त मिल गई तो लौटकर उसने राजकुमारी के साथ बड़ी धूमधाम से अपना ब्याह कर लिया।

इस तरह उस छोटे-से नेवले की बदौलत न सिर्फ़ उसकी दो बार जान ही बची, बल्कि उसका नसीब भी जग गया! सच है, सच्चा साथी वही कहा जा सकता है, जो आड़े वक़्त में काम आए।

छोटे मुँह बड़ी बात

कुछ मेंढ़क एक झील के किनारे दलदल में रहते थे। इनकी राजधानी में मच्छरों के अलावा और किसी की गुज़र न थी और मेंढक यह चाहते भी न थे कि कोई दूसरा यहाँ आकर क़दम रक्खे, क्योंकि जब भी कोई बड़ा जानवर उधर से गुज़रता तो एक-दो मेंढ़क उसके पाँव के नीचे ज़रूर कुचल जाते! जब कभी कोई आदमी उधर से निकलता तब तो इन बेचारों के लिए मानों मुसीबत आ जाती, क्योंकि मेंढकों से छेड़छाड़ करने और उन्हें नुक़सान पहुँचाने में आदमी को पता

नहीं क्यों बड़ा मज़ा आता है ! मेंढ़कों में अपने दुश्मन से बदला लेने की आदत नहीं होती। उन्हें किसी को सताने और किसी से लड़ने-झगड़ने से बड़ी नफ़रत होती है। वे न तो किसी को काटते हैं और न नोंचने-खसोटने की ही कोशिश करते हैं। सच तो यह है कि ऐसा करने से वे मजबूर भी होते हैं। भगवान् ने इन्हें काटने के लिए दाँत और नोंचने-खसोटने के लिए लम्बे और तेज़ नाख़ून ही नहीं दिए !

हाँ, तो उस झील के किनारे के दलदल के जिन मेंढकों का ज़िक्र हम करने जा रहे हैं, वे थे बेचारे बहुत सीधे-सादे और भोले-भाले। न उन्हें किसी से लड़ाई थी, न उन्हें घमंड ही था। बस, हर वक़्त अपनी हालत में ही वे मस्त रहते थे। उनके लिए वह झील का किनारा, लम्बी घास से ढका हुआ वह दलदल और वह गँदला बरसाती पानी, बस यही तीन चीज़ें काफ़ी थीं ! दिन भर वे घास में छिपे रहते और साँझ होते ही फुदक-फुदककर बाहर आ जाते और अपने-अपने राग छेड़ देते। हाँ, मेंढकों को यह बात बहुत बुरी लगती थी कि जब वे अपना गाना शुरू करते थे तो कुछ लम्बी टाँगोंवाले भौंड़े मच्छर भी बेसुरी तान लेकर भन-भन करने लगते थे ! उनकी यह ढिठाई देखकर मेंढक कभी-कभी मच्छरों पर धावा भी बोल देते और उन्हें चुन-चुनकर खाने लगते। मच्छरों को यह घमंड था कि आदमी तक हमसे पनाह माँगता है, फिर इन बेचारे मेंढकों की क्या बिसात है ! पर उनका यह घमंड मेंढकों के आगे चलता न था और एक ही हमले में उनकी सारी फ़ौज का सफ़ाया हो जाता था !

एक दिन एक मोटा-ताज़ा बिगड़ाऊ बैल रस्सी तुड़ाकर गाँव से भागा और रास्ते में कई खेतों का सफ़ाया करता हुआ मेंढकों की इस राजधानी में आ घुसा ! तालाब के किनारे भला हरी-हरी घास की क्या कमी थी ! दूर तक हरियाली छाई हुई थी। बैल ने जो यह बात देखी तो वह बहुत खुश हुआ और जी में कहने लगा कि 'अजी, अब यहाँ से कौन घर को लौटकर जाय ! वहाँ रक्खा ही क्या है ? दिन भर खेत जोतो, हल चलाओ, लदाई-फँदाई का काम करो, डंडे खाओ और इतना काम-काज करके रात को फिर उसी एक सड़ी जगह में बग़ैर कान हिलाए चुपके से आकर खड़े हो जाओ। और तब चबाते रहो वही मैली घास और छोटी ज्वार के सूखे हुए डंठलों की चरी ! नाराज़ होकर अगर ज़रा सींग चलाया तो फ़ौरन् पीठ पर मालिक का डंडा पड़ा और खाल उधड़ गई ! भला यह ग़ुलामी की ज़िन्दगी भी कोई ज़िन्दगी है ! हमसे तो वे छोटे-छोटे कीड़े-मकोड़े ही लाख दर्जे अच्छे है, जो चैन की बंसी बजाते हैं। भगवान् को

इसी बेसुधी में उसने जो पाँव उठाया तो उसका भारी और कड़ा खुर मेंढक के उन नरम और नाज़ुक बच्चों पर जा पड़ा……

धन्यवाद है कि उसने मुझे उस गँवार किसान के पंजे से छुड़ाकर इस हरी-भरी चरागाह में पहुँचा दिया।' यह सोच-कर बैल ने मुँह झुकाया और वह उस घास में चरने लगा। दैवयोग से जहाँ उसने मुँह मारा वहाँ पास ही हरी-भरी घास की ओट में एक मेंढक और उसका पूरा कुनबा बहुत दिनों से बसा हुआ था। मेंढक के बच्चे पानी में खेलने-कूदने के लिए अपने घर से बाहर निकल आए थे और फुदक-फुदककर मज़ा ले रहे थे। बैल घास चरने में इतना मस्त था कि उसे सुध भी न थी कि उसके खुरों के पास मेंढक के कुछ बच्चे खेल-कूद में लगे हुए हैं। इसी बेसुधी में उसने जो पाँव उठाया तो उसका भारी और कड़ा खुर मेंढक के उन नरम और नाज़ुक बच्चों पर जा पड़ा! बैल के खुर के सामने मेंढक जैसे जीव की बिसात ही क्या होती है! नन्हीं-सी जानें बैल के खुर का बोझ न सह सकीं और एक ही दबाव में ज़ख़्मी होकर कई ने उसी वक़्त दम तोड़ दिया! लेकिन उनमें से एक बच्चा किसी तरह बच गया, गोकि उसके भी चोंट काफ़ी आ चुकी थी! मेंढक के उस बच्चे ने नज़र उठाकर ऊपर देखा तो एक सफ़ेद रंग का जीता-जागता पहाड़-सा उसे चलता-फिरता नज़र आया! उसने आज तक न किसी बैल को देखा था और न इस तरह के जानवर का कभी नाम ही सुना था। डर के मारे उसके मुँह से चीख़ निकल गई! अपने भाइयों के कुचल जाने से उसके दिल पर जो बीत रही थी, उसका तो पूछना ही क्या था! उसकी आँखों के आगे अँधेरा छा गया और रंज के मारे पाँव मन-मन भर के हो गए। भाइयों की लाशें जंगल में अकेली छोड़कर जाते हुए उसका मन नहीं मान रहा था, फिर भी उस भयानक घटना की ख़बर सुनाने के लिए अपने माँ-बाप की ओर छलाँगें मारते हुए वह चला।

उसके माँ-बाप वहाँ से कुछ ही दूरी पर अपने दुश्मन मच्छरों और कीड़े-मकोड़ों की ताक में छिपे बैठे थे कि इतने में यह घायल बच्चा लँगड़ाता हुआ उनके पास पहुँचा और चिल्लाकर कहने लगा—'माँ, हाय! ग़ज़ब हो गया। तुम लुट गई! घर उजड़ गया। मेरे सारे भाइयों को एक बहुत बड़े पहाड़ जैसे जानवर ने कुचलकर मार डाला! अब क्या होगा!

इतने में यह घायल बच्चा लँगड़ाता हुआ उनके पास पहुँचा और चिल्लाकर कहने लगा—'माँ, हाय! ग़ज़ब हो गया! तुम लुट गई...'

मेरे प्यारे भाई कहाँ से आएँगे ? अब मैं किसके साथ खेलूँगा ?' यह कहकर वह रोने-पीटने लगा। उसके माँ-बाप यह ख़बर सुनकर अपना होश भूल गए। दुनिया उनकी आँखों में अँधेरी हो गई। माँ तो बेचारी रंज के मारे ज़मीन पर औंधी गिर पड़ी। पर बाप गुस्से से लाल हो गया और सीना तानकर बोला—'कहाँ है, वह दुष्ट हत्यारा ? मैं उससे अभी अपने बेटों के खून का बदला लूँगा ?'

घायल बच्चा यह सुनकर बोला—'पिताजी, वह दुष्ट बहुत ताक़तवर है। वह अपनी एक हल्की-सी ठोकर से हमारी जाति के बड़े से बड़े सरदारों को भी मार सकता है !'

मेंढक ने कहा—'कुछ भी हो, मैं उसका ज़रूर सामना करूँगा !'

बच्चे ने कहा—'वह बहुत बड़ा है, आपसे बहुत बड़ा !'

मेंढक फूलकर कहने लगा—'क्या इतना बड़ा ?'

बच्चे ने कहा—'जी नहीं, इससे भी बड़ा !'

यह सुनकर मेंढक और चिल्लाया—'क्या इतना बड़ा ?'

बच्चे ने जवाब दिया—'अजी, इससे भी बड़ा !

तब मेंढक थोड़ा-सा और फूल गया और बोला - 'क्या इतना बड़ा है वह ?'

बच्चे ने ज़ोर देकर कहा—'वह इससे बहुत बड़ा है, पिताजी !'

अब मेंढक ने पूरी ताक़त से अपने बदन को फुलाया। उसके नथुने लाल हो गए। सारा बदन रबड़ के गुब्बारे की तरह फूल गया। आँखें बाहर को निकलने लगीं। लेकिन जिस तरह ज़्यादा हवा भरने से रबड़ का गुब्बारा फट जाता है, उसी तरह अपने बदन को हद से ज़्यादा फुलाने की कोशिश में उस बेचारे मेंढक का पेट फट गया और वह छोटे मुँह बड़ी बात करने की कोशिश में अपने बेटों के हत्यारे से बदला लिये बिना ही इस दुनिया से सिधार गया !

नीला गीदड़

किसी जंगल में एक गीदड़ रहता था—बड़ा नटखट और चलतापुर्ज़ा, हद दर्जे का बातूनी और बेहद चालाक ! लोमड़ियाँ भी उसका लोहा मानती थीं। एक दिन यह हुआ कि उस गीदड़ की जो आफ़त आई तो वह शहर की तरफ़ चल दिया। वह कुछ ही दूर पहुँचा होगा कि उसे नील का एक कारख़ाना मिला, जहाँ बड़े-बड़े हौज़ों में नील भरा हुआ था। गीदड़ के जी में भगवान् जाने क्या समाई कि वह एक हौज़ पर चढ़ गया और चढ़ते ही जो उसका पाँव फिसला तो वह धड़ाम से जा गिरा उस हौज़ के अन्दर ! उसका सारा बदन रंग में लथपथ हो गया ! दूर से रंगरेज़ ने जब देखा कि हौज़ में कोई चीज़ गिरी है तो वह दौड़ा, और आकर उसने जो नज़र दौड़ाई तो एक गीदड़ को उस हौज़ में डूबते-उतराते पाया ! उसने फ़ौरन् एक रस्सी फेंकी। गीदड़ के होश हवा हो चुके थे, फिर भी 'डूबते को तिनके का सहारा काफ़ी होता है'! उसने फ़ौरन् रस्सी को पकड़ लिया। रंगरेज़ ने रस्सी को धीरे-धीरे ऊपर खींच लिया और गीदड़ हौज़ से इस तरह बाहर निकला जैसे दूध में से मक्खी। रंगरेज़ ने इतनी दया की कि लाठी नहीं पकड़ी और सिर्फ़ लातें मारकर ही उसे भगा दिया।

जब सिर से पैर तक नीले रंग में तर होकर गीदड़ बाहर निकला तो वह मानों एक बड़ा-सा नीलकंठ बन गया था। रंग का पानी उसके पेट में भी घुस गया था, पर अभी उसकी मौत नहीं आई थी। वह देर तक ज़मीन पर चिपका पड़ा रहा और थोड़ी देर में जब उसके होश-हवास दुरुस्त हुए तो उसने अपने बदन पर नज़र दौड़ाई। पहले उसे अपना रंग भूरा

और भद्दा मालूम होता था। अब जो अपने चटकीले रंग को उसने देखा तो ख़ुद वह हैरान् हो गया। ऐसा तेज़ नीला रंग कि जिसे देखकर आसमान भी शरमाए और मोर भी सर झुकाए ! गीदड़ ने अपने इस नए रंग को देखकर सोचा कि इस हुलिया में जब जंगल को जाऊँगा तो मुझे कोई पहचान न सकेगा कि मैं कौन हूँ, क्योंकि ऐसा चोखा रंग-रूप भगवान् ने न लोमड़ियों को दिया है और न चीतों को। तब क्यों न अपने रंग से फ़ायदा उठाऊँ? कोई कह गए हैं कि हल्दी लगे न फिटकरी और रंग चोखा हो ! यही मेरे साथ हुआ कि भगवान् ने नील के हौज़ में गिराकर मामूली गीदड़ के बजाय मुझे एक ऐसा जानवर बना दिया, जिसकी बराबरी का दूसरा जानवर जंगल भर में नहीं मिल सकता !'

गीदड़ यह तय करके उस जगह से उठा और धीरे-धीरे अपने जंगल की ओर रवाना हुआ। कुछ ही दूर चलने पर गाँव के कुत्तों से उसका सामना हो गया। वे इसे देखकर लपके, पर पास आकर जब उन्होंने गीदड़ की जाति के इस जानवर को इस रंग-रूप में देखा तो वे डर गए, और यह सोचकर कि यह न मालूम किस जंगल का बादशाह या राजकुमार है, उन सब ने भूँकना बन्द करके दुम दबाई और भाग निकले ! गीदड़ यह तमाशा देखकर बहुत ख़ुश हुआ और कहने लगा कि अब सचमुच मैं कुछ हो गया हूँ !

वह इन्हीं विचारों में डूबा हुआ चला जा रहा था कि उसकी एक लोमड़ी से मुठभेड़ हो गई। उसने फ़ौरन् उसे झुककर सलाम किया और रास्ता कतराकर निकल गई। चलते-चलते एक भेड़िए से भी मुलाक़ात हुई। पहले तो वह ग़ुर्राया पर बाद में उसने भी गर्दन डाल दी। गीदड़ ने देखा कि राह में जो भी जानवर मिलता है, वह उसके रोब में आ जाता है, तो फिर क्यों न जंगल में अपनी बादशाहत का ही एलान कर दिया जाय ! यह फ़ैसला करके वह वन में घुसा और एक ऊँचे टीले पर चढ़ गया। जंगल के सब जानवर उसे देखकर इकट्ठा हो गए। वे हैरान् थे कि यह कौन है ! गीदड़ ने पहले इकट्ठा हुए जानवरों पर एक नज़र दौड़ाई और फिर धीरे से बोलते हुए कहने लगा कि 'मुझे वन की देवी ने अपने हाथों से रँगा है और रँगकर तुम्हारा बादशाह बनाया है। ज़रा मुझे देखो और फ़ैसला करो कि तुमने जंगल में इस रंग का कोई जानवर देखा है?' सब ने जवाब दिया कि 'आज तक हमारी आँखों से ऐसा कोई जानवर नहीं गुज़रा !'

फिर गीदड़ ने पूछा कि 'तुम्हें मेरी हुकूमत से कोई इन्कार है?' सब ने कहा कि 'जब वन की देवी ने आपको हमारा बादशाह बना दिया तो फिर हमें इन्कार क्यों होगा?' मतलब यह कि सब ने दुमें दबा-दबाकर उसकी हुकूमत मानने का क़रार किया।

गीदड़ के जी में भगवान् जाने क्या समाई कि वह एक हौज़ पर चढ़ गया और चढ़ते ही जो उसका पाँव फिसला तो वह धड़ाम से जा गिरा उस हौज़ के अंदर..............................
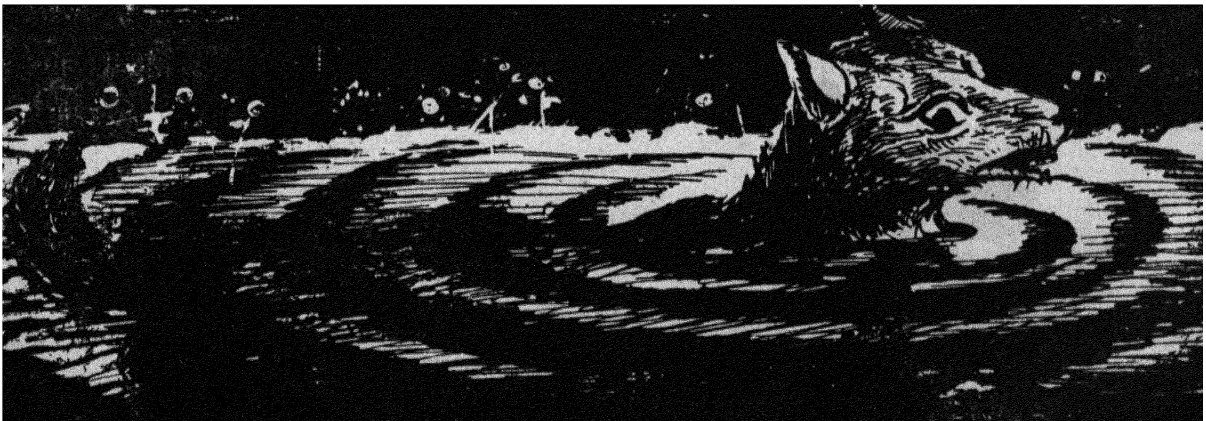
यह फ़ैसला करके वह वन में घुसा और एक ऊँचे टीले पर चढ़ गया। जंगल के सब जानवर उसे देखकर इकट्ठा हो गए……

इस जंगल का असली पुराना बादशाह एक शेर था, जो अब बहुत बुड्ढा और कमज़ोर हो चुका था। उसके कोई संतान न थी। उसने जो यह बात सुनी तो कहने लगा कि 'वन की देवी ने मुझ पर दया की कि एक ऐसे अनोखे जानवर को जंगल का बादशाह बना दिया, वरना मुझे तो यह फ़िक्र थी कि मेरे बाद मेरी गद्दी उजाड़ हो जायगी! अब मेरा यह फ़र्ज़ है मैं भी इस बादशाह की हुकूमत मंज़ूर कर किसी गुफ़ा में पड़ा रहा करूँ और अपनी बाक़ी उम्र पूजा-पाठ और भगवान् की याद में गुज़ारूँ।' इस तरह उस शेर ने भी इस गीदड़ का दबदबा क़बूल कर लिया और इसके बाद सारा जंगल इसके हाथ में आ गया।

गीदड़ ने यह बात फैला दी थी कि असली में वह नीलम परी का बेटा है और वन की देवी ने उसे गोद ले लिया है। इसलिए सब जानवर उसे 'नीलम परी का लाल' कहकर पुकारने लगे। परंतु उसके असली भाईबंद गीदड़ उसे अच्छी तरह पहचान चुके थे। उससे वे बहुत जलने लगे थे और यह भी उनसे बहुत कठोरता के साथ पेश आता था। आख़िर जल-भुनकर उन्होंने एक दिन एक जलसा किया और इस जलसे में एक नौजवान गीदड़ ने उठकर कहा कि 'भाइयो और बहनो, यह बहुरूपिया दुनिया भर को चकमा दे सकता है, मगर हम इसके धोखे में नहीं आ सकते। हम तो इसकी नस्ल जानते हैं, दाई से पेट छिपाना बेकार है! यह अपने गीदड़पने को छिपा नहीं सकता। अगर आज इस जंगल के सब जानवरों को मालूम हो जाय कि इस जंगल का बादशाह नीलम परी का पूत नहीं बल्कि एक गीदड़ है, जो शहर से यह स्वाँग भरकर आया है तो वे आज ही इसे कान पकड़कर जंगल से निकाल दें! हमें शेर की हुकूमत मंजूर है, मगर इस धोखेबाज़ का रोब हम नहीं बर्दाश्त कर सकते। इसलिए कोई ऐसी तरकीब करो कि इसका भेद खुल जाए और पीतल की अँगूठी पर यह जो सोने का झोल चढ़ाया गया है वह उतर जाए।'

तमाम गीदड़ों ने कहा कि 'बात तो तुम्हारी सही है, पर ऐसी क्या तरकीब है कि जिससे इस कपटी चकमेबाज़ की पोल खुले? कैसे हम उसे नीचा दिखाएँ!'

एक बूढ़ा गीदड़ यह सुनकर बोला कि 'सुनो, सबसे अच्छी तरकीब यह है कि आज सब मिलकर रात को इसकी दावत करो और जब यह दावत खाने आए तो सब 'हो हो' शुरू करो । यह लाख चालाक और बहुरूपिया है, पर जब अपने भाईबन्दों को 'हो हो' करते सुनेगा तो मुमकिन नहीं कि यह हमारी आवाज़ में आवाज़ न मिलाए !'

सब ने उस राय को पसन्द किया और उस नए गीदड़ की दावत तय हो गई । न्यौता दे दिया गया।

इस दावत में गीदड़ों ने चुपके से कुछ शेरों और चीतों को भी बुला भेजा था और उनसे कह दिया था कि 'आप छिपकर तमाशा देखिए।' रात को नीला गीदड़ बड़ी शान के साथ दावत खाने आया । दावत खाने के बाद गीदड़ों ने टोलियाँ बनाई और रोना, चीखना, चिल्लाना और 'हो हो' करना शुरू किया । जब नीले गीदड़ ने सब गीदड़ों को इस तरह खाना हज़्म करते देखा तो उसे भी एकदम उसी तरह चिल्लाने की उमंग आई । उसने बहुत मन मारने की कोशिश की, मगर वह अपने को रोके न रोक सका! आख़िर वह भी बेचैन होकर 'हो हो' करने लगा और जब शेरों और चीतों ने उसकी आवाज़ सुनी तो उन्हें भरोसा हो गया कि यह नीलम परी का सपूत नहीं बल्कि एक बहुरूपिया गीदड़ ही है ! फौरन् उन्होंने उसे घेर लिया और मारपीटकर जंगल से निकाल बाहर किया !

जब नीले गीदड़ ने सब गीदड़ों को इस तरह खाना हज़्म करते देखा तो उसे भी एकदम उसी तरह चिल्लाने की उमंग आई ....

बन्दरों का राज्य

हिमालय की तराई के जंगल में एक बन्दर रहता था—बड़ा नटखट, चंचल और चालाक ! जब तक उसकी बँदरिया ज़िन्दा रही, वह मौज के साथ अपने दिन बिताता रहा । वह जानता ही न था कि दुःख क्या होता है । दिन भर वह इस पेड़ से उस पेड़ पर उछलता-कूदता रहता । ज़्यादा मज़े में आया तो उल्टा लटक जाता । उसकी इस उछल-कूद से सारे जंगल में चहलपहल मची रहती थी । लेकिन दैवयोग से एक दिन उसकी बँदरिया इस दुनिया से चल बसी और उससे बिछुड़कर इसे इतना रंज हुआ कि दुनिया एकदम उजाड़ मालूम होने लगी । उसका सारा नटखटपन हवा हो गया और वह जंगल उसकी आँखों में काँटे की तरह खटकने लगा । तंग आकर एक दिन वह उस जंगल से निकल गया ।

जी बहलाने के लिए उसने यह तय किया कि सारे हिन्दुस्तान की सफ़र की जाय और इसी तरह अपनी ज़िन्दगी के बाक़ी दिन गुज़ार दिए जाएँ । इस इरादे से जब वह जंगल के बाहर आया तो उसने एक अजीब ही दुनिया देखी । बड़ी-बड़ी सड़कें, ख़ूबसूरत शहर, रेलें, मोटरें, आदमियों की भीड़, शानदार इमारतें ! इसी तरह नए-नए ढंग की खाने-पीने की चीज़ें, उम्दा-उम्दा मिठाइयाँ, मेवे, फल भी उसने देखे ! इन चीज़ों को देखकर उसका मन बेहाल हो गया । यह बन्दर जंगल की हवा में पला था, जिसके कारण शहर के बन्दरों से वह बहुत तगड़ा और ताक़तवर था । इसलिए जिस शहर में भी

वह पहुँचता, वहाँ के बन्दर उसे फ़ौरन् अपना अगुवा बना लेते, क्योंकि वे उसका मुक़ाबिला नहीं कर सकते थे। इस तरह जहाँ-जहाँ भी वह जाता, अपने भाई-बिरादरीवालों की ओर से उसकी काफ़ी ख़ातिर की जाती और उसे ख़ूब खाने-पीने को मिलता था।

बरसों यह बन्दर इसी तरह हिन्दुस्तान में घूमता रहा और आदमियों की रहन-सहन के बारे में वह ख़ूब जानकार हो गया। अब वह एक जंगली और फूहड़ बनमानुस के बजाय एक तमीज़दार भलामानुस बन गया था। धीरे-धीरे उसने देश के कोने-कोने में घूमकर बंबई, कलकत्ता, मद्रास, कराँची, लाहौर, दिल्ली, वग़ैरह सभी शहर देख डाले और आख़िर में कुछ दिन के लिए वह एक देशी रियासत में जा टिका। वहाँ उसने राजा-महाराजाओं की शान-शौक़त देखकर मन में सोचा कि 'अगर मैं भी अपने जंगल में जाकर बन्दरों की ऐसी ही एक रियासत क़ायम करूँ और ख़ुद उसका राजा बन जाऊँ तो मेरे सभी भाईबन्दों को भी आराम पहुँचे और मेरी इन सफ़र की तकलीफ़ों की क़ीमत भी वसूल हो जाय।'

अपने मन में यह बात तय करके उस बन्दर ने उस रियासत के तमाम दफ़्तरों, महकमों, फ़ौज, पुलीस, तहसील, थाने वग़ैरह की पूरी जाँच की। फिर महाराजा के दरबार के रंग-ढंग भी उसने देखे-भाले। महाराजा किस तरह सिंहासन पर बैठते हैं, किस तरह लोग उनके सामने सिर झुकाते हैं, किस तरह उनकी हाँ में हाँ मिलाते हैं, इन तमाम बातों को उसने बहुत ग़ौर से देखा और जब वह सभी बातें अच्छी तरह जान चुका तो उसने फिर से अपने जंगल की राह ली।

शहर से जब यह बन्दर जंगल में वापस आया तो उसका दिमाग़ नई-नई बातों से भरा हुआ था और उसका स्वभाव भी बदल गया था। पहले वह मिज़ाज का तेज़ और जोशीला था। लेकिन अब उसमें बुढ़ापे के कारण नरमाई आ गई थी। जंगल में पहुँचकर उसने तमाम बन्दरों को इकट्ठा किया और उनके सामने एक लम्बा-चौड़ा भाषण दिया, जिसमें अपने सफ़र का पूरा हाल और शहर की ज़िन्दगी की ख़ूबियाँ उसने बड़ी ख़ूबी से बयान कीं और अन्त में उसने उस जंगल में वैसी ही रियासत क़ायम करने का अपना इरादा ज़ाहिर किया। जंगल के बेचारे सीधेसादे बन्दर रियासत और हुकूमत का नाम भी न जानते थे। वे सब अपने-अपने वक़्त के बादशाह थे। वे क़ायदा और क़ानून की पाबन्दी के झंझट में कब पड़नेवाले थे! लेकिन इस बन्दर ने बड़ी तरकीब से काम लिया और जंगल के उन बन्दरों में अपनी चालबा-

धीरे-धीरे उसने देश के कोने-कोने में घूमकर बंबई, कलकत्ता, मद्रास, कराँची, लाहौर, दिल्ली वग़ैरह सभी शहर देख डाले…… ………

ज़ियों से फूट डलवा दी । कुछ बन्दर उसके ख़िलाफ़ थे तो कुछ ने उसका साथ दिया । आख़िरकार उसने ऐसा जोड़-तोड़ मिलाया कि उस जंगल में बन्दरों की एक रियासत क़ायम हो ही गई और वह उसका राजा बन बैठा ।

महाराजा बनने के बाद उसने बन्दरों को बहुत-सी अलग-अलग टोलियों में बाँट दिया और टेढ़े-तिर्छे क़ायदे-कानून बनाकर उनमें मेल-मिलाप होना नामुमकिन कर दिया। जब बन्दर बहुत-सी टोलियों में बँट गए तो उसको उन पर हुक्म चलाने का मनमाना मौक़ा मिल गया । अब वह उन पर रोब गाँठते हुए बड़ी शान-शौक़त से रहने लगा । जिस दरख़्त पर उसका घर था, वहाँ बिना इजाज़त के कोई बंदर क़दम न रख सकता था । जंगल में जितने भी फल पैदा होते थे, उन पर रियाया का कोई हक़ न था । वे सब पहले राजा के पास लाये जाते थे और वह जब चुन-चुनकर उनमें से अच्छे-अच्छे ख़ुद खा लेता, तब बचे-बचाए सब को बाँट देता था । किसी बंदर की मजाल न थी कि वह अपने मन-माने ढंग से कोई काम कर सके । उसे हर काम करने से पहले राजा से इजाज़त लेनी पड़ती थी ।

राजा ने तगड़े-तगड़े बन्दरों की एक फ़ौज भी बनाई थी । यह फ़ौज़ उसके इशारों पर चलती थी । जंगल का जो भी बन्दर राजा के हुक्म के ख़िलाफ़ चलता, उसे वे फौज़ के सिपाही पकड़ लेते और किसी दरख़्त से बाँधकर ख़ूब पीटते थे । पहले ये सब भाई-भाई थे, सब बराबर खाते-पीते थे और बराबरी से रहते-सहते थे । लेकिन अब उनमें बराबरी के बजाय ऊँची-नीची जातियाँ पैदा हो गई थीं । कोई मालदार था तो कोई ग़रीब । कोई बड़ा था तो कोई छोटा ।

इसी तरह जब काफ़ी दिन बीत चले, तब कुछ समझदार बन्दरों ने मन ही मन में अपने भाइयों की यह हालत देखकर कुढ़ना और जलना-भुनना शुरू किया । उनके मन में इस हालत से छुटकारा पाने की उमंगें उठने लगीं । इन्हीं दिनों एक दिन कोई लंगूर उस जंगल में आया । उसने देखा कि यहाँ न तो वह चहलपहल है, न वह बेफ़िक्री और न वह आज़ादी । जंगल की बिल्कुल काया ही पलट गई है । लंगूर

जंगल में पहुँच-कर उसने तमाम बन्दरों को इकट्ठा किया और उनके सामने एक लंबा-चौड़ा भाषण दिया……

को यह देखकर बहुत ताज्जुब हुआ, क्योंकि वह पहले भी

कई बार इस जंगल में आया था और इन बन्दरों का जीवन अपनी आँखों से देख चुका था। अब जो उसने चारों तरफ़ सन्नाटा-सा देखा और बन्दरों से उसका कारण पूछा तो उसे मालूम हुआ कि अब वे सब शहर की ज़िन्दगी बसर कर रहे हैं और सभ्य हो गए हैं। उनकी बागडोर एक राजा के हाथ में है और सब उसके कहने पर चलते हैं। पुराने ज़माने की उछल-कूद को अब उन्होंने छोड़ दी है, क्योंकि वह जंगलीपन की निशानी थी!

जंगल का जो बन्दर राजा के हुक्म के ख़िलाफ़ चलता, उसे वे फ़ौज के सिपाही पकड़ लेते और किसी दरख़्त से बाँधकर ख़ूब पीटते थे.........

लंगूर ने यह सुनकर कहा—'अरे बेवक़ूफ़ो! यह सभ्यता नहीं है, बल्कि मौत है। अगर यही सभ्यता और तरक़्क़ी है कि आज़ादी को खोकर ग़ुलामी को पसन्द किया जाए तो ऐसी तरक़्क़ी को दूर से प्रणाम!'

लंगूर की यह बात सुनकर बहुत से बन्दर इकट्ठा हुए और राजा के पास पहुँचे और उससे कहा कि 'हम शहर-वाले बनना नहीं चाहते। तुम हमें जंगली ही रहने दो। हम से ये पाबन्दियाँ, ये क़ायदे, ये क़ानून और ये तरीक़े नहीं बरते जाते, जिन्होंने हमारी आज़ादी छीन रक्खी है।'

बन्दरों के राजा ने जो उनकी यह बात सुनी तो उसे ग़ुस्सा आ गया और उसने कहा, 'अफ़सोस, मैं चाहता था कि तुम सभ्य बनकर तरक़्क़ी करो और भले बन जाओ! मगर आख़िर तुम बन्दर हो न! कुत्ते की दुम बारह बरस शिकंजे में रही, फिर भी निकली तो टेढ़ी की टेढ़ी! तुम्हें मैंने बंदर से इंसान बनाना चाहा, मगर तुम नहीं बनना चाहते तो तुम्हारा दुर्भाग्य!'

इस पर वह लंगूर आगे बढ़ा और बोला, 'अब तुम इन बेचारों पर दया करो! ये ऐसी सभ्यता में नहीं पलना चाहते, जिसमें इनका खाना-पीना भी दूसरे के बस में हो!'

बूढ़ा बन्दर यह सुनकर बहुत रंजीदा हुआ और यह कहता हुआ जंगल से निकल गया कि ये बंदर हमेशा बंदर ही रहेंगे!

नादान की दोस्ती, जी का जंजाल

किसी ज़माने में काश्मीर में एक राजा राज्य करता था, जिसको दुनिया की अजीब-अजीब चीज़ें जमा करने का बड़ा शौक़ था। उसके यहाँ दक्खिन का हीरा, बर्मा का हाथी, ईरान का फ़ीरोज़ा, बंगाल का हाथीदाँत, अरब का घोड़ा, अफ़्रीका का शेर, लंका की सीपी—मतलब यह कि दुनिया की सैकड़ों बढ़िया-से-बढ़िया चीज़ें मौजूद थीं! इन सब अजीब चीज़ों में एक बन्दर भी था, जिसे राजा ने बड़े लाड़-प्यार से पाला था। वह बन्दर क्या था, एक तमाशा था। वह ऐसी-ऐसी हरकतें करता, ऐसी नक़लें उतारता और स्वाँग भरता कि उसे देखकर सारा दरबार हँसी से लोट-

पोट हो जाता। कभी वह सिर में पगड़ी बाँधे, हाथ में लकड़ी लिये, दरबार में चला आता और राजा के सिंहासन के पास आकर दोनों हाथ जोड़कर सिर नवाता और एक तरफ़ बैठ जाता। कभी औरतों की पोशाक पहनकर रनवास में जा घुसता और ऐसा मटक-मटक कर चलता कि रानियाँ और बाँदियाँ देखकर दंग रह जातीं! कभी सारंगी बग़ल में दबाई और उसे बजाने लगा। कभी मौज आई तो कोचवान बनकर उचककर राजा की सवारी में घोड़ागाड़ी के किसी घोड़े पर सवार हो गया और हाथ में लगाम लेकर चाबुक फटकारते हुए शहर भर का चक्कर काट आया!

एक बार राजा साहब ने दंगल किया तो आपको कुश्ती का शौक़ चर्राया। ख़म ठोक, लँगोटा कस, आप मैदान में कूद पड़े और एक पहलवान से जा लिपटे और उस बेचारे को दंगल में ऐसा अजीब नाच नचाया कि वह भी कान पकड़ गया! कभी उचककर उसके कन्धों पर जा बैठे तो कभी उसकी बाँह पकड़कर झूल गए, कभी पेट से फिसलकर टाँगों से लिपट गए! आख़िर उसे इनका लोहा मानना ही पड़ा और दर्शकों के मारे हँसी के पेट फूल गए! इसी तरह एक दिन तलवार चलाने का जो शौक़ पैदा हुआ तो उसमें भी वे हाथ दिखाए कि सब हैरान् रह गए। मतलब यह कि वह बंदर क्या था, बहुरूपियों का उस्ताद था!

उसकी इन्हीं ख़ूबियों के कारण राजा उससे बहुत हिल-मिल गया था। उसके बग़ैर उसको एक पल भी चैन न पड़ता था। बन्दर को भी राजा से बड़ा प्रेम था। जब राजा सोने के लिए जाता तो बन्दर एक तेज़ और चमकदार ख़ंजर लेकर सिरहाने आ खड़ा होता और सारी रात इसी तरह पहरा देते हुए काट देता! क्या मजाल कि उस बीच पलक झपक जाए! जब सुबह का गजर बजता और राजा आँखें मलता हुआ उठता तो बन्दर आगे आकर सलाम करता और तब ड्योढ़ी पर जाकर पहरेदारों को महाराज के जागने की ख़बर देता!

एक दिन फ़ारस का एक मशहूर चोर काश्मीर आया, क्योंकि उसने सुना था कि वहाँ का राजा बहुत मालदार है और हर घड़ी अनमोल जवाहर पहने रहता है। बतानेवालों ने यह भी बताया था कि राजा के गले में जो हार है, वह इतने बड़े-बड़े मोतियों का है, जैसे चिड़ियों के अंडे! बड़े-बड़े जौहरी भी उसकी क़ीमत का अन्दाज़ा नहीं लगा सकते और दस-पाँच बड़े-बड़े राजा-महाराजा मिलकर भी उसके दाम नहीं चुका सकते! उस हार के बीच में एक बहुत बड़ा हीरा लगा था। उस हीरे की बात सुनकर चोर के बदन में सनसनी दौड़ गई, और वह उसको चुराने का इरादा कर आधी रात को उस कमरे

कभी औरतों की पोशाक पहनकर रनवास में जा घुसता और ऐसा मटक-मटककर चलता कि रानियाँ और बाँदियाँ देखकर दंग रह जातीं ....

कभी मौज आई तो कोचवान बनकर उचककर राजा की सवारी में घोड़ागाड़ी के किसी घोड़े पर सवार हो गया और हाथ में लगाम लेकर चाबुक फटकारते हुए शहर भर का चक्कर काट आया......
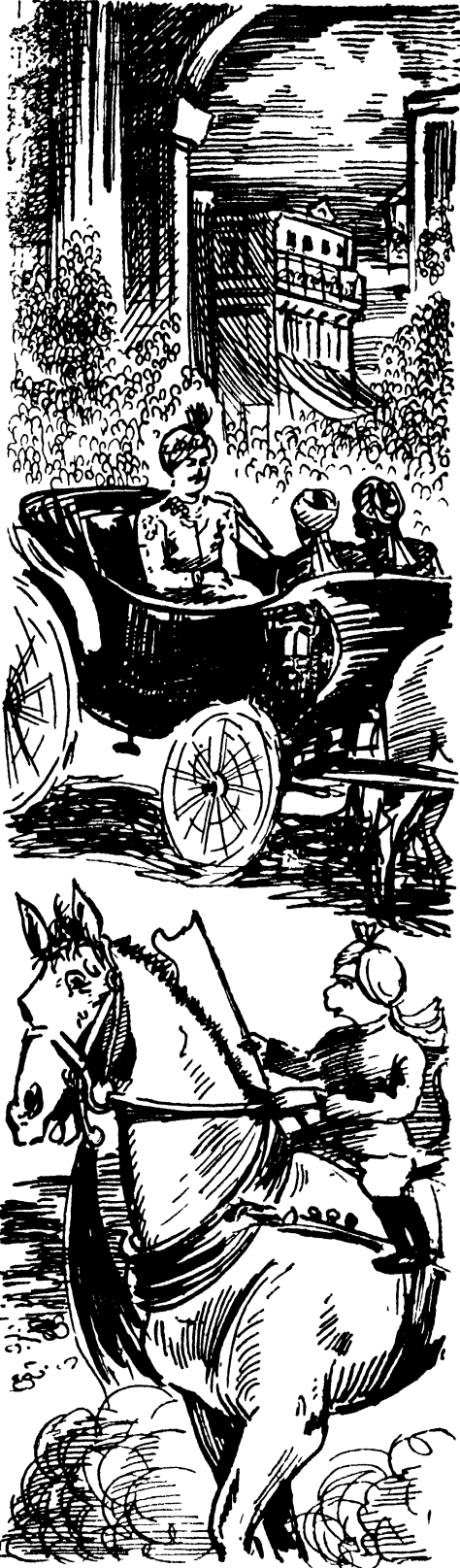
में जा पहुँचा, जहाँ राजा आराम की नींद सो रहा था। पलंग पर मख़मल के नरम गद्दे बिछे हुए थे। चारों दीवारों पर दीपक जल रहे थे। उनकी रोशनी में राजा के गले का हार और हार के बीचोबीच लगा हुआ वह बेजोड़ हीरा तारे की तरह चमक रहा था।

चोर ललचाई हुई आँखों से उस हीरे को देख रहा था कि अचानक उसकी नज़र पलंग के पास ही खड़े हुए राजा के उस पहरेदार पर जा पड़ी। बन्दर नंगी तलवार हाथ में लिये हुए पलंग के सिरहाने खड़ा था और टकटकी बाँधे राजा साहब को ताक रहा था। बन्दर को इस तरह पहरा देते देखकर चोर अचकचा गया। उसने सोचा कि यह भी अजीब बात है कि जिससे बहादुर सूरमा लड़ाई के मैदान में दुश्मनों की ख़बर लेते हैं, आज वही तलवार एक बेवक़ूफ़ बन्दर के हाथ में दे दी गई है! अभी वह यह बात सोच ही रहा था कि इतने में चिउँटों की एक फ़ौज कमरे के एक कोने से निकली और राजा के पलंग की तरफ़ बढ़ी। देखते ही देखते तमाम चिउँटे फ़र्श पर रेंगते-रेंगते राजा के पलंग पर चढ़ गए। इधर-उधर घूमने-फिरने के बाद एक चिउँटा राजा के मुँह के पास जा पहुँचा और राजा ने उसकी सरसराहट से चौंककर नींद ही में अपना हाथ उठाया और मुँह पर मारा। बन्दर ने जो यह देखा कि एक चिउँटे के कारण राजा की नींद में बाधा पड़ रही है तो उसे बहुत ताव आया और दूर ही से ख़ंजर घुमाकर उसने खौखियाना शुरू किया! भला चिउँटा बन्दर के उस खौखियाने से कब बाज़ आनेवाला था! वह राजा के चेहरे पर रेंगता रहा। अब तो बन्दर के ग़ुस्से की कोई हद ही न रही! वह ख़ंजर तौलकर इस इरादे से आगे बढ़ा कि एक ही बार में उस बदमाश का काम तमाम कर दे!

चोर ने बन्दर की यह बेवक़ूफ़ी से भरी हरकत जो देखी तो वह चिल्लाता हुआ लपका—'अबे पागल, यह क्या करता है! ख़ंजर के वार से चिउँटे नहीं मरा करते, मगर दम भर में ही इस राज्य का सुहाग उजड़ जायगा!'

पर बन्दर तो बन्दर ही ठहरा! वह चिउँटे को उसकी गुस्ताख़ी की सज़ा देने के लिए उतावला हो रहा था और ख़ंजर मारना ही चाहता था कि चोर ने झपटकर उसे पीछे

चोर ने झपटकर उसे पीछे धकेल दिया और ख़ंजर छीनकर उसे दूर हटाना शुरू किया ... ...

धकेल दिया और ख़ंजर छीनकर उसे दूर हटाना शुरू किया। इस पर बन्दर ने जवाब में इतना शोर मचाया कि सारा महल सिर पर उठा लिया। इस हुल्लड़ में राजा की भी आँख खुल गई और वह घबड़ाकर उठ बैठा।

'क्या बात है? तुम कौन हो और यह ख़ंजर क्या है?' राजा ने हैरान् होकर चोर से कहा।

'हुज़ूर! घबड़ाइए नहीं!' चोर बोला, 'मैं फ़ारस का चोर हूँ। यहाँ चोरी करने आया था। लेकिन मेरी क़िस्मत में लिखा था कि इस नादान बन्दर के हमले से आपकी जान बचाऊँ।' इसके बाद उसने राजा से पूरा हाल बताया। राजा ने परमात्मा को धन्यवाद दिया और चोर का एहसान मानते हुए वह बोला—'सच है भाई, अक़्लमन्द दुश्मन हर हालत में नादान दोस्त से अच्छा होता है!'

इस पर चोर ने सिर झुकाकर कहा—'जब क़िस्मत सीधी होती है तो चोर भी चौक़ीदार बन जाता है, महाराज!'

राजा ने अपना हार उतारा और यह कहकर उस चोर के गले में डाल दिया कि 'यह है तुम्हारी अक़्लमन्दी का इनाम! जिस हीरे के लिए तुम चोरी करने आए थे, वह अब ईमानदारी से तुमको मिल गया!'

दो की लड़ाई में तीसरे का भला

गरमी का मौसम था और एक ऊदबिलाव शिकार की तलाश में एक तालाब के किनारे-किनारे टहल रहा था। ऊद-बिलाव के बारे में यह मशहूर है कि चालाकी और धोखेबाज़ी में वह लोमड़ी से दूसरे नम्बर पर, लेकिन बातें बनाने में उससे भी बढ़कर ही होता है! यह बड़ा बातूनी जानवर होता है। लोमड़ी दिमाग़ से काम लेती है और यह ज़बान से। वह सोचती ज़्यादा है और बोलती कम है। ऊदबिलाव सोचता भी है और बोलता भी है। मतलब यह कि वह ऊदबिलाव इस ताक में था कि तालाब में किनारे पर कोई मछली दिखाई पड़े तो बातें बनाकर उसे क़ाबू में लाएँ! लेकिन मौक़ा कुछ

ऐसा था कि देर तक कोई मछली किनारे पर न उभरी। आख़िरकार हारकर वह वापस जाने ही वाला था कि अचानक उसकी इच्छा पूरी होते दिखाई दी। उसने देखा कि दूर से लहरों को काटती हुई हरे रंग की एक बहुत ही ख़ूबसूरत मछली उधर आ रही है! मछली बहुत ही तन्दुरुस्त और नवजवान थी। ऊदबिलाव ने ललचाई हुई आँखों से उसे देखा और अपने मन में कहने लगा कि 'वह कितना भाग्यवान् होगा जो इस मछली को पकड़ेगा!'

चमकीले डैने, हरे रंग का सुडौल बदन और साँचे में ढली हुई दुम! मछली बड़े मज़े से कभी डूबती, कभी उछलती, कभी पानी उड़ाती और कभी चित होकर तालाब में तैर रही थी। लेकिन उसे पकड़ना बहुत मुश्किल था! एक तो वह किनारे से काफ़ी दूर थी, दूसरे वह बहुत तेज़ ग़ोता लगानेवाली मछलियों में से थी! ऊदबिलाव बहुत देर तक उसकी उछल-कूद देखता रहा, फिर भी वह किनारे पर न आई। तब यह सोचकर कि यह हाथ आनेवाली नहीं, अब और कहीं पेट का बन्दोबस्त करना चाहिए, वह फिर वहाँ से चलने को तैयार हुआ। परन्तु अभी वह ताकता-झाँकता कुछ ही दूर गया होगा कि उसने एक और बात देखी। एक बड़ी शानदार मोटी ताज़ी लाल रंग की मछली सामने पानी से खेल रही थी। यह मछली डीलडौल में उस हरे रंग की मछली से बड़ी और देखने में उससे भी ज़्यादा ख़ूबसूरत थी! ऊदबिलाव इस लाल मछली को देखकर उस हरी मछली को मानों भूल-सा गया! लेकिन यहाँ भी वही बात थी! इस मछली का हाथ आना तो और भी मुश्किल था! जब बहुत देर तक ताक-झाँक करने पर भी कुछ नतीजा न निकला तो मन ही मन वह अपने आपको कहने लगा— 'सुनो भाई ऊदबिलाव, बड़े-बूढ़ों ने कहा है कि जहाँ हाथ नहीं चलते, वहाँ ज़बान चलती है और जहाँ ज़ोर बेकार हो जाता है, वहाँ चिकनी-चुपड़ी बातें काम आती हैं। ये मछलियाँ यों तो हाथ आने से रहीं, अब एक ही तरकीब हो सकती है और वह यह है कि इन्हें आपस में लड़ा दिया जाय। जब लड़कर ये दोनों कमज़ोर हो जायँगी तो फिर तुम्हारी पाँचों उँगलियाँ घी में होंगी!'

यह सोचकर वह उल्टे पाँव पीछे को पलटा और जहाँ वह हरी मछली तैर रही थी उस किनारे के पास जाकर कहने लगा—'ख़ूबसूरती की देवी, मुझे आपसे कुछ कहना है!'

हरी मछली अपने लिए इस तरह आदर के शब्द सुनकर ख़ुशी से फूल गई और बोली—'कहो, क्या बात है?'

यह सोचकर वह उल्टे पाँव पीछे को पलटा और जहाँ वह हरी मछली तैर रही थी उस किनारे के पास जाकर कहने लगा—'ख़ूबसूरती की देवी, मुझे आपसे कुछ कहना है..............।'

ऊदबिलाव ने कहा—'अगर कोई सोने को पीतल बताए और अच्छे को बुरा तो क्या बेजा न दिखाई देगा ?'

मछली ने कहा—'बेशक, ज़रूर बुरा मालूम होगा !'

ऊदबिलाव बोला—'तो फिर वह लाल मछली जो है, अभी-अभी अपनी सहेलियों से कह रही थी कि यह हरी मछली अपने बनाव पर इतना क्यों इतराती है !'

हरी मछली ने जो अपने लिए लाल मछली के ये शब्द सुने तो जल-भुनकर वह मानों कोयला हो गई और ऊदबिलाव से कहने लगी—'तुम ज़रा उस मुई कलमुँही से कह देना कि मुँह सँभालकर बात किया कर, वरना इस ताल में रहना दूभर कर दूँगी !'

इस तरह उस हरी मछली को भड़काकर अब ऊदबिलाव उस किनारे के पास आया जहाँ वह लाल मछली तैर रही थी और पुकारकर कहने लगा—'ज़रा इस खेल-कूद को बन्द करके मेरी एक बात तो सुन लो, महारानी ! वह हरी मछली ताल की और मछलियों से तुम्हारे बारे में क्या-क्या कह रही है, कुछ उसकी भी ख़बर है ?'

लाल मछली यह बात सुनकर ठिठकी और बोली—'क्या कहा तुमने ?'

ऊदबिलाव बोला—'उसने तुम्हारे लिए ऐसी-ऐसी गालियाँ बकी हैं कि मेरा तो दिल हिल गया ! मुई, कलमुँही, फूहड़, बेवक़ूफ़ और न जाने क्या बना दिया उसने तुमको !'

लाल मछली ये बातें सुनकर ग़ुस्से से और लाल हो गई और आगबबूला होकर कहने लगी—'उस भौंड़ी बेहूदी से कह देना कि क्या जूते खाने को सिर खुजला रहा है ! लो साहब, कल की लौंडिया और हमारे मुक़ाबले में बढ़-बढ़कर बातें बनाने लगी !'

ऊदबिलाव फिर पलटा और हरी मछली के पास आकर बोला—'हमें तो अब यह जगह छोड़ देना पड़ेगी !'

हरी मछली ने कहा—'क्यों क्या बात है ?'

ऊदबिलाव रोनी-सी सूरत बनाकर कहने लगा—'तुम्हारी प्यारी-प्यारी सलोनी सूरत और नेक स्वभाव से कुछ ऐसा प्रेम हो गया है कि अगर कोई तुम्हारे लिए कुछ बेजा बात कहता है तो जी चाहता है कि उसकी ज़बान खींच लूँ ! पर क्या करूँ कुछ बस नहीं चलता !'

हरी मछली ने कहा—'क्या उसी निगोड़ी ने फिर कुछ और कह दिया ?'

ऊदबिलाव ने कहा—'अजी, कोई एक बात कही हो तो बताऊँ ! कहने लगी कि मुई किसी ऊँचे घराने की थोड़े ही है ! ख़बर नहीं, कहाँ की रहनेवाली है ! मुझे तो बिल्कुल गँवार मालूम होती है, उजड्ड । न बात करने का ढंग, न तैरने की तमीज़ ! बीबी बहुत इतराती हैं अपने ऊपर । पर किसी दिन गलफड़े पकड़कर चीर दूँगी और खिला दूँगी चील-कौओं को !'

यह सुनकर तो हरी मछली के ताव की हद न रही और उसने लाल मछली को वे-वे गालियाँ दीं कि ऊदबिलाव भी सुनकर काँप गया ! वह चीख़ने लगी—'भगवान् करें वह ऐसी जगह पीटी जाय जहाँ पानी न मिले ! कोई घड़ियाल उसे चबा ले, कोई मछेरा पकड़ ले जाए । मैं तो तब ख़ुश होऊँगी जब उस कलमुँही का सिर एड़ियों से रगड़ा जाय, उसके क़तले-क़तले किए जाएँ और गरम रेत में उसको ज़िन्दा गाड़ दिया जाय !'

ऊदबिलाव ने ये सब गालियाँ याद कर लीं और तुरंत ही फिर लाल मछली की तरफ़ रवाना हो गया ।

लाल मछली उसकी बाट जोहती हुई अब भी पानी पर तैर रही थी । ज्योंही उसने ऊदबिलाव को देखा, चीख़कर कहने लगी—'उसी कमीनी के पास से आ रहे हो न ? कहो अब भी उसका दिमाग़ दुरुस्त हुआ कि नहीं ?'

ऊदबिलाव ने सिर झुका लिया और कुछ भी न बोला ।

कभी वह ऊपर और कभी यह नीचे ! जब लड़ते-लड़ते वे चित हो जातीं तो उनके पेट की सफ़ेद-सफ़ेद चाँदी की तरह चमकदार खाल देखकर ऊदबिलाव के मुँह में पानी भर आता था'.... ....

लाल मछली कहने लगी—'क्यों मुँह क्यों बिगाड़ लिया ! क्या हो पड़ी उससे ?'

ऊदबिलाव ने कहा—'अजी, मैं तो ऐसी खरी-खरी सुना के आ रहा हूँ कि छठी का दूध याद आ गया होगा देवीजी को ! पर उसने भी कोसने और गालियाँ देने में कसर नहीं उठा रखी। तुम्हारे लिए वे-वे बातें कहीं कि हे भगवान् !'

लाल मछली ने कहा—'कुछ सुनाओ तो सही, क्या-क्या कहा है उस डायन ने ?'

ऊदबिलाव ने कहा—'अजी क्या बताऊँ ! मुझको किसी की चुग़ली खाने की आदत नहीं, पर ख़ैर तुम नहीं मानती हो तो लो सुनो।' इसके बाद ऊदबिलाव ने ख़ूब नमक-मिर्च लगाकर हरी मछली ने जो-जो कहा था वह सब सुना दिया। लाल मछली का तो यह हाल हुआ कि मानों उसके तन-बदन में मिर्चें लग गईं !

ऊदबिलाव ने कहा—'अब ज़रा सँभल जाओ। वह अपने हिमायतियों को जमा करने जा रही है और उनके साथ तुम पर चढ़ाई करेगी।'

लाल मछली ने कहा—'मैं अभी उसका और उसके हिमायतियों का मिज़ाज दुरुस्त किए देती हूँ !'

ऊदबिलाव यह सुनकर उल्टे पाँव बड़ी तेज़ी से भागा और हरी मछली से चिल्लाकर कहने लगा—'लो, अब होशियार हो जाओ ! वह तुम पर चढ़ाई कर रही है !'

हरी मछली ने कहा—'धन्यवाद ! आने दो, अभी ख़बर लेती हूँ उसकी !'

इतने में लाल मछली आ ही पहुँची। दोनों एक दूसरे पर झपटीं और आपस में गुत्थमगुत्था हो गईं। कभी यह ऊपर तो कभी वह नीचे ! कभी वह ऊपर और कभी यह नीचे ! जब लड़ते-लड़ते वे चित हो जातीं तो उनके पेट की सफ़ेद-सफ़ेद चाँदी की तरह चमकदार खाल देखकर ऊदबिलाव के मुँह में पानी भर आता था ! उसका मन अपने क़ाबू से बाहर हो रहा था !

थोड़ी देर में लड़ते-लड़ते वे दोनों बेदम हो गईं और पानी के ऊपर तैरती हुई किनारे से आ लगीं ! अब ऊदबिलाव के लिए सच्चा मौक़ा था ! वह झपटा और दम भर में दोनों

मछलियों को उसने उचक लिया। वे घायल होकर इतनी चूर-चूर हो गई थीं कि फड़क भी न सकीं और ऊदबिलाव ने बात की बात में उन्हें अपने पेट में धर लिया! सच है, दो में आपस में फूट डालकर इसी तरह तीसरा अपना भला किया करता है!

गधा गधा ही ठहरा

गाँव के नम्बरदार ने इस ख़याल से बहुत-से सुअर पाल रक्खे थे कि उनको बेचने से काफ़ी फ़ायदा होगा, क्योंकि सुअर का मांस डिब्बों में बन्द होकर बाहर जाता है और बड़ी क़ीमत में बिकता है। सुअर दिन भर तो खेतों में खुले छोड़ दिए जाते थे और बड़ी बेफ़िक्री और आज़ादी से इधर-उधर घूमते-फिरते, खाते-पीते हुए वे मौज उड़ाते और रात को एक बाड़े में बन्द कर दिए जाते थे। वहाँ उन्हें उम्दा-उम्दा खाने की चीज़ें दी जाती थीं ताकि वे ख़ूब मोटे हो जाएँ और अच्छे दामों पर बिकें।

नम्बरदार के यहाँ एक गधी भी पली हुई थी और वह बेचारी अपनी ज़िन्दगी से तंग थी। दिन भर तो वह बोझ ढोते-ढोते थक जाता और रात को जब थान पर बँधता तो घास के कुछ मुट्ठे उसके सामने डाल दिए जाते। बाज़ार के दिन नम्बरदार गधे पर सुबह ही से झोला वग़ैरह डाल देता, और कभी उसकी पीठ पर घी, दूध, ग़ल्ला और कभी उपले, कंडे वग़ैरह लादकर शहर को ले जाता। अगर गधा काम में ज़रा भी सुस्ती करता तो नम्बरदार का मोटा-ताज़ा पहलवान-जैसा लड़का एक लाठी लेकर उसको इतना मारता कि उसके तमाम बदन पर बद्धियाँ पड़ जातीं, हाथ-पाँव सूज जाते और ख़ून निकल आता। गधा सोचा करता था कि 'आख़िर मुझे किस क़सूर पर सज़ा मिलती है कि सारी उम्र डंडे खाते और बोझ ढोते गुज़र रही है! एक ये सुअर भी हैं, जो हराम का माल खाकर कैसे चर्बीले हो गए हैं। न बोझ ढोएँ, न डंडे खाएँ और बढ़िया माल उड़ाएँ। काम के न काज के, दुश्मन अनाज के! फिर भी ये मौज कर रहे हैं!'

इसी हालत में उस गधे को कई साल गुज़र गए और वह अपने भाग्य पर संतोष किए बैठा रहा। एक दिन यह हुआ कि नम्बरदार उसको बाँधना भूल गया। जब रात हो गई तो वह अपने थान से निकलकर सुअरों के बाड़े के पास आया, जहाँ वे उम्दा-उम्दा खाना खा रहे थे। गधा धीरे-धीरे उनके पास गया। सुअर जानते थे कि यह हमारे मालिक का बोझ

एक दिन यह हुआ कि नम्बरदार उसको बाँधना भूल गया। जब रात हो गई तो वह अपने थान से निकलकर सुअरों के बाड़े के पास आया ....

बूचड़ ने उनमें से कुछ मोटे-ताज़े सुअर छाँट लिये और उन्हें मारकर उनका गोश्त बनाने लगा। गधा दूर से खड़ा खड़ा यह तमाम हाल देख रहा था ....

ढोता है और कभी-कभी वे इसके हाल पर दया भी दिखाते थे कि बेचारे को न मौत आती है और न इस दुःख से छुटकारा ही मिलता है। जब उन्होंने गधे को अपने बाड़े की तरफ़ आते देखा तो उनमें से एक बाड़े की टट्टी के पास आकर कहने लगा कि 'अरे भाई, इतनी रात गए तुम यहाँ कहाँ ?'

गधे ने अपनी गर्दन नीचे डालकर बड़बड़ाते हुए कहा कि 'क्या बताऊँ? मालिक मुझे बाँधना भूल गया है और गोकि ग़लती उसी की है, फिर भी तुम देखना कि सुबह डंडे मुझ पर ही यह कहकर पड़ेंगे कि कम्बख़्त सारी रात खुला रहा! मैंने तो यह सोचा कि रातों-रात निकल जाऊँ और किसी नदी में डूबकर इस बेहूदी ज़िन्दगी से छुटकारा पा लूँ। ज़रा तुम ही बताओ, यह भी कोई ज़िन्दगी है! गले में ग़ुलामी का मोटा फन्दा और पीठ पर वही डंडा! भाइयो, ज़रा सोचो, अभी सुबह नहीं हुई कि मुझे थान से खोलकर फिर काम पर भेज दिया जाएगा! दोपहर की कड़ी धूप तक में भी काम करता रहता हूँ। उसके बाद सब लोग जब बरगद की छाया में बैठकर रोटी खाते हैं, तब मुझे धूप में एक मोटे खूँटे से बाँधकर सूखी घास डाल देते हैं! अगर ज़रा आवाज़ लगाऊँ तो ऐसे बेभाव की मार पड़ती है कि भगवान् ही बचाएँ! इसी तरह मरते-पचते शाम हो जाती है। तब मालिक मुझ पर सवारी गाँठता है और घास लादकर घर लाता है। रात को जो खाने को मिलता है वह तुम ख़ुद देखते हो—मुट्ठी भर घास, वह भी रूखी! अरी वाह री जिन्दगी!'

सुअरों ने जो गधे की यह रामकहानी सुनी तो उन्हें बहुत दुःख हुआ और वे उससे कहने लगे कि 'दोस्त, आदमी बड़ा चालाक और बहुत गरज़मंद होता है। अगर उसके ज़ुल्म से छुटकारा पाना चाहते हो तो चालाकी और खुदग़रज़ी से काम लो!'

गधे ने पूछा—'यह क्योंकर हो सकता है?' सुअरों ने कहा—'एक काम करो। थोड़े दिन के लिए बीमार बन जाओ। मालिक तुम्हें घर बाँधकर खिलाएगा। जब ख़ूब खा-पीकर तुम्हारे बदन में ताक़त आ जाए तो फिर कहीं को चल देना। अगर अभी भागने की कोशिश करोगे तो फ़ौरन् पकड़ लिये जाओगे और डंडे खाओगे।'

गधे ने सुअरों की बात मान ली और वह बीमार बनकर लेट गया। सुबह जो मालिक ने उसका हाल देखा तो बहुत परेशान हुआ। बीबी ने कहा कि 'अब दो-चार दिन इसे बँधा रखो और इससे काम मत लो, वरना मर जायगा और हमें बुरे वक़्त का सामना करना पड़ेगा।' नम्बरदार ने यह बात मान ली और सूखी घास के बजाय जौ का अनाज और चने का दाना बाल्टी में भरकर उसके सामने रख दिया, ताकि वह खा-पीकर मोटा और ताक़तवर हो जाय।

गधे ने यह खाना उम्र भर न खाया था। भगवान् को धन्यवाद देकर उसने तरह-तरह के माल उड़ाना शुरू किए और बीमार का बीमार बना रहा। कुछ ही दिनों में उसका रंग और रूप निकल आया। अब वह गधा नहीं बल्कि काठियावाड़ का टट्टू नज़र आता था! इधर उसकी तैयारी का यह हाल था, उधर सुअर भी तर माल खा-खाकर ख़ूब मोटे-ताज़े हो गए थे।

एक दिन नम्बरदार ने एक बूचड़ को बुलाया और कहा कि 'अब ये सुअर ख़ूब तैयार हैं। तुम इनका गोश्त तैयार करके डिब्बों में बन्द करो। ख़रीदारों की माँगें आने लगी हैं। बाज़ार में बहुत ज़रूरत है, इस वक़्त दाम अच्छे उठेंगे।' बूचड़ ने उनमें से कुछ मोटे-ताज़े सुअर छाँट लिये और उन्हें मारकर उनका गोश्त बनाने लगा। गधा दूर से खड़ा-खड़ा यह तमाम हाल देख रहा था और मारे डर के उसकी बोटी-बोटी काँप रही थी। अचानक बूचड़ की निगाह उस मोटे-ताज़े गधे पर पड़ी। वह ललचाई हुई नज़रों से उसे देखकर नम्बरदार से कहने लगा—'चौधरी, अबके सुअरों पर चर्बी अच्छी तरह नहीं चढ़ी। उनसे तो तुम्हारा यह गधा ही अच्छा है। देखो तो, कैसा मोटा-ताज़ा हो रहा है। कहो तो इसे भी इन सुअरों में शामिल कर दूँ!' नम्बरदार तो यह सुनकर मुस्कराने लगा, पर गधा गधा ही ठहरा, वह घबड़ाकर उठ बैठा और मन में कहने लगा कि 'इस मोटापे से तो वह कमज़ोरी ही कहीं अच्छी थी, जिसमें जान जाने का तो ख़तरा न था! बच्चा, अगर कुछ दिन और यों ही बीमार बनकर पड़े-पड़े मुफ़्त का माल उड़ाते रहे तो एक दिन तुम्हारा भी यही हाल होगा जो इस वक़्त इन सुअरों का हुआ!'

यह सोचकर वह फ़ौरन् उठकर अपनी मालकिन के पास आ गया। उसने उसे देखभालकर नम्बरदार से कहा कि 'अब यह गधा बिल्कुल अच्छा हो गया है। कल से इसे फिर अपने काम-काज में लगा दो।'

इस तरह फिर से गधा उसी तरह मरने-पचने लगा!

तू डाल-डाल, मैं पात-पात

किसी नदी के किनारे एक जामुन का पेड़ खड़ा था, जिसमें मौसम आने पर बड़े-बड़े जामुन के फल लगते थे। एक बन्दर ने उस पेड़ पर अपना अड्डा जा जमाया था और रात-दिन बेफ़िक्री से उस दरख़्त पर बैठे-बैठे वह फल खाता और इधर से उधर उछल-कूदकर मज़े उड़ाता! एक दिन वह बन्दर उस जामुन के पेड़ पर बैठा हुआ जामुन खा रहा था कि एक जामुन उसके हाथ से छूटकर टप से नीचे नदी के पानी में गिरा। बन्दर को यह आवाज़ बड़ी भली मालूम हुई और उसने लगातार जामुन तोड़-तोड़कर पानी में फेंकना शुरू किया! दैवयोग से ठीक उसी जगह पानी में एक घड़ियाल छिपा बैठा था। उसने जो पानी में किसी चीज़ को गिरते देखा तो अपना मुँह खोल दिया और जब उसे जामुन के मीठे फल का स्वाद आया तो वह बहुत ख़ुश हुआ और पानी से सिर ऊपर निकालकर उसने देखा कि आख़िर ये मीठे-मीठे फल कौन नीचे पानी में फेंक रहा है! जब उसने देखा कि एक बन्दर पास के दरख़्त पर बैठा है और उसके फल तोड़-तोड़कर पानी में गिरा रहा है तो उसने झुककर उसे प्रणाम किया और उसकी मेहरबानी के लिए धन्यवाद

दिया। बन्दर ने कहा—'दोस्त, यह भी कोई धन्यवाद देने की बात है ! तुम जितने फल चाहो खा लिया करो। मैं तो इस पूरे जंगल का दारोग़ा हूँ।' घड़ियाल बन्दर की बात से बहुत ख़ुश हुआ और दूसरे दिन उस बन्दर के लिए नदी के भीतर पैदा होनेवाले फल लेकर आया। बन्दर ने भी नीचे जामुन का मानों मेह बरसा दिया। इस तरह वे दोनों बहुत दिनों तक एक दूसरे को खिलाते रहे।

कुछ ही दिनों में बन्दर और घड़ियाल में इतनी गहरी दोस्ती हो गई कि एक पल के लिए भी एक दूसरे से अलग रहना अब उनके लिए मुश्किल हो गया। सुबह तड़के ही घड़ियाल नदी के किनारे आ जाता और बन्दर से बातचीत शुरू हो जाती। बन्दर की चालाकी मशहूर ही है। उसने अपनी चिकनी-चुपड़ी बातों से घड़ियाल को मुट्ठी में ले लिया था, यहाँ तक कि उस बन्दर के पीछे वह घड़ियाल अपने बीबी-बच्चों को भी भूल बैठा था ! दिन हो या रात वह था और बन्दर ! घड़ियाल की बीबी ने जो अपने पति का यह बर्ताव देखा तो उसे बड़ा ग़ुस्सा आया। उसने उससे तो कुछ न कहा। पर पास-पड़ोस में एक केकड़ा रहता था, उससे जाकर कहने लगी कि 'तुम्हारे चाचा की आँख तो मुझसे ऐसी फिर गई हैं कि दिन-दिन भर और सारी-सारी रात वह घर से ग़ायब रहते हैं। आख़िर ज़रा यह पता तो चलाओ कि वह जाते कहाँ हैं।' केकड़े ने कहा—'तुम बेफ़िक्र रहो। मैं चाचा की टोह लेता रहूँगा।'

केकड़ा जब घड़ियाल की खोज में निकला तो घूमते-फिरते एक कछुए से मालूम हुआ कि उसने उसे नदी के दाहिने किनारे की तरफ़ जाते देखा है। केकड़ा तैरता हुआ जब उधर से बढ़ा तो दूर से ही उसने देखा कि घड़ियाल महाशय नदी के किनारे एक बन्दर से बातचीत करने में मस्त हो रहे हैं और इतने बेख़बर हैं कि ढोल बजाओ तो भी शायद पता न चले ! केकड़ा चुपके-चुपके उनके पास गया ताकि सुने कि वह क्या बातें कर रहे हैं ! जब वह पास पहुँचा तो बन्दर को यह कहते हुए सुना—'यहाँ से थोड़ी ही दूरी पर एक और नदी है। वहाँ चले चलो। बड़ी मज़े की जगह है। शिकार की भी कमी नहीं !' घड़ियाल ने यह सुनकर जवाब दिया – 'अच्छी बात है। मैं आज शाम को ही बीबी-बच्चों से छुट्टी लेकर वह नदी देखने चलूँगा।'

केकड़ा ये बातें सुनकर वहाँ से उलटे पाँव पलटा और घड़ियाल की बीबी से आकर कहने लगा—'चाची, लो, चाचा तो तुमसे छुट्टी लेने आ रहे हैं ! एक बड़े चालाक बन्दर ने उन्हें अपने चंगुल में फँसा लिया है और उसने उन्हें यह सलाह दी

एक दिन वह बन्दर उस जामुन के पेड़ पर बैठा हुआ जामुन खा रहा था कि एक जामुन उसके हाथ से छूटकर टप से नीचे नदी के पानी में गिरा ....

है कि इस नदी को छोड़कर उसके साथ दूसरी नदी में चले चलें। और वह राज़ी भी हो गए हैं। आज शाम को ही उस नई नदी को देखने वह जाएँगे। लो, अब और कोई तरकीब नहीं है, सिवा इसके कि तुम बीमार होकर पड़ जाओ और सब रिश्तेदारों को इकट्ठा कर लो। जब चाचा आएँ और दवा-दारू की फ़िक्र में लगें तो सब लोग उनसे यही कहें कि हकीमों ने इस बीमारी का इलाज सिर्फ़ बन्दर का कलेजा बताया है। उस वक़्त चाचा जब सोच-विचार में पड़ जाएँगे, तब उनसे कहा जायगा कि बन्दर की ख़ासियत यह है कि कलेजा निकाल लेने पर भी उसे कोई तकलीफ़ नहीं होती। सिर्फ़ दिक़्क़त यही है कि बन्दर अपना कलेजा किसी को देता नहीं। यह सुनकर चाचा अपने दोस्त बन्दर को यहाँ लिवा ले आएँगे। तब तो हम उसका कलेजा क्या, बोटी-बोटी निकाल लेंगे और तुमको हर दिन की परेशानी से छुटकारा मिल जायगा!'

घड़ियाल की बीवी ने इसी तरकीब से काम लिया और बीमार बनकर उसने सारा कुटुंब इकट्ठा कर लिया। जब घड़ियाल ने लौटकर घर में पैर रक्खा तो यह देखकर वह हैरान् रह गया कि उसकी बीवी दर्द के मारे तड़प रही है और सारा कुटुंब उसके इलाज में लगा हुआ है। वह अपनी बीवी को इस हालत में देखकर बहुत परेशान हुआ और उसके पास आया। बीवी आँख में आँसू भरकर बोली कि 'भगवान् को लाख बार धन्यवाद है कि मैंने आख़िरी वक़्त में तुम्हारी सूरत तो देख ली, वरना यही इच्छा मन में लेकर मर जाती!'

घड़ियाल ने कहा—'अरी, घबड़ाती क्यों है? आख़िर इस रोग की कोई दवा भी तो है!'

बीवी ने ठण्डी साँस भरकर कहा—'दवा है क्यों नहीं! लेकिन उसका हाथ आना क्या आसान है?'

घड़ियाल ने कहा—'कुछ बता भी तो सही! मैं तेरे लिए आसमान से तारे भी तोड़कर ला सकता हूँ। आख़िर मुझे मालूम भी तो हो कि वह दवा है क्या।'

दैवयोग से ठीक उसी जगह पानी में एक घड़ियाल छिपा बैठा था। उसने जो पानी में किसी चीज़ को गिरते देखा तो अपना मुँह खोल दिया और जब उसे जामुन के मीठे फल का स्वाद आया तो वह बहुत ख़ुश हुआ और पानी से सिर ऊपर निकालकर उस-ने देखा...

बीवी ने कहा—'बन्दर का कलेजा! बस, वही इस बीमारी की सबसे अक्सीर दवा है!'

लाचार होकर बंदर घड़ियाल की पीठ पर सवार हो गया और वह तैरता हुआ तेज़ी से अपने घर की ओर चला...

घड़ियाल यह सुनकर सोच में पड़ गया। इस पर बीवी ने कहा—'अगर किसी बन्दर से जान-पहचान हो तो उसका कलेजा ले आओ न! वह कलेजा निकालने से मरेगा थोड़े ही! पर दिक़्क़त तो यह है कि वह अपना कलेजा किसी को देने क्यों लगा!'

घड़ियाल बोला—'फिर तो कोई मुश्किल नहीं! एक बन्दर मेरा बड़ा गहरा दोस्त है। अगर मैं उससे उसकी जान भी माँगू तो वह दे दे! फिर कलेजा माँग लेना कौन बड़ी बात है!'

यह बात सुनकर सबने कहा—'ख़बरदार! ऐसी ग़लती न करना। अगर बन्दर को मालूम हो गया कि तुम उसका कलेजा निकालना चाहते हो तो फिर वह तुम्हारे पास भी न फटकेगा। तुम उसे किसी चाल से यहाँ ले जाओ। जब वह तुम्हारी बीवी का यह हाल देखेगा तो अगर वह सचमुच तुम्हारा दोस्त है तो ख़ुद अपना कलेजा तुम्हारे हवाले कर देगा।'

घड़ियाल ने कहा—'अच्छा, मैं उसे यह बात नहीं बताऊँगा; किसी और बहाने से उसे घर ले आऊँगा।'

यह कहकर वह बड़ी तेज़ी से पलटा और वापस जामुन के उस पेड़ के पास पहुँचा। बन्दर ने जो तेज़ी से घड़ियाल को आते देखा तो वह बोला—'दोस्त, तुम तो बिल्कुल नंग-धड़ंग चले आ रहे हो। चलने का सामान तक नहीं किया!'

घड़ियाल ने पास आकर कहा—'भाई, क्या बताऊँ! तुम्हारी भावज की यह मर्ज़ी है कि वह चलते वक़्त तुम्हारी दावत ज़रूरी करेंगी। घर पर दावत का सारा सामान तैयार है। इसीलिए दौड़ा चला आ रहा हूँ। बस, तुम्हारे चलने की देर है।'

बन्दर ने हर तरह से आनाकानी की। लेकिन घड़ियाल ने एक भी न मानी और कहा कि 'मेरा घर इस नदी के बीच में एक टापू पर है। तुम मेरी पीठ पर सवार होकर चलो। बस आने-जाने की ही देर लगेगी।'

लाचार होकर बन्दर घड़ियाल की पीठ पर सवार हो गया और वह तैरता हुआ तेज़ी से अपने घर की ओर चला। घड़ियाल बार-बार अपने मन में यही सोच रहा था कि अगर बन्दर ने अपना कलेजा देने से इन्कार किया तो क्या होगा! बन्दर ने उसे जो सोच-विचार में देखा तो भाँप लिया कि ज़रूर वह किसी फ़िक्र में है। उसने पूछा—'दोस्त, क्या बात है? तुम किसी फ़िक्र में डूबे हुए-से मालूम हो रहे हो!'

घड़ियाल ने बहुत टालना चाहा, पर बन्दर ने एक भी न सुनी और कहा कि 'अगर तुम मुझे न बताओगे तो मैं पानी में गिरकर मर जाऊँगा।'

आख़िरकार घड़ियाल ने सारा क़िस्सा उसे बताया। यह सुनकर बन्दर का सिर चकरा गया और उसने अपने मन में सोचा कि 'अब ख़ैर नहीं! सब घड़ियाल मिलकर मुझे मार डालेंगे।' पर बन्दर था बड़ा चालाक। वह बनावटी हँसी हँसकर घड़ियाल से कहने लगा—'भलेमानस, यह बात तुमने चलते वक़्त ही क्यों न बता दी थी? मैं तो अपना कलेजा उस पेड़ के खोखले ही में रखकर भूल आया हूँ। भला, मैं तुम्हें कलेजा देने से भी कभी इन्कार करूँगा? अरे, तुम्हारे लिए तो जान तक हाज़िर है। तुम मुझे वापस ले चलो। चलो, फ़ौरन् कलेजा लेकर वापस आएँ!'

घड़ियाल यह सुनकर बन्दर को फिर किनारे पर वापस ले आया। बन्दर फ़ौरन् कूदकर पेड़ की चोटी पर पहुँच गया और वहाँ से चिल्लाकर बोला—'अरे बेवकूफ़, दग़ाबाज़ ! तू इस लायक़ कहाँ कि तुझे मैं अपना कलेजा दूँ ! क्या तू मुझे अपने जैसा ही बेवक़ूफ़ समझता है ? अगर तू डाल-डाल चलेगा तो मैं पात-पात चल सकता हूँ !'

बुरे का बुरा अंत

एक केकड़ा किसी तालाब के किनारे बहुत दिनों से रहता था और तालाब की मछलियाँ खाकर अपने दिन काटता था। केकड़े ने अपनी जवानी के दिन तो बड़े मज़े में बिता दिए, परन्तु जब बुढ़ापा आया तो उसकी आँखों की रोशनी ग़ायब हो गई, हाथ-पाँव की ताक़त ने जवाब दे दिया, हिलने-चलने की भी अब पहले जैसी क़ूवत न रही और शिकार करना मुश्किल हो गया। अब केकड़े को बड़ी फ़िक्र हुई। वह हाथ मल-मलकर कहने लगा कि 'अफ़सोस, अगर जवानी के दिनों में आज के दिन का ख़याल करता तो यह बुरी गत हर्गिज़ न बनती ! मगर मैंने अपनी सारी उम्र खेल-कूद और हँसी-मज़ाक में गुज़ारी और बुढ़ापे के लिए कुछ जमा-पूँजी रखने का एक दिन भी ख़याल न किया। जो आया ख़त्म किया, जो मिला साफ़ ! यारों के जमघट जमे हैं और हम हैं, रात-दिन सैर-सपाटे की ही धूम है, मज़ाक है, मसख़रापन है, जवानी की कमाई बेभाव लुट रही है ! अगर उस ज़माने में मालूम होता कि उम्र धूप की तरह ढलती है और बुढ़ापा अपने लम्बे-लम्बे क़दम उठाता हुआ मेरी तरफ़ बढ़ता चला आ रहा है तो कुछ तो बंदोबस्त कर ही लेता ! अब जबकि ज़िन्दगी की शाम हो गई और बदन के जोड़-जोड़ ने जवाब दे दिया तो अफ़सोस करने से क्या मिलेगा ! गए हुए दिन वापस नहीं आ सकते—अब पछताए होत क्या जब चिड़िया चुग गई खेत ! लेकिन पेट तो माँगता ही है ! इसके लिए इस बुढ़ापे में भी कुछ न कुछ तो करना ही पड़ेगा।'

यह सोचते-सोचते उस केकड़े के दिमाग़ में एक तरकीब आई और उसने एक कछुए से ढिंढोरा पिटवाकर तालाब की सब मछलियों को जमा किया और उनसे बोला कि 'ऐ मेरी पुरानी संगिनियो, तुम जानती हो कि मैं इस तालाब के किनारे बरसों से रहता हूँ और तुम्हारी ही बदौलत अपनी ज़िन्दगी गुज़ारता हूँ। मैंने अपनी सारी उम्र तुम्हारे साथ-साथ बसर की

उस दिन से केकड़े ने यह ढर्रा बना लिया कि हर दिन दो-तीन मछलियों को अपनी पीठ पर लादकर उस नए तालाब तक ले जाने के बहाने वहाँ से ले जाता……
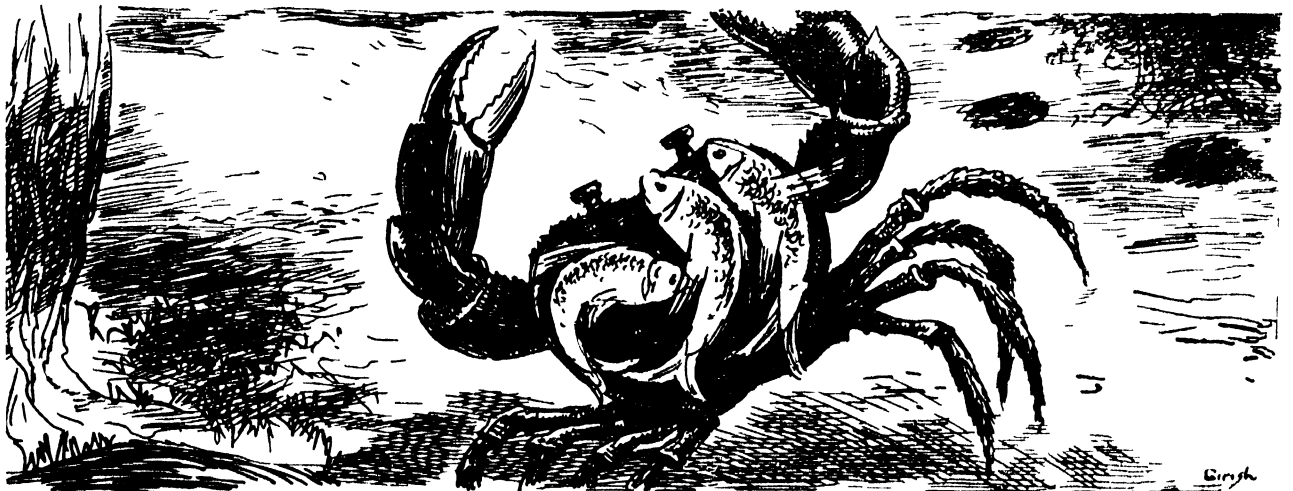
है और इतने दिन साथ रहने-सहने के कारण तुम्हारा दुःख मेरा दुःख और तुम्हारा सुख मेरा सुख हो गया है! तुम्हारा मुझ पर बड़ा एहसान है, क्योंकि मैं तुम्हारे ही टुकड़ों से पला हूँ! इसीलिए मैं यह अपना फ़र्ज़ समझता हूँ कि अगर तुम पर कोई बला आनेवाली हो तो मैं तुम्हें उसकी ख़बर कर दूँ।'

मछलियों ने केकड़े के ये शब्द जो सुने तो वे बहुत परेशान हुईं और कहने लगीं कि 'बाबा, गोकि तुम हमारे जानी दुश्मन हो, फिर भी तुम हमसे ज़्यादा अक़्लमन्द और होशियार हो। फिर बुढ़ापे ने तुम्हें और भी ज़्यादा समझदार बना दिया है। भला बताओ तो कि वह ऐसी कौन-सी बला है, जो हम पर आनेवाली है और उससे बचने की तदबीर क्या है?'

केकड़े ने कहा—'प्यारी बेटियो, आज कुछ मछुए इधर से जा रहे थे। मैंने अपने कानों से उन्हें यह कहते हुए सुना कि इस तालाब में मछलियाँ बहुत उम्दा और बहुत ज़्यादा तादाद में हैं, इसलिए यहाँ जाल डाला जाय। मछुओं की यह बात सुन-कर मेरा तो ख़ून सूख गया! इसलिए कि मछुओं ने अगर सचमुच यहाँ जाल डाला और इस तालाब की सब मछलियों को पकड़ ले गए तो मेरा गुज़ारा क्योंकर होगा! मैं तो तुम्हारे ही सहारे बसर करता हूँ।'

मछलियों ने कहा—'फिर तुमने क्या सोचा?'

केकड़े ने जवाब दिया—'उस वक़्त से मैं इसी फ़िक्र में हूँ कि आख़िर क्या होगा। अगर जवान होता तो अपने दस-बीस भाई-बंदों को जमा करके मछुओं से लड़-भिड़ सकता, मगर बुढ़ापे के कारण मुझमें अब वह ताक़त नहीं कि दुश्मन का मुक़ाबला कर सकूँ!'

मछलियों ने गिड़गिड़ाकर कहा—'पर बाबा, हम तो तुम्हारे ही भरोसे पर इस तालाब में रहती आई हैं। अब अगर तुम ऐसा कहोगे तो हम क्या करेंगी? कहाँ जायँगी?'

केकड़े ने यह सुनकर गर्दन झुका ली और बहुत देर तक सोचता-विचारता रहा। थोड़ी देर बाद उसने सिर उठाया और कहा—'सिर्फ़ एक बात ख़याल में आती है। बड़े-बूढ़ों ने कहा है कि जिस जगह रहने की ताक़त न हो उस जगह को छोड़ दो और दूसरी जगह चले जाओ। इस ख़तरे से बचने की भी यही तरकीब हो सकती है।'

मछलियों ने कहा—'उम्र भर तालाब में बन्द रहनेवाली हम बेचारी मछलियाँ क्या जानें कि इस वक़्त ख़तरे से बचने के लिए कहाँ जाना चाहिए। हाँ, तुम दुनिया भर में घूमनेवाले हो, तुमने दुनिया देखी है। तुम ही हमें सलाह दो कि हम कहाँ जाकर मुँह छिपाएँ?'

केकड़े ने कहा—'यह काम तुम मुझ पर छोड़ दो। यहाँ से कुछ ही दूरी पर एक तालाब है—बहुत बड़ा और बहुत उम्दा। उसका पानी भी बहुत साफ़ है और सब से बड़ी बात यह है कि गर्मी, बरसात और जाड़े हर मौसम में वह भरा रहता है। अगर तुम सब की राय हो तो फिर वहाँ से अच्छी कोई जगह नहीं।'

मछलियों ने कहा—'हम इतनी दूर जायँगी कैसे और हमें वहाँ ले जायगा कौन?'

केकड़े ने कहा—'तुम्हें ले जाने की ज़िम्मेदारी मैं लेता हूँ।'

मछलियों ने केकड़े को बहुत-बहुत धन्यवाद दिया!

उस दिन से केकड़े ने यह ढर्रा बना लिया कि हर दिन दो-तीन मछलियों को अपनी पीठ पर लादकर उस नए तालाब तक ले जाने के बहाने वहाँ से ले जाता और जब वह काफ़ी दूर निकल जाता तो एक टीले की आड़ में उन मछलियों को मारकर अपना पेट भर लेता था! वहाँ से लौटकर वह उस नक़ली तालाब की तारीफ़ में अचरजभरे क़िस्से बयान किया करता। कभी कहता कि 'वे सब मछलियाँ उस नए तालाब को देखकर इतनी ज़्यादा ख़ुश हुईं कि मेरे उतारने से पहले ही उछलकर वे पानी में कूद गईं।' कभी कहता कि 'अजी, वहाँ की बहार क्या बताऊँ! जितनी भी मछलियाँ अब तक वहाँ गईं

हैं, उनका वापस आने को जी ही नहीं चाहता। सब हर वक़्त खेल-कूद और छेड़-छाड़ में लगी रहती हैं।' कभी उस तालाब की मछलियों की तरफ़ से वह यहाँ की बची-बचाई मछलियों के नाम सँदेशा लेकर आता और कहता कि 'उन्होंने सब को बहुत-बहुत याद किया है और वे कहती हैं कि जिस तरह भी हो सके जल्दी ही यहाँ आ जाओ!'

केकड़े की इन बातों से तालाब की मछलियों में बड़ी हलचल पैदा हो गई थी। हर मछली यह चाहती थी कि सब से पहले वही उस नए तालाब में पहुँचे। जब केकड़ा मछलियों को ले चलने के लिए किनारे पर आता तो सारे तालाब की मछलियाँ सिमटकर इकट्ठा हो जातीं और हर मछली यही कहती कि 'बाबा, पहले हमें ले चलो!' केकड़े की चापलूसी की जाती, हाथ जोड़े जाते और पैर छुए जाते! इस पर वह कहता—भाई, घबड़ाओ नहीं! किसी को भी यहाँ नहीं छोड़ूँगा। सब को बारी-बारी से उस तालाब में पहुँचा दूँगा!'

एक दिन उस बदमाश केकड़े ने तालाब के कछुए को मछलियों से चुपके-चुपके कुछ बातचीत करते हुए पाया। फ़ौरन उसे यह खटका हुआ कि 'अगर कछुए ने मछलियों को ज़रा भी भड़का दिया तो फिर कोई भी मछली मेरे पास न फटकेगी। इसलिए अच्छा है कि सब से पहले इसे ही ठिकाने लगाया जाय। फिर मछलियाँ होंगी और मैं!' यह सोचकर उसने उस कछुए को अपने पास बुलाया और बड़े प्यारभरे शब्दों में उससे बोला—'भतीजे! तुमने अभी तक चलने का सामान नहीं किया!'

कछुआ कहने लगा—'मैं तो रोज़ इसी कोशिश में रहता हूँ कि यहाँ से निकलूँ। लेकिन आपको मछलियों ही से फ़ुर्सत कब है?'

केकड़े ने कहा—'तो फिर आज तुम ही चले चलो! आओ, मेरे कंधे पर सवार हो जाओ। मैं तुम्हारा बेड़ा पार लगा दूँगा! चाहता यह हूँ कि सबको जल्दी ही उस तालाब में पहुँचा दूँ।'

कुछ दूर चलने पर कछुए ने रास्ते में चारों तरफ़ मछलियों की हड्डियाँ बिखरी हुई देखीं……

कछुआ यह सुनकर केकड़े की पीठ पर सवार हो गया और केकड़ा उसको लेकर चल दिया। कुछ दूर चलने पर कछुए ने रास्ते में चारों तरफ़ मछलियों की हड्डियाँ बिखरी हुई देखीं!

उसे अचंभा हुआ कि आख़िर इतनी मछलियों का शिकार यहाँ किसने और कब किया है ! अचानक उसका माथा ठनका और यह विचार उसे आया की कहीं यह केकड़ा ही इस बहाने मछलियों का शिकार न करता रहा हो ! यह विचार आते ही उसके बदन में एक सनसनी-सीं दौड़ गई ! और आगे चलने पर उसने मछलियों की हड्डियों के ढेर के ढेर पड़े देखे। यह देखकर उसे पूरा भरोसा हो गया कि यह इस बदमाश केकड़े ही की करामात है ! अब उसे भी अपनी जान की पड़ी। पर संकट के समय में चाहे आदमी हो चाहे जानवर सभी में एक अजीब ताक़त पैदा हो जाती है । यही बात मौत को सिर पर सवार देखकर उस कछुए की भी हुई । उसने ज़ोर लगाकर उस केकड़े का टेंटुआ पकड़ लिया और पूरी ताक़त से उसे दबा दिया । केकड़े में कुछ दम तो पहले से ही न था । इधर थकान के मारे वह हाँपने भी लगा था । एक ही झटके में मुर्दा होकर वह ज़मीन पर गिर पड़ा । इस तरह आख़िर बुरे का बुरा ही अंत हुआ !

कछुआ अपनी जान लेकर भागा और इस तरह हज़ारों मछलियों को उस बदमाश केकड़े के चंगुल से बचाकर तालाब में वापस लौट आया ।

जिसका काम उसे ही साजे

एक बार एक राजा को अपनी राजधानी में एक चिड़ियाख़ाना बनवाने का शौक़ चर्राया । इसके लिए उसने एक शानदार इमारत तैयार कराई । इस इमारत के चारों तरफ़ एक ख़ूबसूरत बाग़ भी लगवाया, जिसमें तरह-तरह के जंगली, पहाड़ी और समुद्री पौधे जमा किए । राजा ने चिड़ियाघर को कई हिस्सों में बाँट दिया था । एक हिस्सा समुद्री जानवरों के लिए था, जिसमें तरह-तरह की मछलियाँ, कछुए, मगर, घोंघे वग़ैरह रक्खे गए थे । दूसरा हिस्सा शेर, चीतों, तेंदुओं, हाथी, ज़िराफ़, भालू, भेड़ियों, लोमड़ियों, वग़ैरह जंगली जानवरों के लिए था और तीसरा हिस्सा था आसमान में उड़नेवाले तरह-तरह के पखेरुओं के लिए, जिनमें बुलबुल से लेकर गिद्ध तक सभी पक्षी थे !

इस चिड़ियाघर की सबसे बड़ी ख़ूबी यह थी कि इसकी देखभाल का इन्तज़ाम भी जानवरों के ही सुपुर्द किया गया

बाईं तरफ़ से एक बन्दर एक तिपाई लेकर आगे बढ़ा और दाहिनी तरफ़ से वह बूढ़ा बंदर हार लिये हुए निकला और उस तिपाई पर चढ़कर उसने राजा की गर्दन में फूलों का हार डाल दिया......

था। इस काम के लिए बहुत-से बन्दर रक्खे गए थे, जो इस चिड़ियाघर की पूरी देखभाल करते थे। वे शेर, चीते, भेड़िए, लोमड़ी, गीदड़ और कुत्ते से लेकर मछलियों, मुरग़ाबियों, केकड़ों, कछुओं, घड़ियालों तक के लिए अपनी-अपनी पसन्द की खाने की चीज़ों का बन्दोबस्त करते थे और सबके रहने की जगह की सफ़ाई भी करते थे। वे सबको वक़्त पर दाना-पानी देते और सबकी देखभाल और हिफ़ाज़त के ज़िम्मेदार थे। सिर्फ़ एक आदमी दारोग़ा के तौर पर इन बन्दरों का अफ़सर था, जो उनसे वक़्त पर ये सब काम लेता था और उस चिड़ियाख़ाने की आमदनी और ख़र्च का हिसाब-किताब लिखता था।

ये बन्दर बड़ी मेहनत और दिलचस्पी के साथ अपना-अपना काम पूरा करते थे और क्या मजाल थी कि किसी जानवर को किसी तरह की भी शिकायत करने का मौक़ा मिले। कारण यह था कि राजा साहब ने चिड़ियाख़ाना क़ायम करने के बाद बन्दरों को सिखाने के लिए कुछ दिनों तक बहुत-से जानकार आदमियों को इन सब कामों क लिए नौकर रख लिया था। राजा साहब के ये नौकर जो भी काम करते, बन्दर ग़ौर से उसे देखते रहते थे। बन्दर में यह एक ख़ास ख़ूबी होती है कि वह आदमी की नक़ल बहुत जल्दी और बड़े शौक़ से उतारता है और फिर उस काम में ऐसा सध जाता है कि बिना कहे ही वैसा ही काम करने लगता है। सर्कस के बन्दरों को इसी तरह सिखाने के बाद बड़े-बड़े कमाल के काम करते हुए सभी ने देखा होगा। मामूली मदारी तक अपने बंदरों को ऐसा सधा लेते हैं कि वे उनके हुक्म पर आदमी की तरह नाचते, बनैटी चलाते, सलाम करते और कलामुंडी खाने लगते हैं। योरप-अमेरिका के कई शौक़ीन लोग तो बन्दरों से डाक बँटवाने, हजामत बनवाने, मेज़ पर खाना सजाने और घर की सफ़ाई कराने तक का काम लेते हैं, और बन्दर इन कामों को बड़ी होशियारी से करते हैं। बन्दर को घोड़े पर चढ़ते, तलवार चलाते और अजीब-अजीब नक़लें करते हमने भी देखा है। दिल्ली के चाँदनी चौक में

राजा ने देखा कि चिड़ियाघर का पूरा इंतज़ाम यही बंदर कर रहे हैं। कुछ बंदर शेरों के पिंजड़े साफ़ करने में लगे हैं। कुछ भालुओं को खाना खिला रहे हैं......

एक दुकान पर एक बन्दर से बड़ा अजीब काम लिया जाता था, और वह यह था कि वह दिन भर छत के पंखे की

बंदरों ने बाग़ के तमाम पौधों को उखाड़-उखाड़कर उनकी जड़ें देखना शुरू किया··· ····· ··················

रस्सी खींचता रहता था। जिस काम के लिए दस रुपए महीने के नौकर की ज़रूरत पड़ती, उसे वह जानवर बड़ी ख़ूबी से पूरा कर देता था! इन राजा साहब ने भी बन्दरों की यही ख़ूबी देखकर उन्हें अपने चिड़ियाघर का इन्तज़ाम करने के लिए सधा लिया था। दारोग़ा का काम सिर्फ़ यही था कि वह दूर से बैठा हुआ इन बन्दरों को देखता रहे। वह दारोग़ा क्या था, इन बंदरों का मदारी-सा था, क्योंकि उसके डंडे के डर से ही वे ठीक तरह से अपना-अपना काम करते थे!

एक बार राजा साहब चिड़ियाघर की सैर के लिए आए। उस समय चिड़ियाघर के दारोग़ा ने उनके आने की ख़बर सुनकर बन्दरों की होशियारी और इन्तज़ाम करने की ख़ूबी दिखाने के लिए ख़ास तरह का बन्दोबस्त किया। चिड़ियाघर के फाटक पर गोरखा सिपाहियों के बजाय बन्दरों की एक टुकड़ी ख़ाकी जाकट पहने और टोप-पतलून चढ़ाए खड़ी थी। उनकी टोपियों पर 'बन्दर बटालियन' ये शब्द कढ़े हुए थे। इन बन्दर सिपाहियों के हाथों में छोटे-छोटे हथियार भी थे और उन्हें लेकर वे ऐसे क़ायदे से सीधे खड़े थे जैसे सचमुच ही सिपाही हों! ज्योंही राजा बहादुर फाटक के पास पहुँचे, उस 'बन्दर बटालियन' के जवानों ने उन्हें सलामी दी। राजा साहब बन्दरों की इस फ़ौज को देखकर हँसते-हँसते लोट-पोट हो गए और सलाम का जवाब देते हुए आगे बढ़े।

रास्ते में दोनों तरफ़ बन्दर क़तार बाँधे खड़े थे। इन क़तारों में एक बन्दर फूलों की टोकरी लिये हुए था तो उसके पास का दूसरा बन्दर टोकरी में हाथ डाले फूल बखेरने के लिए तैयार था। दोनों बन्दरों के सिर झुके हुए थे। यही सिलसिला फाटक से लेकर दूर तक चला गया था। जब राजा साहब फाटक से आगे बढ़े तो पग-पग पर इन क़तारों के बन्दर उनके रास्ते में फूल बरसाने लगे। एक बूढ़े बन्दर को यह सिखाया गया था कि वह एक जगह पर राजा को फूलों का हार पहनाए। जब राजा साहब पास पहुँचे तो बाईं तरफ़ से एक बन्दर एक तिपाई लेकर आगे बढ़ा और दाहिनी तरफ़ से वह बूढ़ा बन्दर हार लिये हुए निकला और उस तिपाई पर चढ़कर उसने राजा की गर्दन में फूलों का हार डाल दिया। राजा साहब बन्दर की यह कार्रवाई देखकर दंग रह गए!

इन बन्दरों की होशियारी और क़ायदे की पाबन्दी देखकर राजा को बहुत ही अचरज हो रहा था। बन्दरों का दारोग़ा राजा साहब के पीछे-पीछे चल रहा था और हर बात समझाता जाता था। राजा ने देखा कि चिड़ियाघर का पूरा इन्तज़ाम यही बन्दर कर रहे हैं। कुछ बन्दर शेरों के पिंजड़े साफ़ करने में लगे हैं। कुछ भालुओं को खाना खिला रहे हैं। कुछ मछलियों के हौज़ का गन्दा पानी निकाल कर पम्प से दूसरा साफ़ पानी भर रहे हैं। मतलब यह कि हर बन्दर अपने-अपने काम पर डटा खड़ा है। यह बात नहीं है कि कोई आलस और सुस्ती के मारे दुम सिकोड़े उकडूँ बैठा हो और उसकी बँदरिया उसकी पीठ खुजला रही हो! राजा साहब यहाँ का इन्तज़ाम देखकर बहुत ख़ुश हुए। उन्होंने बन्दरों को मिठाई खिलवाई और दारोग़ा को भी काफ़ी इनाम दिया और कहा कि 'आज बन्दरों ने सचमुच ही यह कहावत ग़लत कर दिखाई कि जिसका काम उसे ही साझे!'

इस चिड़ियाख़ाने का बढ़िया इन्तज़ाम देखकर राजा साहब पास ही लगाए गए अपने बाग़ में आए, जिससे उन्हें बड़ी दिलचस्पी थी। इस बाग़ का इन्तज़ाम कुछ मालियों के सुपुर्द था। राजा ने देखा कि बाग़ एकदम उजड़ा पड़ा है। क्यारियाँ सूखी पड़ी हैं। नालियाँ टूटी हुई हैं। नन्हे-नन्हे पौधे मुरझा रहे हैं। ऐसा मालूम होता है कि न उस बाग़ का कोई रखवाला है और न कोई देखभाल करनेवाला। अपने उस क़ीमती बाग़ को इस ख़राब हालत में देखकर राजा साहब को बहुत रंज हुआ और उन्होंने कहा कि 'इस बाग़ के मालियों से तो चिड़ियाघर के ये बन्दर ही कहीं ज़्यादा होशियार और काम के पाबन्द हैं। मैंने हज़ारों रुपए ख़र्च करके यह बाग़ लगवाया था और मैं चाहता था कि हिन्दुस्तान में इसकी जोड़ का बाग़ कहीं न मिले। पर मुझे ऐसा लगता है कि मैंने जितने आदमी इसकी देखभाल के लिए रक्खे थे, उन्होंने मुफ़्त की तनख़्वाहें उड़ाईं और मेरे बाग़ को हरा-भरा रखने के बजाय उसे उजाड़ कर दिया। अब मैं इस बाग़ की देखभाल भी इन्हीं बन्दरों को ही सौंप दूँगा। मैं आदमियों से बाज़ आया!'

यह कहकर राजा ने उन बन्दरों के दारोग़ा को बुलवाया और उसे हुक्म दिया कि वह फ़ौरन् बन्दरों की एक टोली को इस बाग़ में भेज दे और उन्हें पानी खींचने, पौधों को सींचने और बाग़ की रखवाली करने का तरीक़ा बता दे। दारोग़ा ने ऐसा ही किया। इन बन्दरों का जमादार एक पुराना बन्दर था। उसने अपनी टोली के तमाम बन्दरों को जमा करके कहा कि 'भाइयो, राजा साहब को हमारी होशियारी और मेहनत पर पूरा भरोसा है। अब हमारा फ़र्ज़ यह है कि हम अपने मालिक की नौकरी को अपने आराम से भी बढ़कर समझें। पानी देने में हमें होशियारी से काम लेना चाहिए। कहीं ऐसा न हो कि ज़्यादा पानी से पौधे गल जाएँ। पर सबसे पहले हमें यह मालूम कर लेना चाहिए कि बाग़ के किस पौधे को कितने पानी की ज़रूरत है। जब हमें यह मालूम हो जाएगा तो सुबह-शाम इतना ही पानी हम पौधों को दिया करेंगे।'

बन्दरों ने पूछा कि 'यह कैसे मालूम होगा कि किस पौधे को कितने पानी की ज़रूरत है?' इस पर जमादार बन्दर ने जवाब दिया कि 'यह बात मालूम करने के लिए हर पौधे को उखाड़कर उसकी जड़ों का फैलाव देखना चाहिए, ताकि यह मालूम हो सके कि वह कितना पानी चूस सकता है!'

फ़ौरन् ही उसके हुक्म के अनुसार बन्दरों ने बाग़ के तमाम पौधों को उखाड़-उखाड़कर उनकी जड़ें देखना शुरू किया! इस तरह वह बाग़ कुछ ही घंटों में एक चौपट मैदान-सा हो गया!

जब बंदरों के दारोग़ा ने आकर बाग़ को इस हालत में देखा तो वह भौंचक्का रह गया और बरबस ही उसके मुँह से वही पुरानी कहावत निकल गई कि 'जिसका काम उसे ही साझे!'

जैसा गुरु वैसा चेला

एक बार किसी शेर के यहाँ बच्चा पैदा हुआ। बरसों से उस शेर को संतान की चाह थी, क्योंकि वह अब बुड्ढा और कमज़ोर हो गया था और दिन पर दिन उसे शिकार खेलने में एक मददगार की ज़रूरत मालूम होने लगी थी। उसे यह भी फ़िक्र थी कि मेरे बाद इस जंगल के राज्य का कामकाज कौन सँभालेगा। कौन सब जानवरों पर हुकूमत करेगा? आख़िर जब भगवान् ने उसकी टेर सुनकर इस बुढ़ापे में उसे संतान दी तो उसकी ख़ुशी का क्या ठिकाना था! पर जब बच्चा कुछ बड़ा हो चला तो बूढ़े शेर को सबसे पहली फ़िक्र यह हुई कि उसकी शिक्षा के लिए कोई योग्य गुरु तलाश करे जो कि उसे राजपाट का तमाम कामकाज और इतनी बड़ी हुकूमत के इन्तज़ाम का सारा ढर्रा अच्छी तरह से खेल ही खेल में सिखला दे। इस काम के लिए शेर ने अपने सारे राज्य में छानबीन कराई, लेकिन कोई अच्छा-सा उस्ताद कहीं भी न दिखाई दिया।

शेर चाहता था कि अपने इस इकलौते बच्चे को लड़ने, शिकार खेलने और जानवरों के मुक़दमों-मामलों का सही-सही फ़ैसला करने की उम्दा-से-उम्दा सीख दी जाय और उसको ऐसा बहादुर बना दिया जाय कि भाले की नोक पर भी सीना रख देने में वह न हिचकिचाए ! कई दिनों तक शेर इस मामले पर सोचता-विचारता रहा, लेकिन कोई तरीक़ा उसकी समझ में न आया। शेरनी ने भी अपने पड़ोसियों से कई बार इस बारे में कहा, लेकिन वे भी किसी लायक़ उस्ताद का पता न बता सके।

आख़िरकार जब बच्चा काफ़ी बड़ा हो गया तो शेरनी ने शेर से कहा—'जब तक कोई अच्छा उस्ताद न मिले, तब तक के लिए इसे लोमड़ी ही के सुपुर्द क्यों न कर दिया जाय, जो पड़ोस ही में रहती है ?'

शेर ने कहा—'लोमड़ी यों तो बहुत तेज़ और होशियार होती है, लेकिन साथ ही वह झूठ बोलने की भी आदी होती है। अगर बच्चा उसकी संगत में रहा तो बड़ा फ़रेबी और झूठ बोलनेवाला बन जायगा। मैं अपने इकलौते को ऐसा चालाक भी बनाना नहीं चाहता कि वह बदमाश बन जाय।'

शेरनी ने कहा—'तो फिर किसी तेंदुए को ही फ़िलहाल इस काम के लिए नौकर रख लो।'

शेर ने जवाब दिया—'हाँ ! इसमें और तो कोई हर्ज़ नहीं, लेकिन इतना डर लगता है कि तेंदुआ बहुत तेज़ मिज़ाज-वाला और भड़भड़िया होता है। ज़रा-ज़रा-सी बात में बिना सोचे-समझे वह लड़ने-मरने को तैयार हो जाता है। वैसे तो यह बहादुरी की ही निशानी है, लेकिन जो ऐसा होता है वह हमेशा तकलीफ़ उठाता है। मैं अपने बच्चे को ऐसे तुनुक़-मिज़ाज को क्योंकर सौंप दूँ ?'

शेरनी बोली—'तो फिर चीते ही की सुपुर्दगी में उसे रख दो। वह शिकार खेलना तो ख़ूब सिखा देगा !'

शेर ने कहा—'भई, सिर्फ़ शिकार खेलना जान लेने ही से काम थोड़े ही चलता है ! तुम भी बिना सोचे-समझे बात कह दिया करती हो ! तुम जानती हो कि चीता कितना मतलबी और गरज़मन्द होता है ! मैं अपने बेटे को उसके हवाले करके लालची बना देना नहीं पसन्द करता।'

शेरनी ने कहा—'तो फिर हाथी ही से कह दो कि वह रोज़ आकर उसको सब-कुछ सिखा दिया करे।'

शेर ने कहा—'हाथी बड़ा पेटू और सनकी होता है और ये दोनों आदतें बहुत बुरी हैं। अगर बिना सोचे-समझे मेरा बच्चा भी हाथी की तरह पहाड़ से सिर टकरा देना सीख लेगा तो मैं क्या ख़ाक समेटूँगा ?'

शेरनी ने कहा—'तो फिर किसी गीदड़ ही को बुलवा लो। सैकड़ों-हज़ारों गीदड़ तुम्हारे राज्य में रहते हैं और उनमें एक से एक तेज़ और होशियार है।'

शेर ने कहा—'भगवान् बचाए इन गीदड़ों से ? उस्ताद बनाना तो दूर, मैं अपने बेटे को गीदड़ की हवा भी न लगने दूँगा। चोरी और सीनाज़ोरी जिसे सीखना हो वह गीदड़ से सीख ले !'

शेरनी ने कहा—'ख़ैर, गीदड़ नहीं तो बंदर ही सही। वह भी अच्छा ख़ासा समझदार होता है।'

शेर ने कहा—'हाँ, होता तो है, लेकिन इतना डरपोक कि कभी मैदान में क़दम ही नहीं जमाता ! उछलकूद जितनी चाहोगी सिखा देगा, लेकिन साथ ही साथ बातें बनाने, नक़ल उतारने और चुगलियाँ खाने में भी वह उस्ताद बना देगा !'

अब शेरनी का धीरज टूट गया। उसने गुर्राकर कहा—'भई, दुनिया में बिना ऐब का कोई है तो वह सिर्फ़ भगवान् ही है। मैं जिसका भी नाम लेती हूँ, उसमें तुम कुछ न कुछ ऐब निकाल देते हो ! तो फिर आख़िर अपने बच्चे को लंगूर, मगर, कछुआ, अजगर, केकड़ा किसी से भी तालीम दिलाओगे भी कि नहीं ? मुझे तो तुम्हारे लच्छन उसे कुछ सिखाने के नज़र नहीं आते ! मेरा बुढ़ापा आ गया है। क्या जाने किस वक़्त मौत गर्दन दबा दे ! अगर किसी दिन मर गई तो दिल में अपने बेटे को अच्छी सीख दिलाने की उमंग मन ही मन में लेकर मर जाऊँगी।'

शेर ने कहा—'भई, घबड़ाती क्यों हो! ढूँढ़ रहा हूँ। कोई न कोई उस्ताद मिल ही जाएगा। ढूँढ़ने से भगवान् भी मिल जाते हैं। जो नाम तुमने अभी गिनाए, उनमें तो उन जानवरों से भी ज़्यादा ऐब हैं, जिनके लिए मैं इन्कार कर चुका हूँ। लंगूर बन्दर का बड़ा भाई होता है। मगर सबसे ज़्यादा सुस्त और धोखेबाज़ है। कछुआ घर पर पड़ा रहने का शौक़ीन होता है, केकड़ा वक़्त पर दग़ा देनेवाला। अब रहा अजगर, सो इसमें शक नहीं कि वह बड़ा लम्बा और तगड़ा होता है। लेकिन उसके डीलडौल और ताक़त को लेकर कोई क्या करे? वह तो इस बात का उम्मेदवार रहता है कि कोई आकर चीर-फाड़कर उसके पेट में कौर डाल दे। मैं इन्हीं सब बातों को सोचकर किसी ऐसे-वैसे को अपने बेटे का गुरु बनाना नहीं चाहता।'

बेचारी शेरनी यह सुनकर चुप हो रही और उस दिन वह बात फिर आई-गई हो गई।

एक दिन पक्षियों का राजा गरुड़, जो पास ही एक पेड़ पर रहता था, उस सिंह से मिलने आया। उसने शेर के बच्चे को देखकर बहुत प्यार किया और कहा कि 'बहुत होनहार मालूम होता है!' शेर ने कहा—'जी हाँ! बहुत समझदार है। लेकिन उसके लिए कोई अच्छा गुरु नहीं मिल रहा है। अगर आपकी निगाह में कोई होशियार उस्ताद हो तो तकलीफ़ करके मुझे ज़रूर ख़बर दीजिएगा!'

गरुड़ ने कहा—'भाई साहब, अगर आप उचित समझें तो इस बच्चे को मैं ख़ुद सिखाऊँ-पढ़ाऊँ! जैसे आपका बच्चा वैसे मेरा बच्चा! मेरे भी अभी कोई संतान नहीं है। दिन भर दुःखी रहता हूँ। रात में भी नींद नहीं आती। जी तरसता है कि मेरे घर में भी कोई दिया जलानेवाला होता। अच्छा है, इस बच्चे से मेरा भी दिल बहल जाया करेगा और इसकी तालीम भी आप जैसी चाहते हैं वैसी हो जायगी।'

शेर ने इस बात को मंजूर कर लिया और अपने बच्चे को सिखाने के लिए उस गरुड़ के सिपुर्द कर दिया!

गरुड़ शेर के बच्चे को अपने घर ले गया और अपने ही बच्चे की तरह उसने उसे पालना-पोसना और सिखाना-पढ़ाना शुरू किया। वह हफ़्ते में एक बार शेर के बच्चे को उसके माँ-बाप के पास लाता था और फिर उसे वापस अपने साथ ले जाता था। गरुड़ ने उसको शिकार खेलने के तरीक़े, शिकार को अपने घर लाने की तरकीबें, अपनी रियाया पर हुकूमत करने के क़ायदे और उनके झगड़े निबटाने के ढंग भी अपने तरीक़े के अनुसार बड़ी ख़ूबी के साथ सिखाए। इस तरह उसने

जब गरुड़ वापस चला गया तब शेर ने अपनी हुकूमत माननेवाले जंगल के सभी जानवरों को बुलवाया। फ़ौरन् लोमड़ियाँ, गीदड़, तेंदुए, चीते, हाथी, घोड़े, हिरन, भेड़िए और दूसरे कई जानवर हुक्म पाते ही हाज़िर हो गए ....
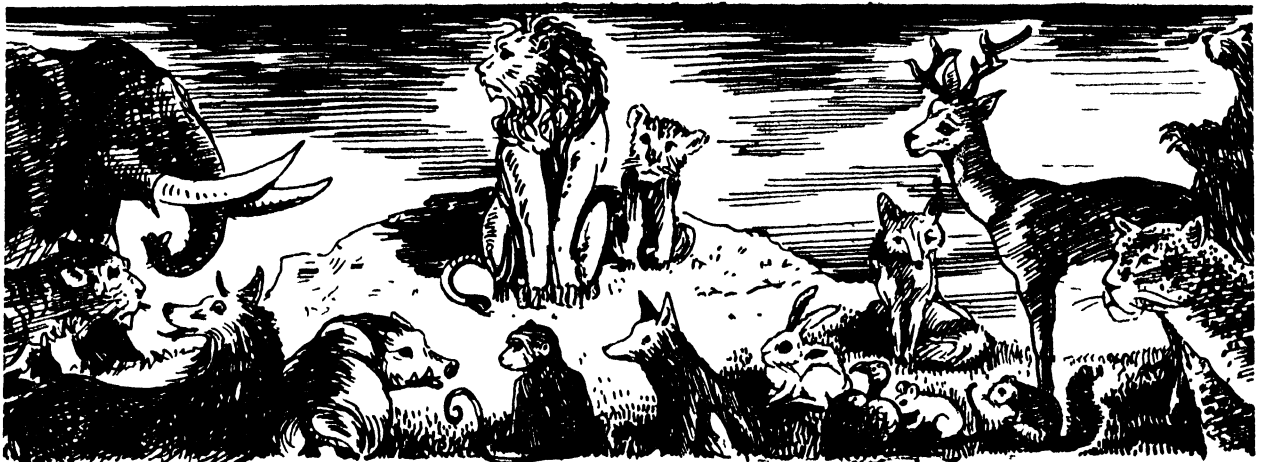
शेर के बच्चे ने जवाब दिया — 'पिताजी, मैं बहुत-सी बातें जानता हूँ। कबूतर, तीतर, फ़ाख़्ता का शिकार किस तरह खेला जाता है ...

उसे सब कामों में उस्ताद बना दिया। जब बच्चा सब-कुछ सीख चुका तो गरुड़ बड़ा ख़ुश होता हुआ एक दिन उसको शेर के पास वापस पहुँचा आया और उससे कहा कि 'देखिए, वह सब हुनर सीखकर कैसा होशियार हो गया है!'

जब गरुड़ वापस चला गया तब शेर ने अपनी हुकूमत माननेवाले जंगल के सभी जानवरों को बुलवाया। फ़ौरन् लोमड़ियाँ, गीदड़, तेंदुए, चीते, हाथी, घोड़े, हिरन, भेड़िए और दूसरे कई जानवर हुक्म पाते ही हाज़िर हो गए। तब शेर अपने बेटे के साथ बड़ी शान-शौक़त के साथ जलसे में आया। शेर के बच्चे को आते देखकर सभी जानवरों ने ख़ुशी के मारे चीख़ना-चिल्लाना शुरू किया। गीदड़ों ने 'हो हो' के नारे लगाए। लोमड़ियों ने भी अपने गाने गाए। चीते ख़ुश होकर गुर्राने लगे। तेंदुए भी उनकी आवाज़ में आवाज़ें मिलाने लगे। मतलब यह कि सभी जानवरों ने अपनी-अपनी बोलियों में शेर और उसके बेटे को बधाई दी!

तब शेर ने अपनी रियाया की ओर प्यारभरी निगाह से देखकर कहा—'भाइयो, अब मैं बहुत बूढ़ा हो गया हूँ और चाहता हूँ कि अपने सामने ही इस बच्चे को अपनी गद्दी पर बिठा दूँ। यह अभी-अभी अपनी तालीम पूरी करके आया है और यह बड़ा अच्छा मौक़ा है कि आज आप अपने सामने ही इम्तहान लेकर अपनी आँखों से इसको देखें-परखें और उसे अपना बादशाह मान लें।'

सब जानवरों ने इस बात पर ख़ुशी ज़ाहिर की। तब शेर ने अपने बच्चे से पूछा—'बेटा, बताओ तुमने राजकाज के बारे में अपने गुरु से क्या-क्या सीखा है?'

शेर के बच्चे ने जवाब दिया—पिताजी! मैं बहुत-सी बातें जानता हूँ। कबूतर, तीतर, फ़ाख़्ता का शिकार किस तरह खेला जाता है, दूसरी चिड़ियों को किस तरह पकड़ा जाता है, चीलों और बाज़ों से शिकार में किस तरह छीना-झपटी की जाती है, पेड़ों पर घोंसला किस तरह बनाया जाता है और अण्डे किस तरह सेये जाते हैं—आप इनमें से हर बात मुझसे पूछ सकते हैं और मैं ठीक-ठीक बता दूँगा। कहिए तो अभी कर दिखाऊँ!'

शेर के बच्चे का यह जवाब सुनकर सभी जानवर हँसते-हँसते लोट-पोट हो गए और शेर ने मारे शर्म और अफ़सोस के

अपनी गर्दन झुका ली। उसने एक आह भरकर कहा—'सच है, जैसा गुरु होगा वैसा ही चेला भी होगा! आख़िर एक पखेरू से इसे सीख दिलाकर और क्या उम्मीद की जा सकती है!'

चुहिया के वर का चुनाव

एक बार एक महात्मा एक नदी के किनारे नहा रहे थे। दोपहर का वक़्त था। सूरज आसमान में तप रहा था। जेठ के दिनों में जब धूप की तेज़ी से पत्थर भी मोम होने लगे तो किसी नदी की ठंडी गोद में बैठ जाने और उसके चाँदी-जैसे साफ़ पानी में नहाने में कितना मज़ा आता है, यह नहानेवाला ही जानता है! महात्मा भी पानी में बड़े मज़े के साथ नहा रहे थे कि इतने में एक चील, जिसके पंजे में एक छोटी-सी चुहिया दबी हुई थी, ऊपर आसमान में उड़ती हुई दिखाई दी। महात्मा की नज़र चील पर जो पड़ी और उन्होंने उस बेचारी चुहिया को उसके पंजे में दबा हुआ पाया तो उनको बहुत दुःख हुआ और गिड़गिड़ाकर उन्होंने भगवान् से विनती की कि 'हे परमात्मा! इस बेचारी की जान इस हत्यारी चील से बचा!' महात्मा बड़े पहुँचे हुए महापुरुष थे। कहने भर की देर थी कि चुहिया चील के पंजे से छूट पड़ी। महात्मा ने फ़ौरन् अपनी चादर का पल्ला फैला दिया और वह चुहिया उसमें आ गिरी। वह थर-थर काँप रही थी। साधु ने फिर परमात्मा से प्रार्थना की कि 'हे पालनेवाले! तूने जब इस बेचारी को मौत के मुँह से बचाया है तो इतनी दया और कर कि इसे दूसरा जन्म दे और चुहिया से इसे लड़की बना दे! मेरे कोई बालक नहीं है। इसी को अपनी बच्ची मानकर पाल लूँगा।'

ईश्वर के भी अजीब खेल होते हैं! उसकी महिमा का कुछ पार नहीं! देखते ही देखते वह चुहिया एक छोटी-सी ख़ूबसूरत लड़की बन गई! महात्माजी ने उसे छाती से लगा लिया। वह उसे अँगूठा चटाते हुए अपनी स्त्री के पास लाए और बोले—'परमात्मा को धन्यवाद दो कि आज तुम्हारी गोद भरी!' यह कहकर उन्होंने उसे वह लड़की सुपुर्द करते हुए उसे उस दिन की घटना का पूरा हाल सुनाया। महात्माजी की स्त्री ने बच्ची को गोद में ले लिया और उसका नाम रामदेई रक्खा। दोनों बड़े प्यार से इसको पालने-पोसने लगे। भगवान् की दया से बुढ़ापे में ही उन महात्मा की स्त्री

महात्मा की नज़र चील पर जो पड़ी और उन्होंने उस बेचारी चुहिया को उसके पंजे में दबा हुआ पाया तो उनको बहुत दुःख हुआ और गिड़गिड़ाकर उन्होंने भगवान् से विनती की ......

महात्मा ने रामदेई को बुलाया और सूरज देवता की तर: इशारा करते हुए उससे कहा — 'बेटी ! तुम इनसे व्याह करोगी ?...

के दूध उतर आया और वह लड़की उसका दूध पी-पीकर ख़ूब मोटी-ताज़ी हो गई।

महात्मा और उनकी स्त्री दोनों ही उस लड़की पर जान देते थे। वे कहते थे कि अपने पेट के बच्चे से भी इतना प्रेम नहीं हो सकता, जितना कि इस बच्ची से, जिसे परमेश्वर ने हमारी गोद में डाल दिया है। उन्होंने रामदेई की देखभाल बड़े चाव से करना शुरू किया और समय आने पर वह बड़ी होकर एक सुन्दर युवती बन गई। एक दिन महात्मा ने अपनी स्त्री से कहा कि 'परमात्मा ने यह दुनिया जो रची है और उसे आबाद करने के लिए आदमी को पैदा किया है तो साथ-ही-साथ उसने समाज का ढंग ठीक बनाए रखने के लिए कुछ क़ायदे भी बना दिए हैं। माँ-बाप जिस लड़की को लाड़-प्यार से अपनी गोद में पालते हैं और बचपन में पल भर के लिए भी अलग नहीं होने देते, उसे ही एक दिन आने पर एक अजनबी नौजवान को उम्र भर के लिए सौंप देते हैं। तुम देख रही हो कि रामदेई भी अब जवान हो गई है। तो फिर क्या तुमने उसके लिए कोई वर खोजा है ?'

स्त्री बोली—'जब तुम मौजूद हो तो मुझे क्या ज़रूरत है !'

इस पर महात्मा ने कहा—'अच्छा तो मैं अपनी बच्ची को इतनी बड़ी जगह व्याहूँगा कि देवता भी ताज्जुब करेंगे।'

उनकी स्त्री मुस्कराकर चुप हो गई और रामदेई को मन ही मन आशीष देने लगी।

दूसरे दिन महात्माजी ने हवन किया और मंत्र पढ़ना शुरू किया। थोड़ी देर में सूरज देवता किरनों का मुकुट पहने सामने आ खड़े हुए। महात्मा ने रामदेई को बुलाया और सूरज देवता की तरफ़ इशारा करते हुए उससे कहा—'बेटी ! तुम इनसे व्याह करोगी ?'

रामदेई ने कहा—'पिताजी ! यों तो आप जिसके साथ भी मुझे व्याह देंगे, मैं इन्कार नहीं करूँगी। पर आप मुझे पूछते ही हैं तो यह महाराज तो ज़रा-सी बात में ही गरमा जाएँ ! फिर मेरा इनसे व्याह कैसे होगा ?'

महात्मा ने सूरज देवता से पूछा—'महाराज, क्या इस दुनिया में आप से भी बड़ा कोई और है ?'

सूरज देवता ने कहा—'बादलों के देवता मुझसे भी बड़े हैं, क्योंकि जब वह आसमान में चढ़कर गड़गड़ाहट करते हैं तो मैं भी मारे डर के मुँह छिपा लेता हूँ!'

महात्माजी ने यह सुनकर मंत्र से उन्हें भी बुलाया।

एकाएक बिजली कड़कने लगी। आसमान पर काली-काली घटाएँ छा गईं और उनके बीच बादलों के देवता दिखाई दिए। महात्माजी ने रामदेई से पूछा—'कहो बेटी, तुम इनसे व्याह करोगी?'

रामदेई ने कहा—'इनके मिज़ाज का क्या ठिकाना? दम भर में गरजने लगें। पल भर में बरसने लगें। बरसें तो डुबो दिया। सिमटें तो तरसा दिया!'

महात्माजी ने बादलों के देवता से कहा—'भला कोई आपसे भी बड़ा है?'

बादलों के देवता ने कहा—'हाँ, हवा का देवता मुझसे भी बड़ा है? मैं चाहूँ तो सारी दुनिया को डुबो दूँ। लेकिन मैं उनके सामने नहीं ठहर सकता।'

तब महात्माजी ने हवा के देवता को बुलवाया। एकाएक आसमान में आँधियाँ आने लगीं। हवा के देवता भी आ पहुँचे। फिर महात्माजी ने रामदेई से कहा—'कहो, इनसे व्याह करने के लिए तैयार हो?'

रामदेई ने कहा—'पिताजी, इनका क्या ठिकाना! कभी यहाँ तो कभी वहाँ! यह तो कभी किसी एक बात पर जमना जानते ही नहीं। कभी ऐसे ठण्डे कि बर्फ़ को भी मात कर दें! कभी ऐसे गरम कि आग बरसा दें!'

महात्माजी ने हवा के देवता से पूछा—'अब आप ही यह बताइए कि दुनिया में आपसे बड़ा कौन है?'

हवा के देवता ने कहा—'मैं चाहूँ तो बड़े-बड़े पेड़ों को जड़ से उखाड़कर फेंक दूँ। समुद्र में तूफ़ान मचा दूँ। शहरों को मिट्टी में मिला दूँ। लेकिन एक पहाड़ ही ऐसे हैं कि उनके पैर मैं धरती पर से नहीं उखाड़ सकता।'

महात्माजी ने आख़िरकार मंत्र पढ़कर पर्वतों के देवता को भी बुलवाया।

थोड़ी देर में पहाड़ की तरह सिर ऊँचा उठाए, सीना ताने, पर्वतों के देवता बड़ी शान-शौक़त से आते हुए दिखाई दिए। महात्माजी ने उन्हें दिखाकर रामदेई से कहा—'यह वर तो तुमको पसन्द है?' परन्तु वह फिर कहने लगी—'जिसकी अक़्ल पर पत्थर पड़ेंगे वही इनका साथ ढूँढेगा! यह तो बेहद कठोर और बेडौल हैं और कभी टस से मस भी नहीं होते!'

अब तो महात्माजी का भी धीरज टूटने लगा था। आख़िर पर्वतों के देवता से उन्होंने पूछा—'आपकी उम्र सैकड़ों-हज़ारों बरस की है। भला यह बताइए कि दुनिया में आपसे भी बड़ा कोई है?' इस पर वह देवता बोले—'महात्मा, यों तो परमात्मा ने मेरे जोड़ की कोई भी चीज़ पैदा न की—न सूरज की किरनें मेरा

परमात्मा ने फिर से महात्माजी की बात सुन ली और रामदेई लड़की से एक छोटी-सी ख़ूबसूरत चुहिया बन गई ....

कुछ बिगाड़ सकती हैं और न घनघोर घटाएँ बरस-बरसकर मुझे डुबो सकती हैं। रही हवा सो वह तो मुझे पंखा झलने आती है। न भूचाल मुझे अपनी जगह से हटा सकते हैं और न तूफ़ान मेरे क़दम डगमगा सकते हैं। लेकिन एक जीव ऐसा है जिससे मैं भी मात खा गया हूँ और वह है चूहा! चूहों के तेज़ दाँतों ने मेरे सीने को भी कुरेद डाला है। वे मुझे भी कुतर-कुतरकर फेंक देते हैं! मैं तो सोचता हूँ कि अगर मुझसे भी दुनिया में कोई बड़ा है तो चूहा ही हो सकता है!'

रामदेई ने चूहे का जो नाम सुना तो मुस्कराकर वह कहने लगी—'हाँ पिताजी, मैं तो उसे ही अपना पति बनाऊँगी। मुझे ऐसे ही निडर साथी की तलाश थी, जो पहाड़ों तक को खोखला कर दे।'

महात्माजी बोले—'सच है, हर चीज़ अपनी असलियत की तरफ़ ही जाती है। परमात्मा की मर्ज़ी ही यह है। बेटी तूने सच कहा, सिर्फ़ चूहा ही तेरी ज़िन्दगी का साथी बन सकता है। उसके साथ रहकर ही तू ख़ुश हो सकती है।'

रामदेई ने शर्माकर गर्दन झुका ली। तब महात्माजी ने परमात्मा से फिर विनती की कि 'हे भेदों के जाननेवाले! तू जो कुछ करता है वह अच्छा ही करता है। यह मेरी भूल थी कि मैंने इस चुहिया को लड़की बनाने की प्रार्थना तुझसे की। अब मेरी यही विनती है कि तू फिर उसे वही बना दे जो यह पहले थी!'

परमात्मा ने फिर से महात्माजी की बात सुन ली और रामदेई लड़की से एक छोटी-सी ख़ूबसूरत चुहिया बन गई और उछलती-कूदती पास ही के एक बिल में जा घुसी, जहाँ उसकी ही उम्र का एक चूहा अपनी चमकदार आँखों से उसे घूर रहा था!

गीदड़ गीदड़ रहेगा, शेर शेर

एक शेरनी शिकार की तलाश में किसी जंगल में से होकर जा रही थी। उस बेचारी के कोई संतान न थी और इस तरह बिना बाल-बच्चेवाली होने का रंज उसे मारे डालता था। चलते-चलते रास्ते में उसने कुछ गीदड़ के बच्चों को देखा, जो एक भिट के पास खेल रहे थे। गीदड़ के बच्चों को देखकर शेरनी के दिल में एक हूक-सी उठी और एकाएक उसके मन में यह बात पैदा हुई कि अगर मेरे भी कोई औलाद होती तो मैं कितनी भाग्यवान् होती! शेरनी को देखकर गीदड़ के वे बच्चे अपने भिट की ओर भागे। लेकिन एक छोटा-सा बच्चा मौक़े से बाहर रह गया। शेरनी ने झपटकर उसे मुँह से

शेरनी को देखकर गीदड़ के वे बच्चे अपने भिट की ओर भागे। लेकिन एक छोटा-सा बच्चा मौक़े से बाहर रह गया। शेरनी ने झपटकर उसे मुँह से पकड़ लिया और वैसे ही उसे उठाकर वह चल दी…

पकड़ लिया और वैसे ही उसे उठाकर वह चल दी।

जब वह अपनी कछार में पहुँची तो उसे उस गीदड़ के बच्चे को लाते देखकर शेर को बड़ा ताज्जुब हुआ और वह बोला—'तुम इसे कहाँ से उठा लाई? क्या इसका मांस खाकर कोई रोग लगाओगी?' शेरनी ने कहा—'मैं इसको खान क लिए नहीं लाई, बल्कि हमारे कोई बाल-बच्चा नहीं है, इसलिए हम इससे अपना जी बहला लिया करेंगे।'

शेर ने जवाब दिया—'तुम गीदड़ क बच्चे को गोद लेकर क्या सारी बिरादरी में मेरी नाक कटवाओगी! यह हमारे लिए बड़ी शर्म की बात होगी कि हम गीदड़ को पालें। कहाँ शेर और कहा गीदड़!'

शेरनी ने कहा—'प्रेम की आँखों से देखने पर शेर और गीदड़ सब बराबर हैं।'

आखिर हारकर शेर ने कहा—'जो तुम्हारी मर्ज़ी!'

शेरनी ने गीदड़ के बच्चे को अपना ही बच्चा समझकर बड़े लाड़-प्यार से पालना शुरू किया। उसके लिए वह तरह-तरह की खाने की चीज़ें लाती और लोरियाँ गा-गाकर उसे सुलाती। उसकी देखभाल के लिए उसने एक लोमड़ी को नौकर रख लिया था। इस लोमड़ी के यहाँ कुछ दिन पहले एक बच्चा हुआ था और वह मर गया था। इसलिए उसे भी इस गीदड़ के बच्चे से बहुत प्रेम हो गया और वह अपना मीठा-मीठा दूध पिलाकर उसको पालने-पोसने लगी। कुछ दिन बाद शेर भी उससे हिल गया और ये सब उसे अपनी आँखों का तारा समझने लगे!

जवान होने पर उस गीदड़ के बच्चे ने ख़ूब हाथ-पाँव निकाले! ऐसा मालूम होता था कि वह शेरों से भी बाज़ी ले जाएगा! शिकार में वह हमेशा शेर-शेरनी के साथ रहता और उनका हाथ बँटाता। वह बढ़-बढ़कर इस तरह मुँह मारता, ऐसा गुर्राता कि मालूम होता था मानों उम्र पकने पर वह शेरों से पंजा लड़ाएगा। उसका यह ढर्रा देखकर उसके साथ शेर-शेरनी दोनों का प्रेम दिन पर दिन बढ़ता जाता था। शेर के दबदबे के कारण जंगल के और जानवर भी उसकी उतनी ही इज़्ज़त करते थे जितनी कि शेर के बच्चों की की जाती है। वे उसे राजकुमार की तरह मानते थे!

जवान होने पर उस गीदड़ के बच्चे ने ख़ूब हाथ-पाँव निकाले! ऐसा मालूम होता था कि वह शेरों से भी बाज़ी ले जाएगा.......

अब तो गीदड़ के मानों छक्के छूट गए। उससे और कुछ तो बन न पड़ी। वह अपनी दुम दबाकर 'कों-कों' करने लगा।··· ·········

भगवान् की लीला भी अजीब होती है। दैवयोग से बुढ़ापे में ही उस शेरनी के एक बच्चा पैदा हुआ। सूखे हुए पौधे में मानों फल लग गया! बच्चा बहुत ख़ूबसूरत था और उसके तेवरों ही से बहादुरी टपकती थी। उसे पाकर माँ-बाप की बरसों की उम्मीदें भर आईं। पर उस गीदड़ के बच्चे के साथ उन दोनों का बर्त्ताव फिर भी वही बना रहा जो पहले था। अब दोनों बच्चे एक साथ रहते, एक साथ खेलते-कूदते और साथ ही खाते-पीते थे। शेरनी दोनों को अपने पास बराबर-बराबर लिटाकर सोती और किसी भी वक़्त उनकी देखभाल में कमी न करती थी। एक दिन वह आया कि शेर का यह बच्चा भी जवान हो गया। गीदड़ का बच्चा उसको अपना छोटा भाई समझकर प्यार का बर्त्ताव करता था और शेर का बच्चा भी गीदड़ को बड़े भाई की तरह मानता था।

जब शेर के ये दोनों बेटे जवान हो गए तो उसे उनकी शादी की फ़िक्र हुई। कई जगह उसने कोशिश की, लेकिन मौक़े से किसी जगह उनका रिश्ता मंज़ूर न हुआ। कई लड़कीवाले वर की तलाश में इन दोनों को देखने आए, लेकिन नापसन्द करके चले गए। बात यह थी कि शेर शेर ही ढूँढ़ने आते थे। पर यह शेर कहता था कि पहले अपने बड़े बेटे को ब्याहूँगा, तब छोटे को! भला कोई शेर इस बात को क्यों मंजूर करता कि अपनी बेटी का पल्ला एक गीदड़ के दामन से बाँधे?

एक दिन शेर और शेरनी अपने बच्चों के साथ एक झील के किनारे सैर करने गए। इतने में दूसरी तरफ़ से एक बड़ा ज़बर्दस्त शेर बबर आता दिखाई दिया, जिसके साथ उसकी एक जवान बेटी भी थी। इस शेर ने जो अपने जंगल में दूसरे एक शेर को आते देखा तो अँगड़ाई लेकर वह ज़मीन से उठ खड़ा हुआ। उसे आनेवाले शेर की इस ढिठाई पर बड़ा ग़ुस्सा आ रहा था कि आख़िर इस जंगल में उसने क्यों क़दम रक्खा! जब उस शेर बबर ने यह देखा कि सामनेवाले शेर का जोड़ा अपने बच्चों के साथ मेरे मुक़ाबले के लिए पंजे तौल रहा है तो उसने भी अपनी बेटी से कहा कि 'तैयार हो जाओ! दुश्मन हमला करने के लिए तैयार है!' अब दोनों शेर आमने-सामने आकर खड़े हो गए। उस वक़्त इस शेर का बच्चा तुरंत बहादुरों की तरह आगे बढ़ा और अपने बाप से कहने लगा कि 'पिताजी, अगर आपकी इजाज़त हो तो मैं ही सबसे पहले दुश्मन पर हमला कर दूँ!'

शेर ने कहा—'ज़रा ठहरो!'

यह कहकर उसने गीदड़ के बच्चे की तरफ़ नज़र उठाकर देखा, जिसका डर के मारे अजीब हाल हो रहा था! उसकी दुम टाँगों में दबी हुई थी। जोड़-जोड़ काँप रहा था। चेहरे पर हवाइयाँ उड़ रही थीं। शेर ने उससे डाटकर कहा—'यहाँ आओ!' जब गीदड़ का बच्चा सिमटता-काँपता उसके पास आया तो शेर कहने लगा कि 'तुम्हें मेरे साथ रहते हुए बरसों बीत गए। कितने ही शिकार तुमने मेरे साथ खेले, कितनी बार तुमने मुझे हाथियों से लड़ते हुए देखा। लेकिन अफ़सोस है कि

तुम अब तक ख़तरे के मौक़े पर घबराते हो ! यह तुम्हारा क्या हाल है, जो मैं देख रहा हूँ ! तुम्हें शर्म नहीं आती ?'

गीदड़ के बच्चे ने कहा—'पिताजी, मैं ख़ुद नहीं समझता कि उस शेर बबर की अंगारे जैसी आँखें देखकर क्यों मेरी जान सूखी जाती है ! मैं हर तरह से कोशिश करता हूँ कि अपने को सँभालूँ, लेकिन मेरा मन क़ाबू में नहीं आता !'

शेर यह बात सुनकर हँसा और शेरनी से कहने लगा—'कुछ याद है, मैंने क्या बात कही थी ?'

शेरनी ने कहा—'हाँ, याद है।'

शेर ने कहा—'अब देखो मेरा बहादुर लाल ही मैदान में निकलेगा !'

यह कहकर उसने अपने बच्चे को इशारा किया, जो शेर बबर की बू पाते ही झपट पड़ने के लिए मानों टूटा पड़ रहा था। पर इसके पहले शेरनी ने कहा कि अभी ज़रा ठहरो। इसके बाद वह गीदड़ से बोली कि 'बेटा, तू मेरी गोद में पला है। क्या आज अपने बाप के सामने मुझे इस तरह शर्मिन्दा करेगा ? जा आगे बढ़ और इस दुश्मन का मुक़ाबला कर, जो हमारे ऊपर चढ़कर आया है !'

गीदड़ के बच्चे ने जब देखा कि अब किसी तरह जान नहीं छूट सकती तो मजबूर होकर उसने लड़ने के लिए अपने पंजे तौले। आँखों में उसने बनावटी ग़ुस्सा भी पैदा किया। वह सीने को तानता हुआ बढ़ा तो सही, लेकिन दो क़दम चलने के बाद ही वह फिर दबने-सिमटने लगा और काँपता हुआ वहीं खड़ा रह गया। शेर बबर बड़े ग़ौर से उसे ताक रहा था। जब गीदड़ कुछ पास आया तो उसने अपनी लड़की को इशारा किया। लड़की ने ऐसी एक दहाड़ मारी कि सारा जंगल उसकी आवाज़ से गूँज उठा ! अब तो गीदड़ के मानों छक्के छूट गए ! उससे और कुछ तो बन न पड़ी। वह अपनी दुम दबाकर 'कें-कें' करने लगा !

इधरवाले शेर ने जो गीदड़ के बच्चे का यह हाल देखा तो ग़ुस्से के मारे वह झुँझलाने लगा और अपने बच्चे की तरफ़ देखकर बोला—'बेटा, जाओ और इस डरपोक ने मेरे माथे पर जो कलंक का टीका लगाया है, उसे दुश्मन के ख़ून से धो डालो !'

शेर का बच्चा यह सुनकर शेर की तरह आगे बढ़ा और एक ज़बर्दस्त दहाड़ मारकर वह शेर बबर पर टूट पड़ा। शेर बबर उस बच्चे की इस बहादुरी से बहुत ख़ुश हुआ और पीछे हटकर उसके बाप से कहने लगा कि 'बस ! हमारी-तुम्हारी लड़ाई ख़त्म हुई। तुम्हारे बेटे की बहादुरी और जीवट ने हमारी दुश्मनी को दोस्ती में बदल दिया है। तुम्हारे एक ही बेटा है और मेरे भी एक ही बेटी है। क्यों न हम एक-दूसरे का ब्याह करके आपस में समधी बन जाएँ !'

शेर बबर की यह बात सुनकर इस शेर ने अपनी शेरनी की तरफ़ देखा। उसने भी वह बात मंजूर कर ली और इस शेर के बच्चे से उस शेर बबर की लड़की का ब्याह हो गया। उधर उस गीदड़ का यह हाल था कि न तो वह उस शादी में शामिल हुआ और न फिर किसी ने उसे उस जंगल में ही देखा। बेचारे ने न जाने कहाँ जाकर अपना मुँह छिपाया !

ठोकर खाए बिना अक़्ल नहीं आती

कई सौ बरस पहले की बात है, एक सूबेदार अपनी सारी लाव-लश्कर के साथ सूबे की राजधानी से दूसरे एक शहर को जा रहा था। चलते-चलते रास्ते में एक बड़ी ज़बर्दस्त नदी पड़ी, इसलिए सब लोगों के पार उतरने के लिए नावों और डोंगियों का बंदोबस्त किया गया। सूबेदार के लिए भी एक बड़ी नाव तैयार हुई। जब सब फ़ौज पार उतर गई, तो सूबेदार भी अपने दरबारियों के साथ उस नाव पर सवार हुआ। उसके साथ उसका एक ग़ुलाम भी था, जो कुछ दिन हुए एक रेगिस्तानी देश से लाया गया था। रेगिस्तानों में भला बहुत बड़ी नदियाँ कहाँ ? उस ग़ुलाम ने जो नदी का वह लंबा-

चौड़ा पाट देखा तो उसका दिल दहल गया! बरसात का ज़माना था और नदी पूरे बहाव पर थी। जहाँ तक नज़र जाती थी, पानी ही पानी दिखाई पड़ता था। ग़ुलाम नदी का वह चौड़ा पाट और लहरों का ज़ोर-शोर देखकर बहुत घबड़ाया। पहले तो उसने अपने दिल को किसी तरह सँभाला और ज्यों-त्यों करके वह उस नाव पर सवार हो लिया, पर जब नाव का लंगर खुला और पानी की उन भयंकर लहरों से लड़ती-भिड़ती हुई वह आगे बढ़ने लगी तो मारे डर के उस ग़ुलाम का दिल थर-थर काँपने लगा और उसने चीख़ना, चिल्लाना और हल्ला मचाना शुरू किया! वह ज़ोर-ज़ोर से रोकर पुकारने लगा—'मुझे बचाओ! मैं नदी के पार उतरना नहीं चाहता। अरे मल्लाहो, नाव को वापस ले चलो? मैं डूब जाऊँगा! मुझ पर दया करो। नहीं तो मैं मर जाऊँगा!'

ग़ुलाम की यह घबड़ाहट देखकर पहले तो नाववाले खूब हँसे और सूबेदार भी उसकी बेवक़ूफ़ी देखकर हँसने लगा। लेकिन जब उसने रोने-चीख़ने के साथ-साथ अपने हाथ-पैर भी पटकना शुरू किया तो सब लोग परेशान हो गए, क्योंकि यह डर लगने लगा कि कहीं उस कम्बख़्त की उछल-कूद से नाव न उलट जाय! सब लोगों ने उसे समझाया, उसकी ख़ुशामद की, दिलासा दिया, ढाढ़स बँधाया, जी बहलाया, लेकिन वह डरपोक ग़ुलाम कहाँ माननेवाला था! उसे लोग जितना चुप करने की कोशिश करते, उतना ही वह और ज़्यादा हो-हल्ला मचाता। आख़िर जब नरमाई से काम न चला तो सूबेदार ने उसे डाटना और धमकाना शुरू किया। पर धमकियों से भी उसके दिल की धड़कन दूर न हो सकी। उसकी उछल-कूद ज्यों-की-त्यों जारी रही!

मौक़े से उसी नाव में एक हकीम साहब भी मौजूद थे। उन्होंने ग़ुलाम की यह हालत जो देखी तो सूबेदार से कहा कि 'अगर आप इजाज़त दें तो मैं उसे चुप कर सकता हूँ!'

सूबेदार ने कहा—'अगर आप इस कम्बख़्त को चुप करके बिठा दें तो मैं आपका बहुत एहसानमन्द रहूँगा; वरना यह तो अपनी चीख़-पुकार से हम सबको पागल बना देगा!'

हकीम साहब ने नौकरों से कहा—'तुम इस ग़ुलाम को पकड़कर पानी में धकेल दो!'

इशारा पाते ही नौकरों ने फ़ौरन् उस ग़ुलाम को पकड़कर ज़बरदस्ती नदी में डाल दिया! ग़ुलाम तैरना बिल्कुल न जानता था! नदी में गिरते ही वह डुबकियाँ खाने लगा। लाख हाथ-पाँव उसने मारे, लेकिन लहरों के सामने उसकी एक न

सब लोगों ने उसे समझाया, उसकी ख़ुशामद की, दिलासा दिया, ढाढ़स बँधाया, जी बहलाया, लेकिन वह डरपोक ग़ुलाम कहाँ माननेवाला था! उसे लोग जितना चुप करने की कोशिश करते, उतना ही वह और ज्यादा हो-हल्ला मचाता...... ....

चली ! अब हकीमजी ने नौकरों से कहा कि 'इसके बाल पकड़कर इसे खींचो और नाव के पास इसे ले आओ।'

नौकरों ने उसके लम्बे बाल पकड़कर खींचे और घसीट-कर उसे नाव के पास ले आए। गुलाम ने ज्योंही सहारा पाया त्योंही उसने नाव की बाजू को मजबूती से पकड़ लिया। वह थोड़ी दूर तक तो इसी तरह नाव के साथ-साथ बहता रहा। पर आख़िरकार मौक़ा पाते ही उचककर वह फिर नाव के अन्दर आ गया और भीगी बिल्ली की तरह दुबककर एक कोने में बैठ गया। अब वह न तो रोता था, न चीख़ता था, न चिल्लाता ही था !

सूबेदार को उसकी यह चुप्पी देखकर हँसी आ गई और अचरज भी हुआ। उसने हकीम साहब से पूछा—'आपने कौन-सी दवा इसे पिला दी, जिसके पीने से ही इसको मानों साँप सूँघ गया ? पहले तो यह कम्बख़्त बहुत शोर-गुल मचा रहा था और किसी तरह मानता ही न था ! अब देखते ही देखते यह क्या हो गया कि यह अपना कान तक नहीं हिलाता, जैसे इसके मुँह में ज़बान ही नहीं !'

हकीमजी यह सुनकर मुस्कराए और कहने लगे कि 'बात यह है कि जब इस गुलाम ने नाव में बैठते ही हल्ला मचाना शुरू किया था, मैं उसी वक़्त समझ गया था कि यह आज तक कभी नाव में नहीं बैठा और न इसने कभी कोई तूफ़ानी नदी ही पार की है ! यह नहीं जानता कि अगर नदी को पार करने के लिए नाव न मिले तो क्या हो, या कोई आदमी नाव से नदी में गिर पड़े तो उसको अपनी जान से हाथ धोना पड़ जाता है ! इसको मालूम ही न था कि नदी में डूब जाना और डूबने के वक़्त बचने के लिए हाथ-पाँव मारना कितनी मुसीबत की बात होती है और उस बड़ी मुसीबत के मुक़ाबले में नाव पर बैठने की यह मुसीबत कितनी मामूली होती है ! जिस आदमी ने रात के अँधेरे में ठोकरें न खाई हों वह दिन की रोशनी की क़द्र नहीं जानता। जिस आदमी ने भूखों मरने की तकलीफ़ न देखी हो वह पेट भर खाना मिल जाने की क़ीमत का अंदाज़ा नहीं लगा सकता ! जिसके तलवों में काँटों पर चलने से घाव न पड़ गए हों वह फूलों की सेज का पूरा मज़ा नहीं

गुलाम तैरना बिल्कुल न जानता था। नदी में गिरते ही वह डुबकियाँ खाने लगा। लाख हाथ - पाँव उसने मारे, लेकिन लहरों के सामने उसकी एक न चली···

आख़िरकार मौक़ा पाते ही उचककर वह नाव के अंदर आ गया और भीगी बिल्ली की तरह दुबककर एक कोने में बैठ गया। अब वह न तो रोता था, न चीख़ता था...... ....

उठा सकता। जिसने अंधों को रास्ता टटोलते और दीवारों से सिर टकराते न देखा हो वह आँखों की रोशनी की क़ीमत नहीं परख सकता। इसलिए नाव की क़ीमत सिर्फ़ वही आदमी आँक सकता है, जो तूफ़ानी नदी के बहाव में चढ़ती लहरों के थपेड़े खा चुका हो। जो अथाह पानी के बहाव में डूबने लगा हो और डूबते वक़्त लोगों को नाव पर बैठकर नदी के पार उतरते देख रहा हो, वही इसका मोल जान सकता है। मैंने इसको इसी ख़याल से नदी में डलवा दिया था कि यह डूबने की मुसीबत और लहरों से मुक़ाबला करने की तकलीफ़ से ख़बरदार हो जाय और इसे मालूम हो जाय कि जिस नाव में बैठते हुए वह घबड़ा रहा था वह नाव ही इस नदी में उसका एक सहारा है। यही कारण है कि वह अब चुप होकर नाव के एक कोने में बैठा है और मन ही मन में इस नाव को बनानेवाले और उसको खेनेवालों को दुआ दे रहा है।' हकीम साहब की यह बात सुनकर सूबेदार ने कहा—'सच है, ठोकर खाए बिना अक़्ल नहीं आती!'

सच्ची दोस्ती

किसी जंगल में बहुत दिनों से एक हिरन और एक कौआ साथ-साथ रहते थे। कौए और हिरन में दोस्ती होने में यों तो कोई तुक नहीं दिखाई देता, परन्तु एक बार एक घटना ऐसी घटी कि जिससे इन दो बेमेल जानवरों में भी आपस में गाढ़ा हेलमेल बढ़ गया। बात यह हुई कि एक दिन एक चील उस कौए पर टूट पड़ी और काफ़ी देर तक आसमान में यहाँ से वहाँ खदेड़ने के बाद उसने उसे ज़मीन पर धर पटका और अपनी तेज़ चोंच से ऐसा खिखोड़ डाला कि वह लोहूलुहान हो गया! पर अभी चील उसे यों लथेड़ ही रही थी कि एकाएक उधर से वह हिरन छलाँगें भरता हुआ निकला और उसके पैरों की आवाज़ से चौंककर चील बरबस कौए को ज्यों-का-त्यों छोड़कर उड़ गई। कौए ने इस तरह हिरन की बदौलत जब अपने को मानों मौत के पंजे से छूटते पाया तो वह हिरन के एहसान को भूल न सका और उसने कराहते हुए कहा—'भाई, ज़रा एक बात तो सुनते जाओ!'

हिरन पलटकर पास आया और बोला—'कहो!'

कौए ने कहा—'आज तुम्हारी ही बदौलत मेरी जान बची है। इसका एहसान मैं उम्र भर नहीं भूलूँगा। यों तो हमारी-तुम्हारी पहचान बहुत दिनों से है, हम एक-दूसरे के पड़ोस ही में रहते हैं। पर आज से हम हमेशा के लिए दोस्ती के गठबंधन में बँध गए हैं। यह दोस्ती किसी न किसी दिन ज़रूर काम आएगी।'

हिरन ने कहा—'क्या हर्ज़ है! तुम आज से मेरे पक्के दोस्त हुए।'

इस तरह उन दोनों में गहरी दोस्ती हो गई और हर दिन वे एक-दूसरे से मिलने-जुलने लगे। रोज़ शाम को कौआ किसी पेड़ की टहनी पर बैठ जाता और हिरन उस पेड़ के तने से पीठ लगाकर खड़ा हो जाता और तब दुनिया भर के क़िस्से छिड़ जाते। दोनों अपनी दिनभर की दौड़धूप के सिलसिले में होनेवाली बातें एक-दूसरे को सुनाते। हिरन कहता—'आज मैं अमुक जंगल में गया था। पास ही गेहूँ के हरे-भरे खेत थे। इतने हरे-भरे कि जी चाहता है कि वहीं रात-दिन बैठे खाते रहें! हाँ तो ज्योंही मैं ख़ूब पेट भरकर उस खेत से निकला कि सामने ही एक शिकारी बंदूक लिये हुए आ पहुँचा। उसने फ़ौरन् निशाना ताका, पर मैंने भी उसे ऐसा झाँसा दिया, ऐसा छकाया कि वह उम्रभर याद रक्खेगा। वह ताकता ही रह गया और मैं उसकी आँखों से ओझल हो गया!' इस पर कौआ कहता—'अजी, मैंने भी आज एक लालाजी को, जो गुलेल लेकर मेरे पीछे पड़ गए थे, ऐसा चरका दिया कि फिर कभी किसी कौए को न छेड़ेंगे। वह गुलेल में कंकड़ रखकर ज्योंही निशाना ताकते, मैं निशाने की जगह से थोड़ा-सा अलग सरक जाता। जब लालाजी दूसरी बार फिर कंकड़ मारते तो फिर उसी तरह मैं एक ओर को हो जाता। इस तरह आज दिन भर मैंने उन्हें दिक़ किया। आख़िर बेचारे हार मानकर बैठ गए!' मतलब यह कि इसी तरह कौआ और हिरन दोनों एक-दूसरे का दिल बहलाते हुए मज़े में अपने दिन बिता रहे थे।

उसी जंगल में पास ही एक गीदड़ भी रहता था, जो बड़ा फरेबी और दुष्ट था। वह हर दिन उस हिरन को जो उछलते-कूदते देखता तो मन ही मन सोचा करता कि अगर किसी तरह यह मेरे चंगुल में फँस जाय और इसका मांस खाने को मिले तो बड़ा मज़ा हो! परन्तु हिरन को फँसाकर उसका शिकार करना गीदड़ के बस की बात नहीं थी। आख़िर उसने उस हिरन को फँसाने के लिए कपट का जाल बिछाने की तदबीर सोची और एक दिन जब वह हिरन पास ही के एक खेत में चर रहा था तो उसके नज़दीक पहुँचकर उसने झुककर उसे प्रणाम किया। हिरन ने उससे पूछा—'तुम कौन हो?'

गीदड़ ने बड़े आदर के साथ जवाब दिया—'मैं भी आपका एक पड़ोसी हूँ और यहीं पास के एक भिट में रहता हूँ। बहुत दिनों से मेरे मन में यह लालसा थी कि आपसे जान-पहचान हो जाय। पर अब तक आपसे मिलने का ठीक मौक़ा ही न मिलता था। आज इधर से जब निकला तो बिना आपसे बातचीत किए जाने को जी न माना। मेरा बड़ा भाग्य है कि आज मेरी बहुत दिनों की इच्छा पूरी हो गई!'

पर अभी चील उसे यों लथेड़ ही रही थी कि एकाएक उधर से वह हिरन छलाँगें भरता हुआ निकला··· ·························

कौए ने कहा—'भाई, बिना समझे-बूझे मैं इन्हें क्योंकर अपना दोस्त बनाऊँ ? जहाँ तक चेहरे के हाव-भाव से देखता हूँ, भाई नए मेहमान, बुरा न मानना, तुम्हारी आँखों से शरारत टपकती है !
…………

हिरन ने कहा—'मुझे आपसे मिलकर बड़ी ख़ुशी हुई है। यहाँ से कुछ ही दूरी पर एक कौआ रहता है, जिससे मेरी गहरी दोस्ती है। आइए, उससे आपकी भी मुलाक़ात करा दूँ। तब हम तीनों की ख़ूब संगत जुटा करेगी और मज़े में दिन कटेंगे।'

गीदड़ ने कहा—'वाह, नेकी और पूछ-पूछ ! चलिए, जल्दी ही चलें।'

हिरन गीदड़ को साथ लेकर उस पेड़ के नीचे आया, जहाँ कौआ रहता था। कौए ने अपने दोस्त के साथ एक गीदड़ को जो आते देखा तो फ़ौरन् ही उसने पूछा कि 'यह कौन है ?' हिरन ने कहा—'यह हमारे एक नए दोस्त हैं और मैं इन्हें तुम्हारे पास इसलिए लेकर आया हूँ कि तुम भी इनसे दोस्ती पैदा कर लो।'

कौए ने कहा—'भाई, बिना समझे-बूझे मैं इन्हें क्योंकर अपना दोस्त बनाऊँ ? जहाँ तक चेहरे के हाव-भाव से देखता हूँ, भाई नए मेहमान, बुरा न मानना, तुम्हारी आँखों से शरारत टपकती है !'

हिरन ने कहा—'भाई, कभी-कभी ऊपरी हाव-भाव से भीतरी हाल का अंदाज़ा लगाने में ग़लती भी हो जाती है। दोस्त का दोस्त अपना भी दोस्त हुआ करता है। जब यह मेरे दोस्त हैं तो फिर तुम्हारे भी दोस्त हुए !'

कौए ने कहा—'अच्छी बात है, जैसी तुम्हारी राय हो !'

इस तरह वह गीदड़ भी उनकी दोस्ती में शामिल कर लिया गया। गीदड़ ऊपरी दिखावे में तो हिरन और कौए का दोस्त बन गया था, लेकिन दरअसल वह इस ताक में था किसी तरह हिरन को फँसाकर उसका मज़ेदार मांस खाए और उसके गर्म ख़ून से अपने दिल की प्यास बुझाए। एक दिन उसने हिरन से कहा कि 'दोस्त, यहाँ से कुछ दूरी पर एक धान का खेत है। मैं आज ही उसे देखकर आया हूँ। कल तुम मेरे साथ वहाँ चलना और ख़ूब मौज़ से खाना।'

हिरन ने कहा—'अच्छी बात है !'

दूसरे दिन गीदड़ हिरन को लेकर वहाँ पहुँचा और उसे धान के खेत में घुसा दिया। हिरन ने धान के हरे पौधों को ख़ूब मज़े से खाना शुरू किया। गीदड़ दूर बैठा हुआ उसे देखता रहा।

इतने में उस खेत का किसान आ गया। किसान को देखकर हिरन हिरन हो गया और गीदड़ भी रफ़ूचक्कर! हिरन ने रास्ते में कहा—'यार, अभी पेट भी नहीं भरा था कि यह कम्बख़्त कहीं से आ मरा!' गीदड़ ने कहा—'परवाह न करो, बाक़ी खेत कल चर लेना।'

दूसरे दिन किसान ने हिरन के फिर लौटकर आने के अँदेशे से खेत में जाल लगा दिया। हिरन के मुँह में तो धान का चस्का लग चुका था, इसलिए वह दूसरे दिन फिर तड़के ही खेत में जा पहुँचा। पर खेत में क़दम रखते ही उसके पैरों म जाल क रस्से तन गए और वह फन्दों में फँसकर ज़मीन पर गिर पड़ा। अब गीदड़ की ख़ुशी का यह हाल था कि वह फूला न समाता था। वह सोचने लगा कि बस दम भर में आकर किसान लाठियों से उस हिरन का ख़ात्मा कर देगा और फिर मैं उसके मांस का मालिक हो जाऊँगा। इधर गीदड़ यह सोच ही रहा था कि उधर हिरन ने उसे आवाज़ देकर कहा—'दोस्त! कुछ मदद करो। हमारी तो जान पर बन रही है और तुम सामने बैठे मुँह देख रहे हो! लानत है तुम्हारी दोस्ती पर!'

हिरन ने रस्सी कटते ही तड़पकर ऐसी छलाँग भरी कि बिजली की तरह आन की आन में वह कहीं से कहीं जा पहुँचा। उधर कौआ भी उड़ गया। अब गीदड़ भी खेत से भागने के लिए उठा, पर चारों तरफ़ से उसी समय लट्ठबंद किसान दौड़ पड़े.........

गीदड़ बोला—'खेत भी तो तुम्हीं ने खाया था, अब नतीजा भी तुम्हीं भुगतो!'

हिरन ने जो गीदड़ के मुँह से ये शब्द सुने तो उसको बहुत रंज हुआ और वह कहने लगा कि 'सच ही कौए का कहना सही था! तुम बड़े कपटी और मक्कार निकले!' इतने में कहीं से उड़ता-उड़ता वह कौआ भी उधर आ निकला। उसने जो हिरन को इस मुसीबत में देखा तो वह 'काँव-काँव' का शोर मचाकर ज़मीन पर उतर आया। हिरन ने अपने दोस्त को देखते ही रंज के साथ कहा—'देख लो इस गीदड़ की जालसाज़ी! मुझे किस बला में फँसा दिया!' कौए ने कहा—'सब्र करो। तुम ऐसा करो कि मुर्दे जैसे होकर धरती पर पड़ जाओ और मैं इस तरह तुम्हारे सिर पर बैठ जाऊँगा, जैसे तुम्हारी आँखें निकालना चाहता हूँ। तुम मेरी चोंच अपनी आँखों पर चुभने देना और ज़रा भी इधर-उधर हरकत न करना। जब किसान यह बात देखेगा तो समझेगा कि हिरन में जान बाक़ी नहीं रही। तब वह फ़ौरन् रस्से काट देगा। बस तुरंत उठकर भाग जाना।'

हिरन ने यही किया। वह मुर्दा जैसा होकर ज़मीन पर लेट गया और कौआ उसके सिर पर बैठ गया।

किसान अपने साथियों को लेकर आया। उसने दूर से जो देखा कि हिरन ज़मीन पर मुर्दा पड़ा है और कौआ उसकी आँखें कुरेद रहा है तो उसने फ़ौरन गँड़ासे से जाल की रस्सी काट दी। हिरन ने रस्सी कटते ही तड़पकर ऐसी छलाँग भरी कि बिजली की तरह आन की आन में वह कहीं से कहीं जा पहुँचा। उधर कौआ भी उड़ गया। अब गीदड़ भी खेत से भागने के लिए उठा, पर चारों तरफ़ से उसी समय लट्ठबन्द किसान दौड़ पड़े और उसे इतनी लाठियाँ मारीं कि वह ज़मीन पर गिर पड़ा और उसके प्राणपखेरू उड़ गए।

इस तरह हिरन को यह मालूम हो गया कि सच्चे और झूठे दोस्त में कितना फ़र्क होता है!

शेख़चिल्ली का चचेरा भाई

किसी गाँव में भोला नाम का एक कुम्हार रहता था, जो मिट्टी के मामूली बर्त्तन काफ़ी अच्छे बना लेता था, और यही उसकी गुज़र-बसर का ज़रिया था। एक बार घूमता-फिरता पास के शहर का एक कुम्हार उस गाँव में आ निकला। भोला ने जब सुना कि गाँव में कोई कुम्हार आया है तो उसने उसे अपना मेहमान बनाया और उसकी बड़ी आवभगत की। दो-तीन दिन में जब उन दोनों में ज़रा आपस में हेलमेल बढ़ा तो शहर के कुम्हार ने भोला से कहा कि 'दोस्त! तुम्हारी सारी उम्र बर्त्तन बनाने में बीत गई, लेकिन मैं देखता हूँ कि तुम्हारी हालत अब भी कोई बहुत अच्छी नहीं है! छप्पर पर फूस तक नहीं! एक हम भी तो हैं। दिन में दस-दस पंद्रह-पंद्रह रुपया तक कमा लेते हैं! शहर में रहनेवाला हमारी बिरादरी का कोई कुम्हार ऐसा नहीं, जिसने पक्के मकान न बनवा लिये हों!'

भोला ने कहा—'भाई क्यों न हो, तुम ठहरे बड़े कारीगर! जो चीज़ चाहो बनाकर बेच लो। हम ठहरे गँवार! मिट्टी के प्यालों और हाँड़ियों के सिवा और कोई चीज़ हमें बनाना ही नहीं आती। फिर हम कहाँ से तुम्हारे बराबर पैसा कमा सकते हैं!'

मेहमान ने कहा—'लाओ, मैं आज तुम्हें मिट्टी की मूर्त्तियाँ, सुराहियाँ, हल्के-हल्के प्याले, फूलों के गुलदस्ते और ऐसी ही चीज़ें बनाना सिखा दूँ, जो काफ़ी मोल पर बिक जाती हैं। गोकि तुम्हारे चाक पर ये सब चीज़ें ज़्यादा अच्छी नहीं बन सकतीं, फिर भी जो कुछ बर्त्तन आज बनें उन्हें लेकर तुम बुध के बाज़ार में शहर चले आना। मैं अच्छे दामों पर सारे बर्त्तन भी बिकवा दूँगा और अपने चाक पर तुम्हारा हाथ भी साफ़ करा दूँगा।'

भोला ने कहा—'अच्छा, बड़ी मेहरबानी होगी आपकी!' तब मेहमान भोला के साथ उसके चाक पर गया और ख़ास तरीक़े से मिट्टी गूँधकर उसने भोला से कहा कि 'चाक घुमाओ।' भोला ने चाक घुमाया। मेहमान ने मिट्टी हाथ में लेकर चाक पर रक्खी और भोला से कहा कि 'देखते रहो मेरे हाथों की तरफ़।' भोला चाक घुमाता रहा और ग़ौर से मेहमान के हाथों की हरकत भी देखता रहा। देखते ही देखते कई सुराहियाँ, मूर्त्तियाँ, गुलदस्ते और प्याले तैयार हो गए! भोला

भोला चाक घुमाता रहा और ग़ौर से मेहमान के हाथों की हरकत भी देखता रहा। देखते ही देखते कई सुराहियाँ, मूर्त्तियाँ, गुलदस्ते और प्याले तैयार हो गए!..............................
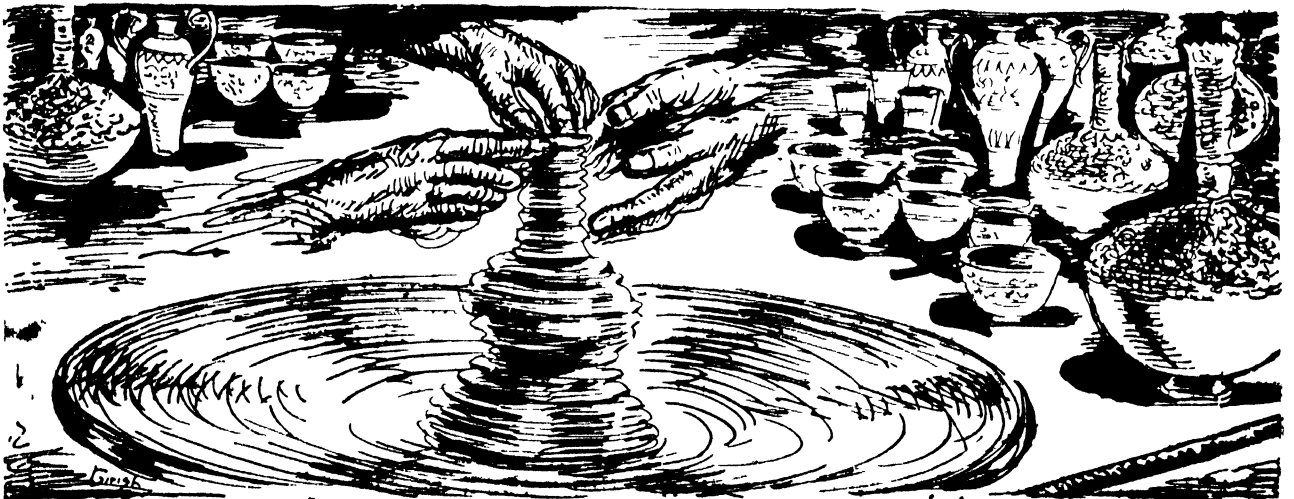
उन्हें देखकर बहुत खुश हुआ। मेहमान ने भोला से कहा कि 'लो अब मैं चाक घुमाता हूँ। ऐसी ही एक-एक चीज़ तुम भी बनाओ।' भोला ने ऐसा ही किया। तब मेहमान ने कहा—'देखो, कैसी अच्छी चीज़ें बन गईं! दो-चार दफ़ा बनाने में और खूबसूरत बनाने लगोगे और बुध के दिन जब तुम शहर आओगे तो मैं तुम्हें इन बर्त्तनों पर रंग करना भी सिखा दूँगा!'

मेहमान शाम को वापस शहर चला गया और भोला ने नई बनी हुई सुराहियों और मूर्त्तियों को सँभाल-सँभाल कर उठाया और उन्हें अपनी झोपड़ी में ले आया। तब चारपाई पर लेटकर वह सोचने लगा कि 'इतनी तो सुराहियाँ हैं और इतने गुलदस्ते हैं और दर्ज़नों प्याले हैं! अगर ये चवन्नी-चवन्नी में भी बिक गए तो कई रुपए के होते हैं! मैं इन रुपयों से बाज़ार से रंग लाऊँगा और अपने सारे बर्त्तनों पर रंग करूँगा। तब उनकी क़ीमत और भी बढ़ जायगी और सारा गाँव उनकी माँग करेगा। इस तरह बर्त्तन बेच-बेचकर जब कुछ रुपए मेरे पास जमा हो जाएँगे तो मिट्टी के बर्त्तनों का एक बड़ा कारख़ाना खोल लूँगा और शहरवालों की तरह मैं भी बाहर अपना माल भेजा करूँगा और रेल में बैठकर बड़े-बड़े शहरों की नुमाइशों और मेलों में अपने बर्त्तन ले जाया करूँगा। उस वक़्त तक मैं बड़ा आदमी हो जाऊँगा और मेरी बिरादरी-वाले मुझे चौधरी कहकर पुकारा करेंगे। इस तरह जब बहुत-सा रुपया मेरे पास हो जायगा, तो मैं काँच के बर्त्तन भी ख़रीद-कर ले आऊँगा और गाड़ियों में भरकर जगह-जगह बाज़ार-हाट में उन्हें बेचने के लिए ले जाया करूँगा। अब दो कारबार मेरे हाथ में आ जाएँगे—एक मिट्टी के बर्त्तनों का, दूसरा काँच के बर्त्तनों का। मिट्टी के बर्त्तनों का काम सँभालने के लिए दो-चार कुम्हारों को मैं नौकर रख लूँगा। जब ये दोनों काम खूब चल पड़ेंगे तो मैं चीनी के बर्त्तन भी ख़रीद लाऊँगा। बल्कि यहाँ का सारा कारख़ाना ही उठाकर शहर ले जाऊँगा—और वहीं एक बड़ी दूकान किराए पर ले लूँगा, जिसके तीन हिस्से होंगे। एक हिस्से में मिट्टी के बर्त्तन रक्खूँगा, दूसरे में शीशे के, और तीसरे में चीनी के। हर हिस्से में नौकर-चाकर काम किया करेंगे। बीच में मैं एक दफ़्तर बनाऊँगा और दफ़्तर में मुनीमजी के पास कुर्सी पर बैठा रहा करूँगा। अब मेरा

'मैं अपनी मोटरगाड़ी पर बैठूँगा और फ़ौरन शहर में तहसीलदार साहब से मिलूँगा। उनके चपरासी और वे ख़ुद भी मुझे देखकर हैरान रह जाएँगे और सोचेंगे कि यह किस गाँव का ज़मींदार आ गया ...'

भोला इन विचारों में इतना डूबा हुआ था कि उसने सचमुच पास से एक डंडा उठाकर बिना देखे-भाले चला दिया और वह डंडा पड़ा उन सभी नए बर्तनों पर, जो वहीं रक्खे हुए थे···

नाम भोला नहीं बल्कि चौधरी भोलारामजी होगा। साल भर में एक बार रेल में बैठकर मैं घर आया करूँगा। और सच पूछो तो रेल पर आने की मुझे ज़रूरत ही क्या रहेगी! जब इतना बड़ा कारबार होगा तो एक मोटर ही ख़रीद लूँगा और उसी मोटर पर बैठकर शहर से गाँव आया करूँगा। आजकल ज़मींदार मुझे बहुत तंग करता है। इसलिए सबसे पहला काम मैं यह करूँगा कि उसे मुँह माँगे दाम देकर पूरा गाँव उससे ख़रीद लूँगा, ताकि रोज़-रोज़ की झंझट ही दूर हो जाय। और हाँ, पटवारी से भी तो मेरी लाग-डाँट रहती है! उसने एक बार मुझे बेगार में बुलवाया था और मैंने जाने से इन्कार कर दिया था। उससे भी बदला लेना ज़रूरी है। मैं अपनी मोटरगाड़ी पर बैठूँगा और फ़ौरन् शहर में तहसीलदार साहब से मिलूँगा। उनके चपरासी और वे ख़ुद भी मुझे देखकर हैरान् रह जाएँगे और सोचेंगे कि यह किस गाँव का ज़मींदार आ गया! सब लोग मुझे घेर लेंगे। मैं मोटरगाड़ी से उतरकर तहसीलदार साहब के पास कुर्सी पर जा बैठूँगा और उनसे कहूँगा कि आपके पटवारी से हमें शिकायत है और हम इसीलिए आए हैं। तहसीलदार साहब कहेंगे, चौधरी साहब! आपने इतनी-सी बात के लिए भला आने की तक़लीफ़ क्यों की! वहीं से किसी नौकर-चाकर के हाथ कहलाकर भेज देते। लीजिए, मैंने उस पटवारी को बर्ख़ास्त किया। और हाँ, सबसे ज़रूरी बात तो भूल ही गया! मुझे दूसरा व्याह भी तो करना है। लल्लू की माँ तो फूहड़ और बड़ी भौंड़ी शक्ल-सूरत की है। मैं शहर से एक अच्छी-सी दुलहन व्याह कर लाऊंगा। बाजे बजेंगे। नाच-गाना होगा। जब दुलहन डोले से उतरेगी तो लल्लू की माँ उसे देखकर जल जाएगी और उससे लड़ने लगेगी। पर मैं वहीं फ़ौरन् अपना डंडा पकड़कर उसे ऐसा मारूँगा कि············!

भोला इन विचारों में इतना डूबा हुआ था कि उसने सचमुच पास से एक डंडा उठाकर बिना देखे-भाले चला दिया और वह डंडा पड़ा उन सभी नए बर्त्तनों पर, जो वहीं रखे हुए थे! बात की बात में सब बर्त्तन टूट-फूटकर बराबर हो गए और चौधरी बनने से पहले ही भोलाराम का दिवाला निकल गया!

इस तरह हवाई क़िले बाँधनेवालों में सबसे मशहूर कहानी शेख़चिल्ली की है, जिसे सब कोई जानते हैं। किस तरह मियाँ शेख़चिल्ली एक बार किसी आदमी का एक घी का घड़ा उठाए चले जा रहे थे और मन ही मन यह पुलाव पकाते जाते थे कि 'इस घड़े को उठाने की जो मज़दूरी मिलेगी उससे एक मुर्ग़ी ख़रीदकर लाऊँगा। तब उस मुर्ग़ी के अंडे बेच-बेचकर एक बकरी ख़रीदूँगा और उस बकरी का दूध बेच-बेचकर ख़रीदूँगा एक गाय। इसके बाद जब मेरे पास काफ़ी रक़म जमा हो जायगी तो मैं अपना व्याह करूँगा। तब बच्चे पैदा होंगे। पर उनमें से कोई अगर शैतानी करेगा तो उसे ऐसी लात मारूँगा कि····!' बस यह कहते ही मियाँ ने दरअसल लात मारी और उसके धक्के से सिर का घड़ा गिरकर फूट गया, साथ ही उनका वह हवाई क़िला भी हवा हो गया! मालूम होता है, यह भोला उसी शेख़चिल्ली का चचेरा भाई था!

खोए हुए की टोह

एक बार रेगिस्तान का रहनेवाला एक बद्दू अपने ऊँट पर बैठकर सफ़र करता हुआ कहीं जा रहा था। वह लोगों में 'रेगिस्तान की चिड़िया' के नाम से मशहूर था, क्योंकि उसकी सारी उम्र रेगिस्तानों की धूल छानते हुए ही गुज़री थी। बालू के मैदानों में घूमते-घूमते उसकी नज़र बहुत तेज़ हो गई थी और वह दूर-दूर तक देखने का आदी हो गया था। वह मीलों दूर से ऊँटों के चलने की आहट और उनकी बलबलाहट की आवाज़ भी सुन लेता था। तारों को देखकर वह यह बता देता था कि उसने किस जगह से किस जगह तक कितना फ़ासला तय किया है। रेत के ऊपर आदमियों के पैरों के निशान देखकर वह यह बता देता था कि उधर से जानेवाले आदमी की उम्र कितनी है, वह रंजीदा है या खुश, उसका पेशा क्या है और किस ज़रूरत से वह कहाँ जा रहा है!

पाँव के निशान देखकर ये सब बातें मालूम करना दरअसल कोई अचरज की बात नहीं है, क्योंकि क़ुदरत ने पाँव के निशानों में बड़े-बड़े भेद रख दिए हैं। उन भेदों के जानने के कुछ ख़ास क़ायदे हैं। जैसे कि अगर दोनों पैरों के निशानों का फ़ासला बराबर-बराबर है तो यह मालूम होता है कि चलनेवाला धीरे-धीरे चल रहा है। इस तरह धीरे चलनेवाला आदमी या तो बूढ़ा होगा या बीमार! या फिर किसी सोच-विचार में वह डूबा होगा। पाँवों के निशान जितने गहरे होंगे, उतनी ही यह बात मालूम होगी कि चलनेवाला अपने पैरों पर कितना ज़ोर देकर चल रहा था। धीरे-धीरे चलनेवाला आदमी सौदागर नहीं हो सकता, क्योंकि व्यापारी आम तौर से जल्दी चलते हैं। वे धीरे-धीरे चलकर अपना समय ख़राब नहीं करते। उनकी चाल तेज़ तो होती है, लेकिन बेढंगी भी होती है। इसीलिए उनके क़दमों के निशान भी टेढ़े-तिरछे पड़ते हैं। सिपाहियों के पाँव के निशान कम गहरे और क़ायदे से बने होते हैं। इसका कारण यह है कि वे जल्दी-जल्दी चलते हैं और उनका पाँव बेक़ायदा नहीं पड़ता। इसी तरह और भी बहुत-सी बातें हैं, जो टेढ़े, बाँके, सीधे, गहरे, चपटे, कमज़ोर और उभरे हुए पैर के निशानों से मालूम की जा सकती हैं। हमने ऊपर जिस बद्दू का ज़िक्र किया है, वह इन निशानों के पहचानने में कमाल रखता था। मौक़े से अपनी इस सफ़र में उसे राह में दो पैदल सौदागर मिले, जो बहुत घबड़ाए हुए और परेशान थे। बद्दू ने उनसे पूछा—'तुम क्यों परेशान हो?'

सौदागर बोले—'हमारी परेशानी को क्या पूछते हो? जाओ, अपना रास्ता लो।'

बद्दू ने कहा—'मुमकिन है कि मैं तुम्हारी कुछ मदद कर सकूँ!'

सौदागर बोले—'जो सफ़र में लुट जाए, उसकी मदद करने के लिए बड़े दिलवाले आदमी की ज़रूरत है।'

बद्दू बोला—'मैं यह तो दावा नहीं करता कि मैं बड़ा दिलवाला हूँ, लेकिन हाँ, तुम्हारी मदद ज़रूर करूँगा, यह मे वादा करता हूँ।'

सौदागरों ने कहा—'ऐसे दावा करनेवाले न जाने कितने ही रोज़ाना मिलते रहते हैं। जाओ, अपना काम करो।'

बद्दू ने इतनी देर में उन सौदागरों की बातचीत से और उनके चेहरों के हाव-भाव से यह पता चला लिया था कि ये लोग क्यों परेशान हैं! इसलिए उसने अब उनसे बड़ी हमदर्दी दिखाते हुए कहा—'मालूम होता है कि तुम्हारा ऊँट खो गया है।'

यह सुनकर वे चौंक पड़े और बोल उठे—'हाँ, हाँ, लेकिन तुमको कैसे पता चला?'

बद्दू बोला—'इससे तुमको क्या मतलब! हाँ, तो क्या वह दाहिनी आँख से अंधा था?'

सौदागर बोल उठे—'जी हाँ, आपने बिल्कुल सच कहा!'

बद्दू ने फिर कहा—'और उसकी बाईं टाँग भी टूटी हुई थी !'

सौदागर बोले—'जी हाँ···!'

तब बद्दू ने कहा—'उसका एक अगला दाँत भी टूटा हुआ है !'

सौदागरों के अचरज का ठिकाना न था ! उन्होंने 'हाँ' कहकर सिर हिला दिया।

बद्दू फिर बोला—'उस ऊँट पर एक तरफ़ शहद के पीपे लदे हुए थे !'

सौदागर चिल्ला उठे—'अजी, आप तो सभी बातें एकदम सही-सही बता रहे हैं !'

बद्दू बोला—'और दूसरी तरफ गेहूँ की बोरियाँ लदी थीं !'

अब तो सौदागरों से न रहा गया। वे बोले—'मालूम होता है, आपने उस ऊँट को अच्छी तरह देखा-भाला है ! अब आप मेहरबानी करके हमें बतलाइए कि वह है कहाँ ?'

इस पर बद्दू बोला—'मैंने उस ऊँट के बारे में तुम्हें जो बातें कही हैं, उनसे तुम्हें शायद यह ख़याल हो रहा होगा कि मैंने ऊँट को देखा है। पर तुम मुझसे चाहे शपथ ले लो, मैंने उस ऊँट को हरगिज़ नहीं देखा !'

अब तो वे दोनों सौदागर बहुत घबड़ाए और कहने लगे—'तुम्हें शर्म नहीं आती कि तुम ऊँट के बारे में इतनी सच्ची बातें बतलाने के बाद भी कहते हो कि मैंने ऊँट को नहीं देखा ! ज़रूर तुमने ही उस ऊँट को कहीं छिपा दिया है !'

बद्दू ने कहा—'भाइयो ! ऊँट को चुराना तो दूर की बात है, मैंने तुम्हारे ऊँट को देखा तक नहीं। मुझसे जैसी शपथ चाहो ले लो और जहाँ चाहो ले चलो। तुम विश्वास रक्खो कि मुझको इस ऊँट के बारे में सिवा इसके और कुछ मालूम नहीं कि वह इस रास्ते से गया है, जिससे मैं भी आ रहा हूँ।'

यह सुनकर उन सौदागरों ने उस बद्दू को पकड़ लिया और उसे खींचते हुए एक काज़ी के पास ले गए और सारा क़िस्सा उससे बयान किया। काज़ी ने मामला सुनकर बद्दू से पूछा—'अच्छा, तुम यह तो बताओ कि जब तुमने उस ऊँट को देखा नहीं तो यह कैसे बता दिया कि वह काना और लँगड़ा था ? तुमने कैसे कहा कि उसका अगला दाँत टूटा हुआ था, उस पर एक तरफ़ शहद के पीपे थे और दूसरी तरफ़ गेहूँ के बोरे ?'

अब तो सौदागरों से न रहा गया। वे बोले—'मालूम होता है, आपने उस ऊँट को अच्छी तरह देखा-भाला है ! अब आप मेहर-बानी करके हमें बतलाइए कि वह है कहाँ ? ....'

बद्दू ने कहा—'जनाब, मैंने यह सब-कुछ उस ऊँट के पाँव के निशान देखकर ही मालूम कर लिया था।'

इस पर सौदागरों को और भी ज़्यादा परेशानी हुई और वे काज़ी से कहने लगे कि 'सरकार! हो न हो इसी बद्दू ने उस ऊँट को चुराया है! आप इसे सज़ा देकर हमारा फ़ैसला कीजिए।'

बद्दू ने जब देखा कि अब किसी तरह उन सौदागरों के पंजे से छुटकारा नहीं मिलता तो वह हाथ जोड़कर काज़ी से कहने लगा—'ये बेवक़ूफ़ सौदागर जिस बात को एक पहेली समझ रहे हैं, उसको तो एक मामूली अक़्ल का आदमी भी समझ सकता है! मैंने रेगिस्तान में एक ऊँट के पैरों के निशान देखे, जिसके साथ किसी आदमी के पैरों के निशान नहीं थे। इससे मैं समझ गया कि वह ऊँट अकेला निकल भागा होगा। मैंने देखा कि ऊँट के बाएँ पैर के निशान बहुत हल्के हैं। इससे मैंने अन्दाज़ा लगाया कि वह लँगड़ाता था! रास्ते में दोनों तरफ़ कीकड़ के दरख़्त थे, पर वे बाँईं तरफ़ से खाए गए थे, दाहिनी तरफ़ ऊँट ने उन्हें नहीं खाया था। इससे मालूम हुआ कि उसे दाहिनी आँख से सूझता नहीं था। फिर जब मैंने यह देखा कि ऊँट ने जिस जगह मुँह मारा है, वहाँ बीच में ज़रा-सी जगह के पत्ते दाँतों के निशान से खाली हैं। यह इस बात का सबूत था कि उसका अगला दाँत नहीं था। रास्ते में एक तरफ़ मैंने मक्खियों को भनभनाते हुए पाया और दूसरी तरफ़ चींटियों की क़तारें देखीं, जिनके मुँह में गेहूँ के दाने थे! इससे मुझे भरोसा हो गया कि ऊँट पर एक तरफ़ शहद लदा हुआ था, जिसकी वजह से मक्खियाँ जमा हो गई थीं, और दूसरी तरफ़ के बोरे में गेहूँ थे, जिनके गिरे हुए दानों को चीटियाँ लिये जा रहीं थीं। बस यही भर मैं उस ऊँट के बारे में जानता हूँ।'

काज़ी और सौदागरों ने बद्दू की यह बात सुनी तो वे दंग रह गए और उसकी होशियारी और सूझ-बूझ की तारीफ़ करते हुए उन्होंने फ़ौरन् उसे छोड़ दिया।

ग़रीब को न सताओ

बहुत दिनों की बात है, एक उक़ाब किसी पहाड़ी जंगल में रहता था। देवदार और चीड़ के घने पेड़ों से घिरी हुई पहाड़ियों में उसने अपना घोंसला बना रक्खा था। जंगल के सभी पखेरू उसे अपना सरदार मानते थे। धरती

बहुत दिनों की बात है, एक उक़ाब किसी पहाड़ी जंगल में रहता था। देवदार और चीड़ के घने पेड़ों से घिरी हुई पहाड़ियों में उसने अपना घोंसला बना रक्खा था.................
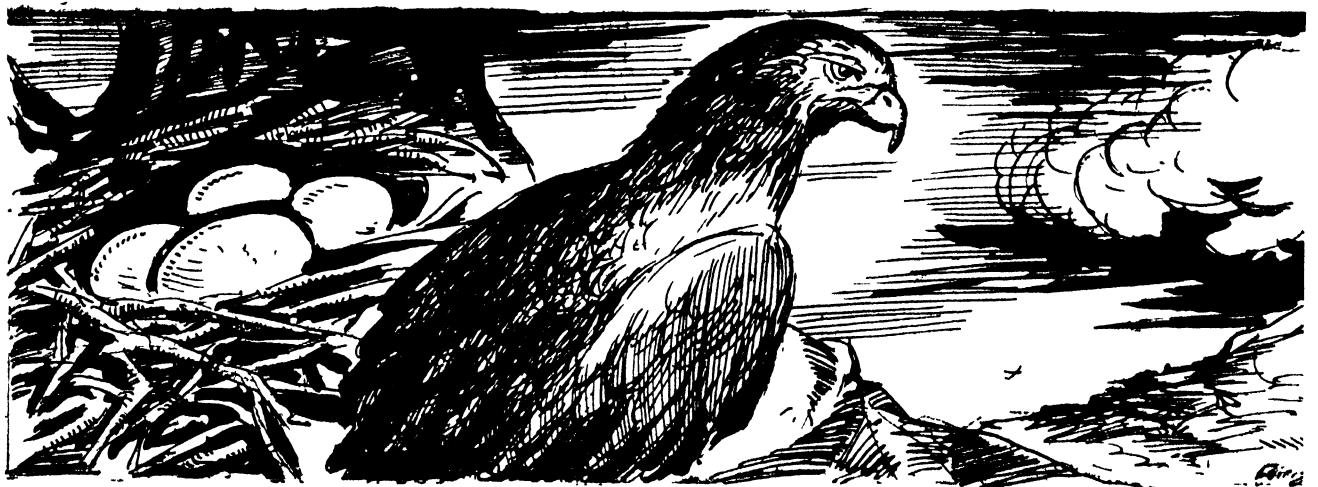
उक़ाब ने चाहा कि ख़रगोश को उठाकर उड़ जाय, लेकिन ज्यों ही उसने उड़ने के लिए अपने पर फटफटाए, ख़रगोश उसके हाथ से छूटकर एक झाड़ी में गिर पड़ा...

पर शेर की हुकूमत थी और आसमान में उस उक़ाब की। जब वह अपने पर तौलकर, पंजे सिकोड़कर, ऊपर आसमान में मँडराता तो दुनिया उसे बहुत छोटी नज़र आती। वह सनसनाता हुआ जब आसमान पर चढ़ जाता और मीलों ऊपर पहुँचकर पहाड़ों, जंगलों, मैदानों और नदियों पर नज़र दौड़ाता तो उसे ऐसा मालूम होता मानों हर चीज़ उसके पैरों के नीचे है ! वह घमंड से अपनी गर्दन और ऊपर उठा लेता और देर तक हवा में मँडराता रहता।

उक़ाब की आँखें बहुत तेज़ होती हैं। वह मीलों दूर से अपने शिकार को देख लेता है और फिर तीर की तरह उस पर झपटता है। बेचारे शिकार को उस समय ऐसा मालूम होता है, जैसे आसमान से बिजली गिर पड़ी हो। उक़ाब बात की बात में शिकार को अपने पंजे में दबोच लेता है और अपनी तेज़ चोंच और फौलादी पंजों से फ़ौरन् उसका काम तमाम कर देता है।

एक दिन वह उक़ाब शिकार की तलाश में बहुत ऊँचा आकाश में उड़ रहा था कि अचानक हज़ारों फ़ीट ऊपर से उसकी नज़र धरती पर यहाँ से वहाँ उचकते हुए एक ख़रगोश पर पड़ी। ख़रगोश को देखते ही उक़ाब के मुँह में पानी भर आया और वह तीर की तरह उसकी तरफ़ झपटा। पल भर में ख़रगोश उसके पंजे में आ गया। उक़ाब ने चाहा कि ख़रगोश को उठाकर उड़ जाय, लेकिन ज्योंही उसने उड़ने के लिए अपने पर फटफटाए, ख़रगोश उसके हाथ से छूटकर एक झाड़ी में गिर पड़ा। झुँझलाकर उक़ाब उस झाड़ी की तरफ़ झपटा। बेचारे ख़रगोश का यह हाल था कि वह एक दम लोहू-लुहान हो गया था। उक़ाब के तेज़ पंजों से उसकी नरम खाल चिथड़ा हो गई थी। वह झाड़ी में गिरते ही उक़ाब के डर से उसकी जड़ों में इस तरह दुबक गया था कि दिखाई ही नहीं देता था।

मौक़े से जहाँ ख़रगोश छिपा था, वहीं एक भौंरा भी भनभन करता हुआ उड़ रहा था। ख़रगोश की यह हालत देखकर उसे दया आई और गुनगुनाकर उसने पूछा—'भाई, क्या बात है ! आख़िर तुम इतने परेशान क्यों हो ! यह तुम्हारे बदन पर घाव कैसे हैं ! किसने तुम्हें इस तरह सताया है !'

ख़रगोश रोकर कहने लगा—'क्या सुनाऊँ अपनी विपदा ! एक उक़ाब पंजे तौलकर मेरे पीछे पड़ा हुआ है। ये सब घाव उसी ने किए हैं। वह दुष्ट तो मुझे दबोचकर उठा ही ले चला था, पर कुछ मिनटों की ज़िन्दगी और थी, इसलिए मैं उसके पंजों से छूटकर इस झाड़ी में आ पड़ा हूँ। पर वह मेरा पीछा छोड़नेवाला नहीं है।'

भौंरे ने कहा—'तुम घबड़ाओ नहीं ! मैं तुम्हारी जान बचाने की पूरी कोशिश करूँगा। देखता हूँ, क्या करता है वह !'

इतने में उक़ाब गुस्से में भरा हुआ फिर उस झाड़ी पर झपटा और बारीक़ी से चारों ओर देखने लगा। भौंरे ने उसे देखकर कहा—'आप पक्षियों के राजा हैं। आपको ऐसा अन्याय न करना चाहिए !'

भौंरा वहाँ से गुस्से में लाल-पीला होकर जो उड़ा तो सीधा उक़ाब के घोंसले में पहुँचा और वहाँ जाकर उसने उसके तमाम अंडे तोड़ दिए और फिर भन-भन करता हुआ उड़ गया ....

उक़ाब ने कहा—'शिकार एक बार मेरे हाथ में आकर निकल जाए, यह नहीं हो सकता।'

भौंरे ने कहा—'दया करना राजाओं और सरदारों का धर्म है !'

उक़ाब बोला—'मैं कुछ नहीं सुन सकता। मेरे पेट में भूख की आग सुलग रही है। मुझे ख़रगोश का पता बताओ, वरना तुम्हारी भी ख़ैर नहीं।'

भौंरे ने कहा—'मालूम होता है कि आपका दिल पत्थर का है !'

उक़ाब ने कहा—'हाँ, मेरा दिल पत्थर का है और मेरे पंजे फ़ौलाद के हैं। मैं न किसी पर दया करता हूँ और न किसी से भीख माँगता हूँ।'

भौंरे ने कहा—'भगवान् से डरिए और ग़रीबों पर ज़ुल्म न कीजिए।'

उक़ाब भौंरे की बातों से गुस्से से भर गया और कहने लगा—'बेवकूफ़, ज़्यादा भन-भन न कर।'

इस पर भौंरा यह कहकर उड़ गया—'अन्यायी का सिर हमेशा नीचा रहता है। आपको इस ज़ुल्म का बदला ज़रूर मिलेगा !'

उक़ाब को भला सब्र कहाँ थी ! वह फ़ौरन् ख़रगोश पर झपटा और वह बेचारा मिनटों में उसका शिकार हो गया ! भौंरा वहाँ से गुस्से में लाल-पीला होकर जो उड़ा तो सीधा उक़ाब के घोंसले में पहुँचा और वहाँ जाकर उसने उसके तमाम अंडे तोड़ दिए और फिर भन-भन करता हुआ उड़ गया। उक़ाब ख़रगोश से निपटकर जब अपने घोंसले में पहुँचा तो देखा कि तमाम अंडे फूटे पड़े हैं ! यह देखकर उसके तन-बदन में आग लग गई। भला किसकी मजाल हो

सकती है कि उक़ाब के घर में घुसकर ऐसी ढिठाई करे ! वह सोचने लगा कि आख़िर उसका यह दुश्मन कौन हो सकता है ? अचानक उसे ख़याल आया कि मुमकिन है, यह हरकत उसी बेवक़ूफ़ भौंरे ही ने की हो ! यह सोचते ही उसके ग़ुस्से की हद न रही। वह कहने लगा कि यह तो बिल्कुल ऐसा ही है कि एक चींटी किसी हाथी का मुक़ाबला करे ! उसने सोचा कि जब तक उस ढीठ भौंरे को सज़ा न दूँगा, ठीक न होगा, क्योंकि इसके बिना दूसरे परिन्दों को भी सबक़ न मिलेगा कि उक़ाब से दुश्मनी करने का क्या नतीजा होता है !

बात की बात में सैकड़ों मक्खियाँ इधर-उधर से इकट्ठा होकर उक़ाब पर झपट पड़ीं। कुछ उसके परों में घुस गईं, किसी ने सिर पर डंक मारा........
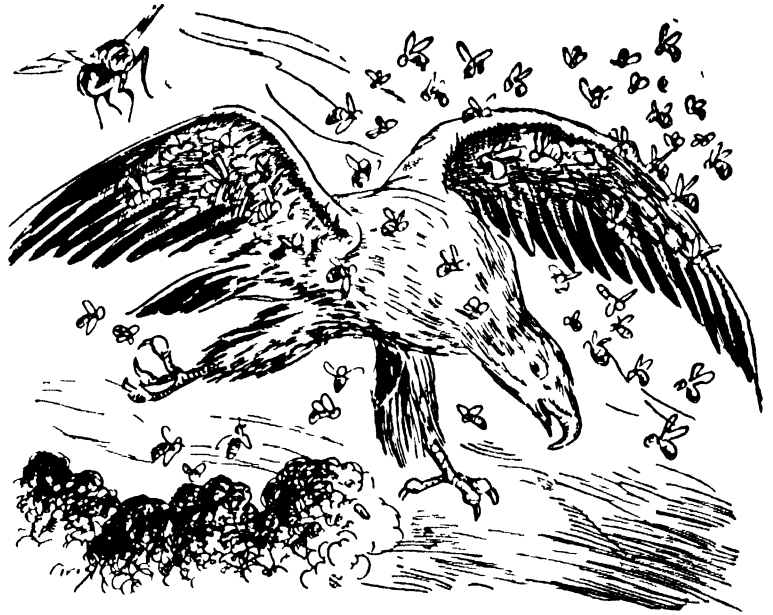
यह सोचकर वह पर तौलकर फ़ौरन् ही उस भौंरे की तलाश में उड़ा। उधर भौंरा जब उक़ाब के अंडे तोड़कर लौटा तो उसे ख़याल आया कि उसने पहाड़ से टक्कर ली है। भला कहाँ उक़ाब और कहाँ एक भौंरा ! उसे यह पक्का विश्वास हो गया कि इस ढिठाई के लिए वह उक़ाब भौंरों की पूरी बिरादरी का काम तमाम कर देगा । पर सोचते-सोचते उसे यह ध्यान आया कि मुमकिन है, शहद की मक्खियों की रानी इस विपदा के समय कुछ काम आए। उसके पास अनगिनत सिपाही हैं। अगर वह इस आड़े वक़्त पर मदद करे तो एक बार इस उक़ाब को फिर नीचा दिखाया जा सकता है !

यह सोचकर भौंरा भनभनाता हुआ तुरन्त ही शहद की मक्खियों के छत्ते पर पहुँचा । छत्ते के दरवाज़े पर जो पहरेदार खड़े थे, उन्होंने पूछा कि 'आपको क्या काम है ?'

भौंरे ने कहा—'तुम अपनी रानी से मेरी सलाम कह दो और यह भी कह दो कि एक बहुत ज़रूरी काम के लिए मैं उनसे मिलना चाहता हूँ।'

पहरेदारों ने फ़ौरन् रानी को ख़बर दी और वह बड़ी शान के साथ छत्ते के दरवाज़े पर आ गई ।

कुशल-मंगल पूछने के बाद रानी ने पूछा—'कहिए, क्या काम है ?'

भौंरा कहने लगा—'हमारा और आपका साथ बहुत पुराना है। आप फूलों का रस चूसती हैं और मैं फूलों का पहरेदार हूँ। अगर मैं फूलों की हिफ़ाज़त न करूँ तो कीड़े-मकोड़े उनको चट कर जाएँ और आप उसके लिए तरसा करें !'

रानी ने कहा—'इसमें क्या शक है कि आपकी ज़िन्दगी हमारे लिए बहुत ज़रूरी है।'

भौंरे ने कहा—'पर अब वह ज़िन्दगी ख़तरे में है।'

रानी ने पूछा—'यह कैसे ?'

भौंरे ने उक़ाब का सारा क़िस्सा उसको बताया और कहा कि 'अब वह दुष्ट मेरी तलाश में आता ही होगा। आप मेरी जान बचाइए।'

मक्खियों की रानी ने कहा—'आप घबड़ाइए मत ! मेरी फ़ौज इतनी है कि उक़ाब आपका बाल भी बाँका नहीं कर सकता !'

इतने ही में सन-सन की आवाज़ आई और दूर ही से गुस्से से भरा हुआ उक़ाब आता दिखाई दिया। भौंरा चिल्लाया—'वह देखिए, वह दुष्ट आ पहुँचा!'

रानी ने फ़ौरन् ही अपनी मक्खियों को उक़ाब पर हमला बोल देने का हुक्म दिया। बात की बात में सैकड़ों मक्खियाँ इधर-उधर से इकट्ठा होकर उक़ाब पर झपट पड़ीं। कुछ उसके परों में घुस गईं, किसी ने सिर पर डंक मारा, किसी ने पेट में अपने भाले चुभोए। कई एक साथ उसकी टाँगों ही से चिपट गईं और डंक मारने लगीं। देखते ही देखते उक़ाब की हालत ऐसी हो गई कि हज़ारों डंक उसके बदन में घुस गए। आख़िर उसने बेदम होकर भागना चाहा, लेकिन मक्खियों ने उसको चारों तरफ़ से घेर रक्खा था! थोड़ी देर में मक्खियों ने इतना ज़हर उसके बदन में भर दिया कि वह बेबस होकर धरती पर गिर पड़ा और उसकी मौत सिर पर मँडराने लगी।

तब भौंरा उसके सामने आया और भन-भन की आवाज़ के साथ यह कहता हुआ उड़ गया कि 'यह है किसी ग़रीब को सताने का नतीजा!'

पुदने और बगुले की होड़

रूपमती बड़ी नेक और दयावान लड़की थी। गाँव भर उसकी भलमनसाहत और दयालुता के गीत गाता था। वह तड़के ही अपनी गायों को दुहती और अपने माँ-बाप के जागने से पहले ही आग सुलगाकर दूध गरम कर लेती। तब अपनी गायों और बकरियों को लेकर वह जंगल को चल देती। चलते समय सबसे आगे रहता उसका प्यारा कुत्ता, उसके बाद वह ख़ुद और उसके पीछे-पीछे चलतीं अपने बछड़ों और मेमनों सहित उसकी गायें और चितकबरी बकरियाँ। कुत्ता आगे जाकर झील के किनारे पीपल के एक घने पेड़ के नीचे बैठ जाता और जब थकान के कारण रूपमती को पीपल की उस सुहावनी छाया में नींद आ दबोचती तो कुत्ता गाय-बकरियों की चौकसी रखता। एक दिन हुआ यह कि एक चोर ने एक मेमने पर कम्बल डालकर उसे चुपचाप पकड़ लिया, जिससे वह ग़रीब डर के मारे मिमिया भी न सका! रूपमती उसी पेड़ के नीचे नींद में बेसुध पड़ी सो रही थी। पर कुत्ता यह सब-कुछ देख रहा था। उसके गुस्से की कोई हद न रही और उसने उछल

चलते समय सबसे आगे रहता उसका प्यारा कुत्ता, उसके बाद वह ख़ुद और उसके पीछे-पीछे चलतीं अपने बछड़ों और मेमनों सहित उसकी गायें और चितकबरी बकरियाँ ....

एक दिन हुआ यह कि एक चोर ने एक मेमने पर कम्बल डालकर उसे चुपचाप पकड़ लिया, जिससे वह ग़रीब डर के मारे मिमिया भी न सका

कर चोर की पिंडली पर मुँह मारा। चोर मेमने को वहीं पटककर अपनी जान छुड़ाकर भागा ! कुत्ते के दाँतों से उसकी सारी पिंडुली लोहूलुहान हो गई थी। इस भगदड़ में रूपमती की आँख खुल गई। जब उसने सारा हाल जाना तो अपने प्यारे मेमने को पुचकारा और कुत्ते को उसकी चौकसी के लिए शाबाशी दी, पर साथ ही उसे समझाया कि 'देखो, भूँकना ही काफ़ी है। काटने की ज़रूरत नहीं।' कुत्ता बेचारा शर्म से पानी-पानी हो गया, क्योंकि वह जानता था कि उसकी मालकिन कितनी दयावान और भली है !

पीपल के उस पेड़ पर यों तो बहुत-से पक्षी बसेरा लेते थे, पर एक छोटे-से पुदने की ओर रूपमती का ख़ास ध्यान रहता था, जिसने वहाँ अपना घोंसला बना रखा था ! हर दिन रूपमती उस पुदने के लिए छँटे हुए चाँवल और बाजरा अपने घर से लाती थी। पुदना भी उसकी बाट जोहता रहता था। यह बात पड़ौस की झील पर रहनेवाले एक मोटे-ताज़े बगुले को बहुत ही बुरी लगती थी। उस बगुले को इस बात पर बड़ा अचम्भा होता था कि आख़िर रूपमती सब पक्षियों को छोड़कर उस छोटे-से पुदने को ही इतना क्यों चाहती है ! उसने बहुत कोशिश की कि रूपमती उसकी भी ख़ातिरदारी करने लगे, पर रूपमती को उस बगुले का सिर उभारकर चलना बिल्कुल पसन्द न था । उसे उसकी चाल में घमंड की बू मालूम देती थी और उसके कपटी स्वभाव से भी वह काफ़ी परिचित थी।

इधर बगुले और पुदने में रोज़ इस बात पर झगड़ा होता और दोनों में आपसी लाग-डाँट बढ़ती चली जाती थी। जब रूपमती इस रोज़-रोज़ के झगड़े से तंग आ गई तो उसने उस झगड़े के निबटारे की एक बड़ी निराली तरकीब सोची। उसने पुदने और बगुले दोनों को बुलाकर कहा कि 'तुम दोनों उड़ो और सामने के पहाड़ की सबसे ऊँची चोटी पर जो सफ़ेद फूल खिलता है, वह मेरे लिए तोड़ लाओ। जो कोई भी वह फूल मेरे पास लाएगा मैं समझूँगी कि वही तुम दोनों में बड़ा है और मैं उसी से प्रेम करूँगी। रूपमती जानती थी कि सामने के पर्वत की सबसे ऊँची चोटी पर जाना कितना मुश्किल है। उसकी नानी ने उसे उस पर्वत की उँचाई के कितने ही अजीब

क़िस्से सुनाए थे। उसने सुनाया था कि किस प्रकार सैकड़ों हिम्मतवर लोगों ने उस चोंटी पर चढ़ना चाहा पर कोई भी वहाँ तक न पहुँच सका। कुछ आधे रास्ते से लौट आए, कुछ और आगे बढ़े, पर चोंटी के आख़िरी सिरे तक कोई भी न जा सका। कुछ आदमियों ने ज़्यादा हिम्मत की और चढ़ते ही चले गए तो उन्हें लौटने का रास्ता न मिला और वे वहीं रह गए। रूपमती को बड़ी लालसा थी कि वह उस पहाड़ की चोंटी पर चढ़ जाय और आस-पास की सारी दुनिया को एक नज़र चारों तरफ़ डालकर देखे। पहले वह समझती थी कि यह दुनिया बहुत छोटी है—बस यही गाँव, यही झील, यही पीपल का पेड़ और यही जंगल उसकी निगाह में सारी दुनिया थी। लेकिन जब उसकी नानी ने उस पर्वत की चोंटी की बातें सुनाईं और बताया कि वहा पहुँचकर आदमी क्या-क्या देख सकता है, तब से रूपमती को मालूम हुआ कि यह दुनिया कितनी बड़ी है। रह-रहकर उसका जी चाहता था कि वह तितली बनकर उड़ जाय और उस पर्वत पर चढ़कर सारी दुनिया को ख़ूब जी भरकर देखे। यही कारण था कि जब पुदने और बगुले में आपस में झगड़ा छिड़ा और उनकी परीक्षा का समय आया तो रूपमती ने उस पहाड़ की चोंटी का ही नाम लिया, जो काफ़ी अरसे से उसके दिल में चुटकियाँ लिया करती थी।
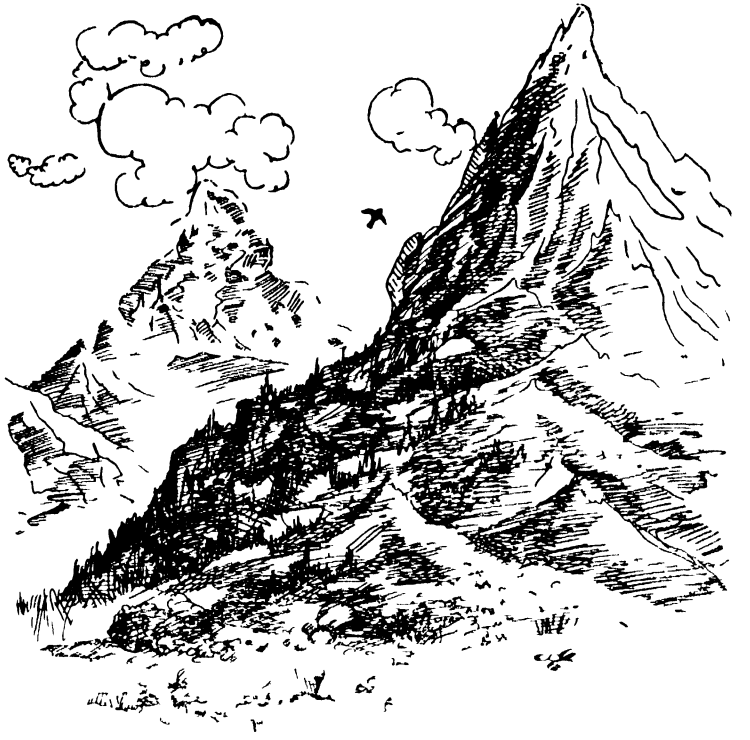
पुदना बेचारा अपनी कमज़ोरी को जानता था, पर उसकी हिम्मत मज़बूत थी। उसने अपने नन्हे-नन्हे पर तौले और फ़ौरन् उड़ना शुरू किया। वह कुछ ही देर में काफ़ी ऊँचा उठ गया..........

रूपमती ने जब उस पहाड़ की चोंटी से फूल लाने को कहा तो बगुले ने ज़ोर से ठट्ठा मारा और कहा—'यह कौन-सी मुश्किल बात है ! मैं एक ही उड़ान में वह फूल तोड़ लाऊँगा।' पर रूपमती जानती थी कि बगुले के पर उसके भारी बदन का बोझ नहीं सँभाल सकते और वह ज़्यादा ऊँचा न उड़ सकेगा। दूसरी ओर पुदना बहुत हल्का पक्षी था। वह अगर हिम्मत न हारे तो उस चोंटी तक ज़रूर पहुँच सकता था। बगुले को अपने डील-डौल पर घमंड था। उसे विश्वास था कि पहाड़ तो ठीक वह आसमान तक को छू सकता है। मारे घमंड के उसने पुदने से कहा कि 'तू पहले उड़ और अपने दिल की उम्मीद पूरी कर ले। मुझे कोई जल्दी नहीं है। फूल तो फूल, अगर मुझसे कहा जाय कि आकाश के तारे भी तोड़ लाओ तो मैं उन्हें भी पलक झपकते ले आऊँगा।'

पुदना बेचारा अपनी कमज़ोरी को जानता था, पर उसकी हिम्मत मज़बूत थी। उसने अपने नन्हे-नन्हे पर तौले और फ़ौरन् उड़ना शुरू किया। वह कुछ ही देर में काफ़ी ऊँचा उठ गया और आँखों से ओझल हो गया। पहाड़ की वह चोंटी, जहाँ से फूल लाना था, बहुत ऊँची थी और पुदने के पर बहुत कमज़ोर थे। वह कभी इससे पहले इतना ऊँचा उड़ा भी न था। फिर भी वह दिल पक्का करके उड़ता ही रहा। जब थक जाता तो वह किसी निचली चोंटी पर दम भर को बैठकर सुस्ता लेता था और तब फिर उड़ने लगता था।

इधर बगुला अभी झील के किनारे चुन-चुनकर मेंढक खाने में ही लगा हुआ था। जब उसका पेट ख़ूब भर चुका तो

उसने रूपमती से आकर कहा—'मैं शर्त बाँधता हूँ कि तुम्हारा दोस्त पुदना कहीं थककर गिर पड़ा होगा। अब तुम मेरी उड़ान देखो।' यह कहकर उसने अपने बड़े-बड़े पर फैलाए, लम्बी-लम्बी टाँगें सिकोड़ीं और आसमान की तरफ़ एक उड़ान भरी। उस बगुले का पेट खाते-खाते इतना भर गया था कि अपने बदन का बोझ सँभालना उसके लिए मुश्किल हो रहा था, फिर भी उसने अपनी कोशिश बराबर जारी रखी। इधर नीचे ज़मीन से रूपमती, उसकी गायें, गायों के बछड़े और बकरियाँ गर्दन ऊँची उठाए उस बगुले की बेडौल उड़ान को देख-देखकर मुस्करा रहे थे। कुत्ता भी पास ही खड़ा भूँक रहा था, मानों भूँक-भूँककर वह उस लंबे बेडौल बगुले का मज़ाक़ उड़ा रहा हो!

इधर बगुला अभी झील के किनारे चुन-चुनकर मेंढक खाने में ही लगा हुआ था........................

थोड़ी ही देर उड़ने के बाद बगुले के परों के लिए उसके बोझिल और भारी बदन का बोझ सँभालना मुश्किल हो गया। उसकी साँस उखड़ गई। बदन का जोड़-जोड़ टूटने लगा और एकबारगी ही वह पलटियाँ खाता हुआ ज़मीन की तरफ़ इस तरह गिरने लगा जैसे कोई मरा हुआ गिद्ध आसमान से नीचे आ रहा हो!

रूपमती ज़ोर से हँस पड़ी! उसकी बकरियाँ भी मिमियाने लगीं। कुत्ता भी भूँक कर बड़ी तेज़ी से झपटा। वे सब हँसी के मारे बेचैन हो गए। इधर बगुले की अभी यह गत हो ही रही
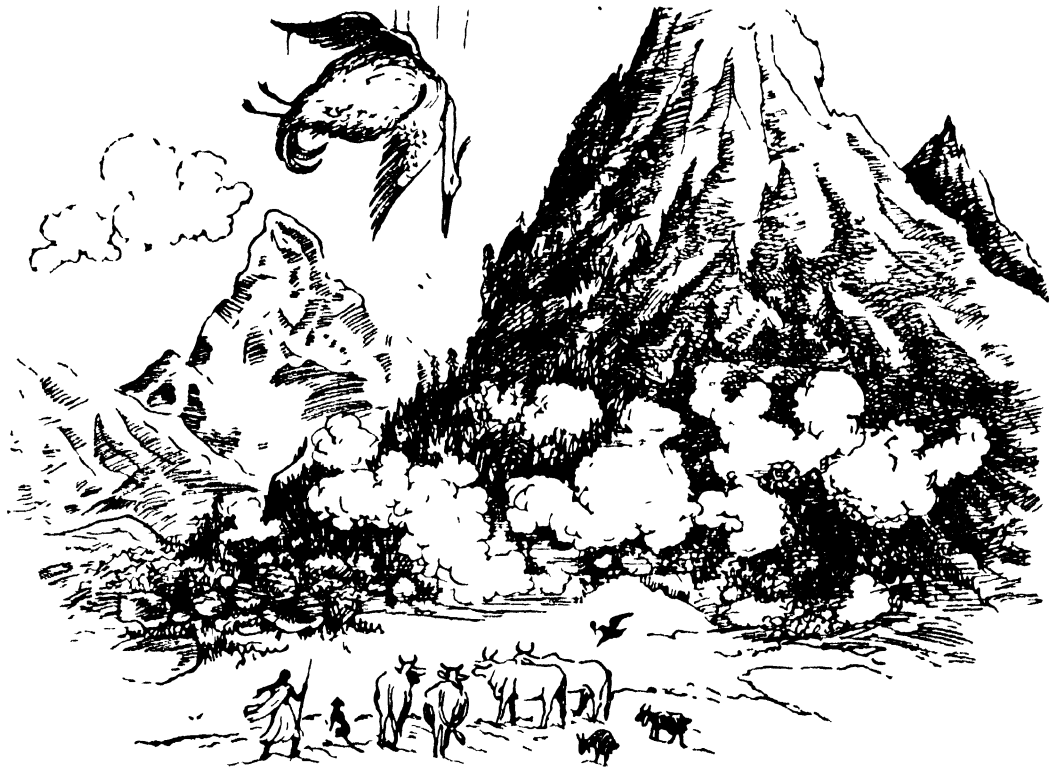
थोड़ी ही देर उड़ने के बाद बगुले के परों के लिए उसके बोझिल और भारी बदन का बोझ सँभालना मुश्किल हो गया। उसकी साँस उखड़ गई। बदन का जोड़-जोड़ टूटने लगा और एकबारगी ही पलटियाँ खाता हुआ वह ज़मीन की तरफ़ इस तरह गिरने लगा जैसे कोई मरा हुआ गिद्ध आसमान से नीचे आ रहा हो......

थी कि ऊँचे आसमान में दूर से एक धब्बा-सा दिखाई देने लगा, जो क्षण-क्षण पर गहरा होता जा रहा था। यह धब्बा क्या था वही पुदना था—हिम्मत का धनी वही पुदना, जो अपने वादे को पूरा करता हुआ अपनी चोंच में पर्वत का वह फूल दबाए हवा में उड़ता हुआ चला आ रहा था! रूपमती ने फ़ौरन् अपने प्यारे पुदने की तरफ़ हाथ बढ़ाया और वह प्यार से उसके कन्धे पर आ बैठा। उस समय रूपमती और उसके साथी—गाय, बछड़े, बकरियाँ, मेमने और कुत्ता—सभी उस कमज़ोर पुदने की मर्दाना हिम्मत पर ख़ुशी के मारे फूले नहीं समाते थे और बगुलेराम शर्म के मारे अपना मुँह छिपाए कहीं झील के किनारे पड़े-पड़े कराह रहे थे!

इतराओ मत

किसी तालाब में दो मछलियाँ रहतीं थीं, जो आपस में बहनें थीं। बड़ी बहन का नाम 'सदबीन' और छोटी का नाम 'हज़ारिन' था। ये दोनों मछलियाँ बड़ी लापरवाह मिज़ाज की थीं। उनका सारा वक़्त सैर-सपाटों में ही गुज़रता था। इन मछलियों के पड़ोस में एक मेंढ़क भी रहता था, जो बहुत बूढ़ा हो गया था। बुढ़ापे के कारण उसकी आँखें कमज़ोर हो गई थीं, फिर भी उसकी सूझ-बूझ और होशियारी के कारण तालाब के सभी जानवर उसे 'दूरबीन' कह-कर पुकारते थे। वे दोनों मछलियाँ भी उसे अपना बुज़ुर्ग समझकर उसकी सेवा करतीं और वह भी उनसे प्रेम करता था। पर वह मेंढ़क इन मछलियों के अल्हड़पन और लापरवाह मिज़ाज से बहुत नाराज़ रहा करता था और अक्सर कहा करता था कि तुम एक रोज़ अपनी इस बेपरवाही से धोखा खाओगी। मछलियाँ उसकी यह बात इस कान से सुनतीं और उस कान से उड़ा देतीं। एक बार कई मछुए उस तालाब पर आए। उनके कन्धों पर जाल पड़े हुए थे। तालाब पर आकर उन्होंने मुँह-हाथ धोया और तब चिलम पीने लगे। मेंढ़क ने जो किसी की आहट पाई तो वह किनारे पर आ गया ताकि देखे कि कौन आया है। उसने एक मछुए को दूसरे मछुए से यह कहते सुना कि 'यार, यह तालाब तो मछलियों से भरा पड़ा है। यदि इसमें जाल डाल दोगे तो वे मोटी-मोटी रोहू फँसेंगी कि भाग्य खुल जाएँगे।' यह सुनकर दूसरे मछुए ने जवाब दिया कि 'मैं तो पहले ही यह बात सोच रहा था। अच्छा पक्की रही! कल सुबह ही जाल डाल देगें।' इस तरह बातचीत करके वे मछुए चले गए!

मेंढक को मछुओं की यह बातचीत सुनकर बहुत डर लगा। वह भागकर सीधा 'सदबीन' और 'हज़ारिन' के पास आया और कहने लगा—'अरी, क्या गाफ़िल बैठी हो? मछुओं ने इस तालाब को ताक लिया है.............................
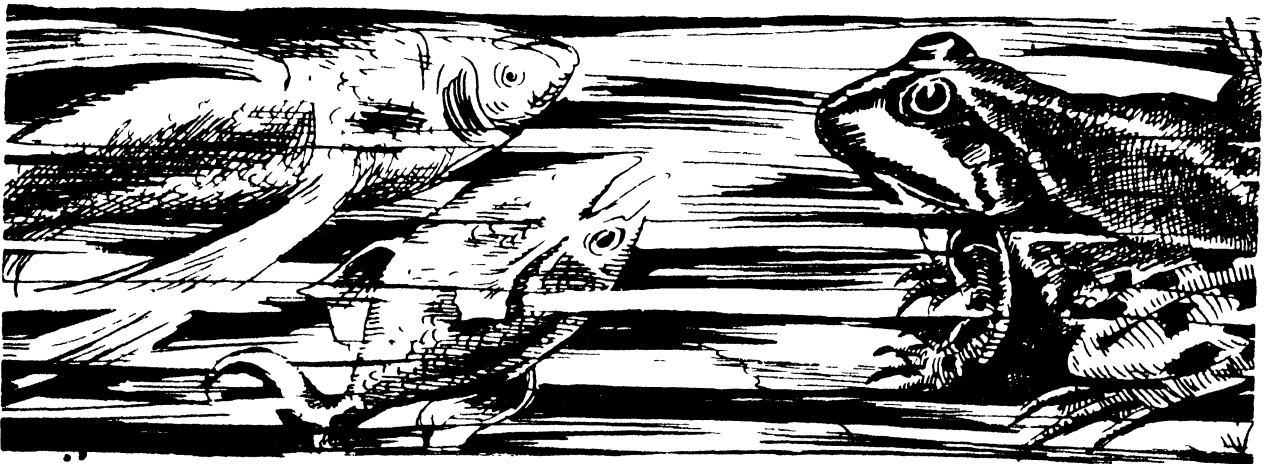
पर अभी ये मछलियां आपस में यों बात-चीत कर ही रही थीं कि उन्हें तालाब के किनारे पर कंधों पर जाल रक्खे कई मछुए आते हुए दिखाई दिए .....

मेंढ़क को मछुओं की यह बातचीत सुनकर बहुत डर लगा। वह भागकर सीधा 'सदबीन' और 'हज़ारिन' के पास आया और कहने लगा—'अरी! क्या गाफ़िल बैठी हो? मछुओं ने इस तालाब को ताक लिया है! मैंने अपने कानों से सुना है कि वे कल इस तालाब में जाल डालेंगे। कम्बख़्तो! अब अगर जान बचाना हो तो मेरे साथ फ़ौरन् भाग चलो। मैं तो जा रहा हूँ। यहाँ से कुछ ही दूर एक बड़ी झील है। चलो, वहीं चलकर रहेंगे।'

मेंढ़क की यह बात सुनकर 'सदबीन' और 'हज़ारिन' दोनों हँसने लगीं और कहने लगीं कि 'तुम तो डरपोक हो। मछुए इस तालाब में कहाँ जाल डालेंगे? वे मुँह धो रक्खें कहीं! यहाँ कौन उनके जाल में फँसेंगे?'

मेंढ़क ने कहा—'बच्चों की-सी बातें न करो! अक़्लमन्द वह है जो ख़तरे की बू पाकर पहले ही सँभल जाय।' इस पर बड़ी बहन 'सदबीन' ने कहा—'दादा, मैं अच्छी तरह जल-विद्या जानती हूँ और इस तालाब के कोने-कोने से परिचित हूँ। एक तो वे मछुए यहाँ आकर जाल ही नहीं डालेंगे। पर अगर डालेंगे भी तो मैं तुम्हें बचा लूँगी।'

मेंढ़क ने कहा—'तुम बेचारी मुझे क्या बचाओगी! पहले अपनी ही फ़िक्र करो।'

छोटी बहन हज़ारिन इस बातचीत को बड़े ग़ौर से सुन रही थी। जब उसने बड़ी बहन की बात सुनी तो मेंढ़क से कहने लगी—'दादा, मछुए तो तालाब में जाल डालने सुबह आएँगे फिर तुम अभी से क्यों घबड़ा गए? अभी तो पूरी रात बाक़ी है! जब सुबह होगा तब देखा जायगा!'

मेंढ़क ने कहा—'बेटी, जो काम वक़्त गुज़रने पर किया जाता है, उसमें वह ख़ूबी पैदा नहीं होती जो वक़्त पर काम करने से होती है। सुबह जब मछुए जाल कंधे पर रखकर आएँगे और तालाब को घेर लेंगे उस वक़्त तुम जान बचाने की जो कोशिश करोगी, उससे हज़ार गुना अच्छा यह है कि अभी ही फ़िक्र कर लो!'

पर मेंढ़क के लाख समझाने पर भी किसी तरह उन मछलियों की समझ में यह बात न आई। आख़िरकार हारकर वह कहने लगा कि 'अच्छा भाई, मैं तो जाता हूँ। तुम

अपनी जान बचाती रहना।' यह कहकर वह मेंढ़क उस तालाब से निकल गया और वहाँ से दूर चला गया। इधर मछलियों ने रातभर ख़ूब रँगरेलियाँ कीं और मेंढ़क की कायरता पर वे मन ही मन हँसती रहीं। चाँदनी रात थी। पानी पर अजीब बहार छा रही थी। जंगल में सन्नाटा था। पुरवाई चल रही थी। छिटकी हुई चाँदनी में तालाब का पानी पिघली हुई चाँदी की तरह चमक रहा था। ऐसे वक़्त में भला सदबीन और हज़ारिन की ख़ुशी का क्या कहना था! वे पूरे तालाब में तैरती फिरती थीं! कभी डब से अन्दर गोता लगातीं तो कभी छब्ब से पानी के ऊपर आ जाती थीं। उस रुपहली चाँदनी में उनके बदन पानी की सतह पर उभरकर चाँदी की तरह चमकने लगते थे। इसी चहल-पहल में सारी रात बीत गई और पूरब में सुबह की लाली झलकने लगी।

शाम के वक़्त, जब वे मछलियों को पकड़कर घर ले जा रहे थे तो उस बूढ़े मेंढ़क दूरबीन ने झील में से अपना सिर निकालकर देखा कि सदबीन एक मछुए के सिर पर टोकरी में धरी थी ....

सुबह होते देखकर छोटी बहन हज़ारिन को होश आया और वह रोती हुई बड़ी बहन के पास आकर कहने लगी—'जीजी, तुम अभी तक यह धमाचौकड़ी ही मचा रही हो। पर देखो, सुबह की लाली आसमान में झलक रही है! अगर मेंढ़क ने सच ही कहा था तो अब वे मछुए आते ही होंगे। तो फिर कुछ करो न!'

सदबीन ने तुनककर कहा—'बावली हो गई हो क्या? मेंढ़क की बात का भरोसा ही क्या! भगवान् जाने कौन थे, जिनको उसने मछुआ समझ लिया! वह तो सनकी है!'

हज़ारिन ने कहा—'पर अगर उसकी बात सच हुई तो?'

सदबीन कहने लगी—'तो देखा जायगा, अभी से क्या घबड़ाहट है? अभी तो सूरज निकलने में भी एक घंटा है! मछुए क्या पागल हैं कि आधी रात से ही जाल लेकर घर से निकल पड़ेंगे।'

पर अभी वे मछलियाँ आपस में यों बातचीत कर ही रही थीं कि उन्हें तालाब के किनारे पर कंधों पर जाल रक्खे कई मछुए आते दिखाई दिए। जब तालाब की मछलियों ने उन्हें सामने आते देखा तो मानों उनकी जान निकल गई! पर अब हाथ-पाँव मारना बेकार था! अब सदबीन ने हज़ारिन से कहा—'बहन, घबड़ाना नहीं! मेरे साथ तुम तालाब की तह में चली चलो! मछुए तो क्या उनके पुरखों को भी ख़बर नहीं हो सकती कि हम कहाँ छिपी हैं!'

यह सुनकर छोटी बहन ने बड़ी बहन से कहा—'जीजी, हमने बड़ी बेवकूफ़ी की कि शाम को मेंढ़क के साथ ही न चल दी। वह सच ही कहता था। अब छिपने-छिपाने से क्या फ़ायदा! हम अगर पाताल में भी जाकर छिपेंगी तो भी ये ज़ालिम मछुए वहाँ से हमें निकाल लाएँगे!'

बड़ी बहन बोली—'नादान की सी बातें मत कर और मेरे साथ चल!' पर हज़ारिन ने कहा—'मैं तो न जाऊँगी। जो कुछ तदबीर करना है, वह यहीं करना ठीक है।' बड़ी बहन ने हर तरह उसे समझाया, पर हज़ारिन न मानी। आख़िर उसे वहीं छोड़कर सदबीन तालाब की तह में छिपने चली गई।

अब तक मछुओं ने तालाब में जाल डाल दिया था और वे कमर भर पानी में उतरकर मछलियाँ पकड़ने लग गए थे। हज़ारिन ने जो यह देखा तो उसने एक तरकीब की। वह मुर्दा जैसी बन गई और चित होकर पानी पर तैरने लगी। एक मछुए ने दूर से उसे जो देखा तो वह लपका। लेकिन पास आकर वह कहने लगा—'अरे, यह तो मर चुकी है!' यह कहकर उसने हज़ारिन को उठाया और एक तरफ़ फेंक दिया। इस तरह वह जाल में फँसने से बच गई।

पर सदबीन को अपनी जलविद्या पर घमण्ड था। मछुओं ने सारे तालाब को मथ डाला और उसे ज़िन्दा ही पकड़ लिया! शाम के वक़्त जब वे मछलियों को पकड़कर घर ले जा रहे थे, तो उस बूढ़े मेंढक दूरबीन ने झील में से अपना सिर निकालकर देखा कि सदबीन एक मछुए के सिर पर टोकरी में धरी थी। अब तक उसमें कुछ साँस बाक़ी थी। मेंढक ने उसे देखा और चिल्लाकर वह कहने लगा—'मूर्ख, अगर मेरा कहना मानती और इतनी इतराती नहीं तो क्यों यह बुरा दिन आज देखना पड़ता!'

प्रेम का अंधापन

एक बार एक नदी के किनारे एक बड़ा मेला होनेवाला था। सब लोग उसकी तरह-तरह की तैयारियों में लगे हुए थे। यह देखकर जंगल के जानवरों ने सोचा कि मेले का सारा भार हर साल आदमियों पर ही पड़ जाता है, क्यों न इस बार जानवरों को भी उनका हाथ बँटाना चाहिए? यह सोचकर उन्होंने इस मेले में जंगल के सभी जानवरों का एक जल्सा करने का तय किया, जिसके लिए दिन और वक़्त भी बड़े-बूढ़ों की राय से तय हो गया। धूमधाम के साथ इस जल्से की तैयारियाँ होने लगीं। जंगल के सभी जानवर इस जल्से को बड़ी खूबी से मनाना चाहते थे। मोर की इच्छा थी कि वह उसमें अपना नाच दिखाकर दर्शकों का दिल बहलाए। कोयल और पपीहे का विचार था कि इस मौक़े पर अपने मनोहर गीत सुनाकर जल्से की रौनक बढ़ाएँ। बन्दर चाहता था कि डुगडुगी बजाए और ख़रगोश का इरादा था कि वह नट के काम दिखलाकर घोड़ों के साथ दौड़ में शरीक़ हो। इसी तरह गायों ने यह तय किया था कि सारी सभा को वे दूध का शर्बत पिलाएँगी, भेड़ें मेहमानों को बिठाने के लिए अपने ऊन के कंबल तैयार करना चाहती थीं और बगुले अपनी ईश्वर-भक्ति का कमाल दिखाना चाहते थे।

मौक़े से उस जंगल के एक तालाब में एक बहुत बूढ़ा मेंढक भी रहता था, जिसकी सभी जानवर बड़ी इज़्ज़त करते थे। वह उम्र में सबसे बड़ा था और सबके साथ अपने बच्चों का-सा बर्ताव करता था। सब उसे साधु की तरह मानते थे, क्योंकि वह गंगा की लहरों के साथ बहते-बहते न जाने कितने तीर्थों का दर्शन कर आया था। सब जानवर यही मानते थे कि उसे गंगा माता ने ख़ुद अपनी गोद में पाला-पोसा है और पढ़ा-लिखाकर पूरा पंडित बना दिया है! और सच भी यही था कि वह एक बड़ा ज्ञानी पंडित था। ख़ासकर बरसात में सारी रात-रात भर अपना वक़्त वह भगवान् का नाम जपने में ही गुज़ार देता था। जाड़े में भी वह ज़्यादातर अपना वक़्त भजन में ही बिताता था और गर्मी भर ध्यान में बैठा रहता था! मतलब यह कि वह किसी वक़्त भी अपने भजनभाव के सिवा और कुछ काम न करता था। सारे इलाक़े में उसकी धूम थी। जब कोई धर्म-कर्म का सवाल उठता तो सब जानवर उसी से पूछते थे और विवाह-शादी में भी मुहूर्त पूछने के लिए लोग उसी को बुलवाते थे। हाँ, तो उस जल्से के मौक़े पर भी सबकी यही सलाह हुई कि उसी मेंढक को जल्से का सभापति बनाया जाय। यह सलाह कर सभी जानवरों ने मेंढक के पास कहला भेजा कि इस के मेले के मौक़े पर हम लोगों का जो जल्सा होना तय हुआ है, सब जानवरों की इच्छा है कि आप उसके सभापति बनाए जाएँ और अपने उपदेशों से सबको लाभ पहुँचाएँ।

जब मेंढ़क के पास जानवरों का यह सँदेशा पहुँचा तो वह सोच में पड़ गया। बात यह थी कि बुढ़ापे के कारण न तो उसमें ज़्यादा चलने-फिरने की ही ताक़त रह गई थी और न उसकी याद ही अब पहले जैसी तेज़ थी। हर बात में उसे अपनी पोथी खोलकर सवालों का जवाब ढूँढ़ना पड़ता था। बुढ़ापे ने उसकी आँखों को इतना कमज़ोर बना दिया था कि उसको अपनी उस पुस्तक के शब्द बहुत ध्यान से देखने पर भी नज़र न आते थे। ज़वानी में तो वह कई-कई घंटे तक लगातार लेक्चर दे लिया करता था, पर अब उसके लिए थोड़ी देर तक बात करना भी मुश्किल था। इन सब बातों ने उसको सोच में डाल दिया, क्योंकि वह न तो इस बात के लिए इन्कार करके अपने साथियों का दिल ही दुखाना चाहता था और न इतनी दूर जाने की ताक़त ही रखता था। आख़िर सोचते-सोचते उसे एक रास्ता सुझाई दिया। उसका एक बेटा था, जिसे उसने पढ़ा-लिखाकर अच्छा ख़ासा पण्डित बना दिया था और अब कुछ ही दिनों में जिसे वह अपनी गद्दी सौंप दने का इरादा करता था। उसने इस काम के लिए यही मौक़ा सबसे अच्छा समझा और अपने उस इकलौते बेटे को ही सभापति बनाकर उस जल्से में भेजने का तय कर लिया। लोगों ने भी इसमें कोई आनाकाना न की!

मेंढ़क के उस बेटे को इस बार से पहले इतने बड़े जल्से में सभापति बनने का कभी मौक़ा ही न मिला था। इसलिए उसने सोचा कि इस मौक़े पर ख़ूब बनठनकर जल्से में जाऊँ तो सब लोगों पर बहुत रोब जमेगा। यह सोचकर नहा-धोकर उसने भड़कीले कपड़े पहने, आँखों में सुरमा लगाया और अपने को एक दूल्हे की तरह बनाने-सँवारने लगा! इन सब तैय्यारियों में उसे काफ़ी देर हुई। उधर जल्से में सब जानवर इकट्ठा हो चुके थे, केवल सभापतिजी के आने की बाट सब जोह रहे थे और इसीलिए काम रुका हुआ था। जब मेंढ़क को आने में बहुत देर हो गई तो बुलाने के लिए एक पर एक हरकारा आने लगा, जिसके कारण मेंढ़क बेचारे के हाथ-पाँव फूल गए। वह जब जल्दी-जल्दी उठकर जल्से में चला तो चलते वक़्त वह अपनी उस ख़ानदानी पोथी को लेना भूल गया, जिसमें उसके बाप ने धर्म-कर्म की सब बातें लिख रक्खी थीं और जिसे जब कभी वह कहीं जाता था तो ज़रूर अपने साथ ले लेता था, क्योंकि उसमें ही हर सवाल का जवाब लिखा था।

जब मेंढ़क का बेटा चला गया तो बूढ़े मेंढ़क को यह ख़याल आया कि वह उस पोथी को यहीं छोड़ गया है! उसे यह देखकर बड़ी परेशानी हुई कि उसका बेटा पहलेपहल बिना उस पुस्तक के किस तरह वहाँ लेक्चर दे पाएगा! यह सोचकर वह फ़ौरन् अपने घर से निकला, ताकि किसी तेज़ हरकारे के हाथ वह उस किताब को अपने बेटे के पास भिजवा दे। वह रास्ते में

ख़रगोश ने यह सुनकर पोथी ले ली और दौड़ता हुआ वह उस जल्से में आया। पर वहाँ आकर जो उसने मेंढ़क के उस ख़ूबसूरत बेटे को देखा तो उसे उसकी यह हुलिया दिखाई दी··· ···
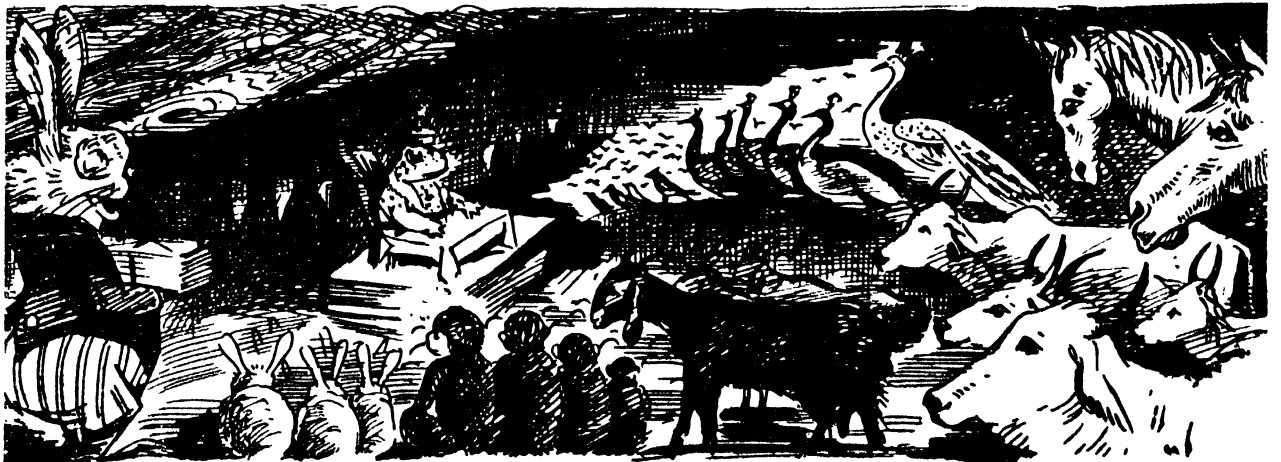
खड़े होकर किसी के निकलने की बाट जोह रहा था कि इतने में एक ख़रगोश सामने आया। मेंढ़क ने उस ख़रगोश को पुकारा और कहा—'बेटा, ज़रा यह पोथी लपककर उस सभा में मेरे लाल को तो दे आओ!'

ख़रगोश ने कहा—'बहुत अच्छा! लेकिन मैं इतनी बड़ी भीड़ में आपके बेटे को पहचानूँगा कैसे?'

मेंढ़क ने कहा—'वाह, यह तो बड़ी आसान बात है! सभा में जिस किसी को तुम सबसे ज़्यादा ख़ूबसूरत पाओ, समझ लेना कि वही मेरा लाल है!'

ख़रगोश ने कहा—'अच्छा, तो फिर आपका बेटा मोर की शक्ल का होगा!'

मेंढ़क ने कहा—'अजी जाओ, मोर उसकी क्या बराबरी करेगा? मेरा बेटा तो उससे भी ज़्यादा सुन्दर है।'

ख़रगोश ने कहा—'तो फिर वह सफ़ेद कबूतर की शक्ल का होगा!'

मेंढ़क ने कहा—'भला कबूतर में भी कोई ख़ूबसूरती होती है! वह तो सिवाय 'ग़टर गूँ' करने के और कुछ जानता ही नहीं! मेरा बेटा तो बुलबुल की तरह चहकता है! ज़रा सुनना आज उसके लेक्चर! और हाँ! अच्छा याद आया, वही तो इस जलसे का सभापति है। जो सभापति की गद्दी पर बैठा हो, समझ जाना कि वही मेरा बेटा है!'

ख़रगोश ने यह सुनकर पोथी ले ली और दौड़ता हुआ वह उस जलसे में आया। पर वहाँ आकर जो उसने मेंढ़क के उस ख़ूबसूरत बेटे को देखा तो उसे उसकी यह हुलिया दिखाई दी—पेट बड़ा, टाँगें छोटी छोटी, आँखें मिचमिची, सिर गोल-मटोल और छाती चौड़ी! ख़रगोश मुस्कराया और मन में कहने लगा कि 'सच ही प्रेम अन्धा होता है, जिसने ऐसे बदसूरत बेटे को भी बाप की नज़र में ख़ूबसूरत बना दिया।'

जब भाग्य जगता है

किसी ज़माने में जमुना के किनारे एक मठ में एक साधु रहता था, जिसका नाम सूर्यकिरण था। यह साधु बेचारा बड़ा नेक था। उसको जो कोई तकलीफ़ भी पहुँचाता, उससे भी वह नरमाई से ही पेश आता था। वह कभी किसी को दुःख न देता था। उसके मठ में एक चूहा भी रहता था, जिसने बड़ा ऊधम मचा रखा था। यह चूहा डील-डौल में बिल्ली के बच्चे के बराबर था और इतना निडर था कि मानों बिल्ली के भी कान कतर लेता था! जितना वह साधु भला और दयालु था, उतना ही यह चूहा शैतान और नटखट था।

इस चूहे के हाथों सूर्यकिरण की जान बड़ी मुसीबत में थी। जब वह भोजन बनाता या कहीं से कुछ लाकर खाने के लिए बैठता तो तुरन्त वह चूहा झपटता और कभी थाली में से पूरी ले भागता तो कभी कचौड़ी और मिठाई, और कभी तरकारी तक पर हाथ साफ़ कर दिया करता था। जहाँ खाने की कोई चीज़ उस मठ में आई नहीं कि वह चूहा फ़ौरन् उसमें अपना हिस्सा बाँट लेता था! वह चूहा क्या था, अच्छा ख़ासा डाकू था और सूर्यकिरण की दयालुता और नरमी ने उस कम्बख़्त को और भी बदमाश बना दिया था। वह ऐसा बर्त्ताव करता, मानों वही इस मठ का असली मालिक हो और सूर्याकिरण उसका केवल एक दास हो, जो हर रोज़ उसके लिए अच्छे-अच्छे खाने और मिठाइयाँ बनाता और लाता हो!

रात को जब सूर्यकिरण सोने लगता तब वह चूहा ख़ास तौर से कोने-कोने में फिरने लगता और जो कुछ भी चीज़ पाता उसे ले भागता। कभी क़लम उठा ले गया तो कभी दावात ही ग़ायब कर दी! कभी कोई पुस्तक ही कतर डाली और कभी कपड़ों ही में जा घुसा और नए सिले हुए कपड़ों में जगह-जगह छेद कर दिए! कभी अनाज की कोई मटकी गिरा दी, तो कभी घी ही उँडेल दिया! मतलब यह कि कुछ न कुछ नुक़सान करना उसके लिए ज़रूरी था! और कुछ नहीं तो

वह सूर्यकिरण के बिस्तर में ही जा घुसता और उसकी नींद उचाट कर देता। बेबस होकर बेचारे सूर्यकिरण को सोते वक़्त अपने पास बाँस की एक लम्बी छड़ी रखना पड़ती, जिसे ज़मीन पर पटक-पटककर वह रात भर उस चूहे को भगाता रहता। उसे दरअसल यह डर हो गया था कि कहीं यह चूहा किसी दिन मेरे नाक-कान न कतर ले!

एक दिन इस साधु का एक चेला कहीं से अपने गुरु से मिलने आया। दिनभर वे दोनों मज़े से बैठे हुए बातचीत करते रहे। चूहा भी एक नए आदमी को मठ में आया देखकर बिल में घुसा रहा और उसने उस दिन सूर्यकिरण की चीज़ें उलटने-पलटने की ढिठाई न की। लेकिन जब रात को भोजन करने का वक़्त आया तब उस चूहे के पेट में मारे भूख के उछल-कूद-सी होने लगी। उसने बिल से जब सिर निकाला तो सूर्यकिरण ने उसकी ओर इशारा करते हुए चेले से कहा कि 'ज़रा इससे होशियार रहना!'

चेले ने पूछा—'क्यों?'

सूर्याकिरण ने कहा—'क्या बताऊँ बेटा, यह चूहा क्या है एक राक्षस है, जो मेरे पीछे पड़ गया है! जब भी भोजन बनाने बैठता हूँ ऐसा धावा करता है कि मेरे होश उड़ जाते हैं और जो चीज़ उसके हाथ लगती है उसे ही उड़ा ले जाता है! परमात्मा जाने अगले जन्म में यह कोई डाकू था या चोर!'

चेले को अपने गुरु की यह बात सुनकर बहुत ताज्जुब हुआ। चूहे तो उसके देश में भी होते थे, पर यह तो उन सभी से निराला कोई चूहा था! वह चुप रहा और चौकसी करने लगा।

सूर्यकिरण ने रसोईघर में खाना पकाना शुरू किया। उधर चूहा बड़ी देर से मौक़े की तलाश में बैठा था, और वह अपने बिल से गर्दन निकाल-निकालकर बार-बार अपनी छोटी-छोटी चमकदार आँखों से गुरु और उसके चेले को देख लेता था। थोड़ी देर में सूर्यकिरण ने चेले से पानी लाने को कहा। चेले के बाहर जाते ही चूहा बिल से निकलकर झपटा और सूर्यकिरण के हाथ से रोटी छीनकर भागा। बात की बात में वह वापस बिल में घुस गया! सूर्यकिरण चूहे को धमकाने के लिए जब लकड़ी उठाने के लिए आगे बढ़ा तो चूहा मैदान ख़ाली पाकर फिर निकल आया और आटे की एक लोई मुँह में भरकर भाग गया। अब तो सूर्याकिरण को भी ग़ुस्सा आ गया और उसने ज़ोर से उसकी तरफ़ लकड़ी फेंकी, पर इस तरह कि चूहे को लगने न पाए। इस पर चूहे ने जो छलाँग मारी तो जा गिरा घी के बरतन पर! बरतन ज़मीन पर लोट गया और सारा घी बह गया! सूर्यकिरण बचारा जी ही जी में कुढ़कर रह गया और चूहा मानों मूछों

कभी क़लम उठा ले गया तो कभी दावात ही ग़ायब कर दी! कभी कोई पुस्तक ही कतर डाली और कभी कपड़ों ही में जा घुसा...

पर थोड़ी देर में खोदते-खोदते चेले की कुदाल किसी चीज़ से टकराई और मिट्टी उठाकर उसने जो देखा तो नीचे लोहे का एक कड़ाव दिखाई दिया, जिसमें सोने की मुहरें भरी हुई थीं......

पर ताव देता हुआ वापस बिल में चला गया। जब चेला पानी लेकर आया तो रसोईघर में इस तरह एक तूफ़ान आया देख और सूर्यकिरण को कुढ़ते पाकर उसने पूछा—'क्या बात है गुरुजी ?'

सूर्यकिरण ने कहा—'बात क्या हुई बेटा! वही पापी अपने बिल से निकल आया था। एक पकी पकाई रोटी ले उड़ा और एक आटे की लोई भी! और मैंने उस कम्बख़्त की तरफ़ डराने को जो लकड़ी फेंकी तो ऐसा भागा कि बदमाश ने सारा घी भी गिरा दिया!'

चेले ने गुरु को दिलासा दिया और कहा—'गुरुजी, आप चिन्ता न करें। मैं आज ही इसका इलाज करूँगा।'

जब भोजन से निबटने के बाद दोनों आदमी सोने को चले तो सूर्यकिरण ने अपना रात का साथी वही बाँस का डंडा उठाकर अपने पास रख लिया! जब चेले ने गुरुजी को थोड़ी-थोड़ी देर के बाद उस डंडे को उठाकर ज़मीन पर पटकते देखा तो उसने समझा कि शायद इनको इस बात की आदत पड़ गई है! इसलिए वह बोला कि 'गुरुजी! मालूम होता है कि लकड़ी के खेल खेलने की आपको बचपन से आदत है!'

इस पर बेचारे सूर्यकिरण ने कहा—'अरे बेटा, साधु को खेल-कूद से क्या वास्ता! यह तो बच्चों के काम के होते हैं। मैं तो इसी पापी चूहे की ही वजह से बार-बार यह डंडा ज़मीन पर दे मारता हूँ, ताकि इसकी आवाज़ सुनकर वह भाग जाए। अगर ऐसा न करूँ तो वह मेरे सीने पर आके कूदने लगेगा।'

चेले ने कहा—'गुरुजी, आइए, मैं आज इस चूहे की आख़िर तक ख़बर ले लूँ, ताकि रोज़-रोज़ का झगड़ा ही मिट जाय!'

सूर्यकिरण ने पूछा—'सो कैसे ?'

चेले ने कहा—'क्यों न इसका बिल ही खोदकर इसे यहाँ से भगा दिया जाय या इसको पकड़कर इसकी पूरी तरह से मरम्मत की जाय!'

सूर्यकिरण ने कहा—'जैसी तुम्हारी मर्ज़ी! पर बेटा उसे मारना मत! मैं किसी भी जीव को मारना नहीं चाहता।

इस तरह सलाह करके दिया जलाकर गुरु और चेले दोनों ने उस चूहे का बिल खोदना शुरू किया। पर थोड़ी ही देर में खोदते-खोदते चेले की कुदाल किसी चीज़ से टकराई और मिट्टी उठाकर उसने जो देखा तो नीचे लोहे का एक कढ़ाव दिखाई दिया, जिसमें कई सोने की मुहरें भरी हुई थीं ! गुरु-चेले दोनों हक्का-बक्का से होकर एक-दूसरे का मुँह ताकने लगे। आख़िर 'यह परमात्मा की देन है' कहकर उन्होंने उन अशर्फ़ियों को अपनी थैलियों और मटकियों में भर लिया और उस दिन से मानों उनका भाग्य ही पलट गया !

सच है, कभी-कभी जब भाग्य खुलता है तो मनुष्य करने जाता है कुछ और, पर हो जाता है कुछ और ही ! कभी-कभी जो हमें सताने आते हैं, वे ही मानों हमारे भाग्य का ताला खोल जाते हैं !

आदत से लाचार

किसी एक नदी के किनारे चट्टानों में एक बिच्छू और एक कछुआ रहते थे, जो गहरे दोस्त थे। उनकी दोस्ती का यह हाल था कि एक के बिना दूसरे को चैन नहीं पड़ता था। कछुआ ज़्यादेतर पानी में उतर जाता था, पर जब अपने दोस्त के बिना उसका जी घबड़ाने लगता तो वह लहरों को काटता हुआ फिर किनारे पर आ जाता और अपने दोस्त बिच्छू के साथ बातचीत में जुट जाता। बिच्छू बड़ा ज़िद्दी जानवर होता है और कछुआ बड़ा सीधा और नेक। फिर भी वे एक-दूसरे के साथ बड़े ख़ुश थे और भगवान् से यही मनाते थे कि जब तक वे दोनों ज़िन्दा रहें एक-दूसरे से अलग न हों।

एक बार मौक़े से ऐसा हुआ कि जेठ-बैसाख की गर्मी के मारे नदी सूख गई। उसके सोते बन्द हो गए और जहाँ पहले घुटनों-घुटनों पानी था, वहाँ अब सफ़ेद रंग की बालू चमकने लगी। पहले-पहल तो कछुए ने इसे सहन कर लिया, लेकिन जब सूखा पड़ जाने से नदी में उसका जीना कठिन हो गया तो उसने सोचा कि अब उसे भी किसी दूसरी जगह जाकर रहना होगा, वरना अगर नदी की यही हालत रही तो वह भूखों मर जायगा। यह सोचकर वह अपने दोस्त बिच्छू के पास आया और अनमना होकर उससे कहने लगा—'दोस्त ! मैं तुमसे आख़िरी बार मिलने के लिए आया हूँ। आज मेरा इरादा यहाँ से कहीं दूर चले जाने का है। तुम जानते ही हो कि मेरा गुज़ारा धरती पर नहीं हो सकता। मैं पानी में रहनेवाला जानवर हूँ

यह सोचकर वह अपने दोस्त बिच्छू के पास आया और अनमना होकर उससे कहने लगा—'दोस्त ! मैं तुमसे आख़िरी बार मिलने के लिए आया हूँ ....

निदान कछुए ने उस बिच्छू को अपनी पीठ पर बिठा लिया और वह नदी पार करने के लए चला

और नदी का जो हाल है, वह तुम देख ही रहे हो। चारों तरफ़ धूल उड़ रही है! इसी से मेरे तमाम पड़ोसी पहले ही यहाँ से भाग चुके हैं। मछलियाँ सबसे पहले बह गईं। उनके बाद केकड़े भी गए और फिर दूसरे जानवरों ने भी अपना बोरिया-बिस्तर बाँधा। और तो और, मेंढक भी साफ़-साफ़ निकल गए! लेकिन मैं अभी तक रुका हुआ था और सो भी इसी कारण कि शायद फिर सूखी हुई नदी में पानी आ जाय और मेरी उम्मीदों की खेती लहलहा उठे। लेकिन दोस्त, तुम देख रहे हो कि नदी का पानी दिन पर दिन सूखता ही चला जा रहा है और अब कीचड़ ही कीचड़ रह गया है। इसलिए मैं तुमसे विदा माँगने आया हूँ!'

बिच्छू ने जो यह बात सुनी तो दुःख के मारे उसका अजीब हाल होने लगा और वह कहने लगा—'प्यारे साथी! तुमने जो कुछ कहा उसने मेरे दिल के टुकड़े-टुकड़े कर दिए। तुम जानते हो कि कितने दिनों से मैं तुम्हारा साथी और दोस्त हूँ। हमने अपनी ज़िन्दगी के सुख के दिन एक-दूसरे के साथ बिताए हैं। तो फिर अब जबकि जीवन का दीपक बुझने के क़रीब है और हमारी उम्र की शाम हो चुकी है तब एक-दूसरे से बिछुड़ने की यह बात भला कैसे हम सह सकते हैं? प्यारे दोस्त, तुम विश्वास करो कि अगर तुम मुझे अकेला छोड़कर चले गए तो मैं पत्थरों से सिर पटक-पटककर मर जाऊँगा।'

कछुए ने बिच्छू की यह दर्दभरी बात सुनकर एक ठंढी साँस भरी और वह कहने लगा—'जो कुछ तुमने कहा वह सच है और मैं जानता हूँ कि साथियों का बिछुड़ना कितनी बड़ी मुसीबत की बात होती है। पर तुम्हीं बताओ कि आख़िर हम करें क्या? मैं पानी के बिना ज़िन्दा रह नहीं सकता और नदी सूखी पड़ी है। इसलिए मेरा कहीं दूसरी जगह जाकर रहना ज़रूरी है, जहाँ मैं ज़िन्दा रह सकूँ।'

बिच्छू ने कहा—'अगर यह बात है और तुम लाचार ही हो कि इस जगह को छोड़ दो तो फिर मुझे भी अपने साथ ले चलो। जहाँ तुम जाओगे वहाँ मैं भी चला चलूँगा!'

कछुए ने कहा—'तुम अच्छी तरह सोच-समझ लो कि मेरे साथ चलने की तकलीफ़ तुम बर्दाश्त कर सकोगे या नहीं!'

बिच्छू ने जवाब दिया—'मैं हर तरह से तैयार हूँ। तुम जैसे भी हो मुझे अपने साथ ले चलो।'

इस पर कछुआ राज़ी हो गया और दूसरे रोज़ तड़के ही दोनों दोस्त नई जगह की तलाश में रवाना हो गए। चलते-चलते एक बहुत बड़ी नदी रास्ते में पड़ी। बिच्छू ने इतनी बड़ी नदी कभी अपनी उम्र में भी नहीं देखी थी। जब वे दोनों उसके किनारे पर पहुँचे तो बिच्छू के होश उड़ गए। कछुए ने बिच्छू से कहा—'अब बताओ, क्या किया जाय? मैं तो इस नदी को तैरकर पार कर जाऊँगा, पर तुम कैसे पार लगोगे?'

बिच्छू ने कहा—'चाहो तो तुम भी मेरा बेड़ा पार लगा सकते हो। कोई तरकीब सोचो।'

कछुए ने कहा—'सिर्फ़ एक बात समझ में आती है और वह यह है कि तुम मेरी पीठ पर बैठ जाओ और मैं तैरकर नदी के उस पार चला जाऊँगा।'

बिच्छू इस बात पर राज़ी हो गया। निदान कछुए ने उस बिच्छू को अपनी पीठ पर बिठा लिया और वह नदी पार करने के लिए चला। कछुआ फ़ौरन् नदी में उतर गया और धीरे-धीरे तैरते हुए आगे बढ़ने लगा। कछुए की पीठ बहुत सख़्त होती है। कहा जाता है कि पुराने ज़माने में कछुए की पीठ की हड्डी ही से ढाल बनाई जाती थी। जब वह कुछ दूर तक पहुँचा तो उसने 'खर्र-खर्र' की-सी एक आवाज़ सुनी, जैसे कोई उसकी पीठ को खुरच रहा हो। उसने अचरज के साथ बिच्छू से पूछा—'यह क्या बात है? यह खर्र-खर्र की आवाज़ कैसी आ रही है?'

बिच्छू ने कहा—'कुछ नहीं, मैं ज़रा तुम्हारी पीठ पर अपने डंक आज़मा रहा हूँ और देख रहा हूँ कि जो हथियार दुश्मन के सीने पर असर कर जाता है, वह दोस्त की पीठ पर भी अपना काम कर सकता है या नहीं।'

कछुए ने कहा—'यह तो बताओ कि तुम दुश्मन के सीने और दोस्त की पीठ में कोई फ़र्क़ भी समझते हो कि नहीं?'

बिच्छू ने कहा—'भई, यह तो मेरी आदत है और मैं अपनी इस आदत से लाचार हूँ। मुझे डंक मारने से मतलब है, चाहे वह ठिकाने पर लगे या न लगे। असर हो या न हो, मुझे अपने काम से काम है।'

कछुए ने बिच्छू की यह बात जो सुनी तो उसे बहुत अफ़सोस हुआ और वह सोचने लगा कि 'भला जो अपने दोस्त की पीठ और दुश्मन के सीने में कोई फ़र्क़ न देखे, उससे क्या उम्मीद हो सकती है कि वह वक़्त पर दोस्ती को निभा देगा। बेहतर यह है कि ऐसे बदमाश को उसकी शैतानी का सबक़ सिखाया जाय ताकि उसकी आँखें खुल जाएँ कि बुराई का क्या नतीजा होता है।' यह सोचकर कछुए ने पानी में एक डुबकी लगानी चाही। जब बिच्छू ने देखा कि कछुआ पानी में डुबकी लगाना चाहता है तो वह घबड़ाकर चिल्लाने लगा कि 'दोस्त, तुम यह क्या कर रहे हो? क्या मेरी जान लोगे? तुम तो डुबकी लगाकर फिर ऊपर चले आओगे, पर मैं तो हमेशा के लिए डूब जाऊँगा।'

कछुए ने कहा—'भाई, तुम डंक मारने की आदत से लाचार हो और मैं डुबकी लगाने की आदत से मजबूर हूँ, चाहे कोई दोस्त ही क्यों न मेरी पीठ पर सवार हो।' यह कहकर कछुए ने जो ग़ोता मारा तो बिच्छू के होशहवास उड़ गए। उसने गिड़गिड़ाकर अपने दोस्त से माफ़ी माँगी, तब कहीं कछुआ फिर पानी से बाहर निकला।

हंसों की रानी

बहुत पुराने ज़माने की बात है। हिमालय क पहाड़ी इलाक़े में मानसरोवर झील के किनारे कभी एक बस्ती आबाद थी, जहाँ कई हंस पालनेवाले रहते थे। इन लोगों के पास हज़ारों हंस थे, जिनकी पालपोस और देखभाल वे बड़े चाव से करते थे। हंसों को चुगाने, टहलाने, सैर कराने, नहलाने और रात को बाड़ों में बन्द करने के लिए इन लोगों ने

बहुत-से नौकर रख छोड़े थे। इन्हीं में एक जवान लड़की भी थी, जो उस बस्ती के किनारे एक तंग और वीरान-सी झोंपड़ी में रहती थी। यह लड़की इतनी ग़रीब थी कि न उसके पास ठीक से तन ढकने को कपड़ा था और न उसे खाने को भरपेट रोटी ही मिलती थी। उसका बदन फटे-पुराने चीथड़ों से ही ढका रहता था। गोकि वह बदसूरत न थी, लेकिन उस गंदे लिबास में लोग उसकी सूरत तक देखने को तैयार न होते थे। जहाँ भी वह जाती लोग 'दुर-दुर' करते और उसे अपने पास तक न फटकने देते थे। परन्तु दुनिया उस बेचारी भिखारिन के साथ दया और प्यार का बर्ताव न करती तो क्या, वह ख़ुद तो मानों दया और प्रेम की जीती-जागती पुतली थी! वह अपने प्यारे हंसों ही के साथ इतनी मुहब्बत रखती थी कि एक माँ भी अपने बच्चों के साथ नहीं रख सकती! और वे हंस भी इस ग़रीब और अनाथ लड़की पर मानों अपनी जान देते थे। वे उसकी एक आवाज़ पर ही मचलते हुए उठ खड़े हो जाते और उसे अपने झुरमुट में ले लेते। दिन भर हंस सरोवर के किनारे दाना चुगते रहते और शाम को फिर अपनी उस रखवालिन लड़की के साथ ठिकाने पर वापस आ जाते।

एक दिन यह लड़की अपने हंसों को चराती-चुगाती हुई सामनेवाली पहाड़ी के उस पार उतर गई, जहाँ पहाड़ की तलहटी में एक सुन्दर मन्दिर बना था। लड़की जब उस मन्दिर के चौक में पहुँची तो उसने शंख और बाजों की आवाज़ सुनी, जिन्हें वहाँ के पुजारी ज़ोर-ज़ोर से बजा रहे थे और यह सूचना दे रहे थे कि 'आज से चौथे दिन इस मन्दिर के सामने नाचरंग का एक बहुत बड़ा जल्सा होगा। जो कोई भी इस जल्से में शरीक होना चाहें, वे मन्दिर के मुखिया से सभा में जाने की अनुमति ले लें। बिना उसकी अनुमति के सभा में कोई नहीं आ पाएगा!' नाचरंग के जल्से में दूर-दूर से नामी गवैये, नाचनेवाले और खेल-तमाशे दिखलानेवाले आनेवाले थे। ऐसा जलसा न कभी आसपास हुआ था, न फिर से होने की उम्मीद ही थी। जब उस ग़रीब लड़की ने यह सूचना सुनी तो उसके मन में एक खलबली-सी मच गई। पर साथ ही यह सोचकर वह जी मसोसकर रह गई कि 'कहाँ वह भारी जल्सा और कहाँ मैं! भला राजा इन्द्र की सभा में किसी भिखारिन का क्या काम! न मेरे पास कपड़े-लत्ते हैं और न गहना! फिर मुझे इस जल्से में आने ही कौन देगा!' वह हंसों को लिये हुए शाम को अपने ठिकाने पर वापस लौट आई और हंसों को उनके बाड़े में बन्द कर अपनी उसी टूटी हुई झोंपड़ी में जाकर ज़मीन पर पड़ रही। उसने अपनी ग़रीबी और बेबसी पर आँसू ढुलकाते हुए रो-रोकर ज़मीन को भिगो दिया। ज्यों-ज्यों उस जल्से का दिन नज़दीक आता जाता था, उसके मन की अजीब हालत होती जाती थी। वह रोज़ देखती थी कि किस तरह उसकी उम्र

वह अपने प्यारे हंसों ही के साथ इतनी मुहब्बत रखती थी कि एक माँ भी अपने बच्चों के साथ नहीं रख सकती.............

की गाँव की दूसरी लड़कियाँ बड़े शौक़ से उस जल्से में जाने की तैय्यारियाँ कर रही हैं, किस तरह उनके कपड़े सिल रहे हैं, गहने ठीक-ठाक हो रहे हैं और सजावट का दूसरा सामान हो रहा है ! उस बेचारी के पास क्या धरा था कि वह कुछ करती ? उसके पास तो केवल आँखों में आँसू थे और ओठों पर आहें ! उसके दिल में एक धुआँ-सा उठता और वह मन मारकर चुप हो जाती। हंस अपनी रखवालिन की यह हालत देखकर हैरान् थे। वे शायद यह समझ गए थे कि यह लड़की किसी भारी दुःख से दुःखी है तभी तो वह न बोलती है, न हँसती है और दिन भर इसी तरह अनमनी बनी रहती है ! पर वे मूक जानवर बेचारे उसके दिल को क्योंकर तसल्ली दे सकते थे !

आख़िर वह दिन भी आ गया जब बस्ती के सभी धनी-मानी लोग नए-नए कपड़े पहनकर और गहनों से लदे हुए उस जल्से में जाने लगे ! अब तो इस लड़की के लिए सब्र करना मानों बस के बाहर हो गया और वह चीख़ मारकर रो पड़ी ! उसे इस तरह चीख़ते देखकर तमाम हंस सिमटकर उसके पास आ गए और अपनी लम्बी गर्दनें उठा-उठाकर वे बड़ी-बड़ी काली आँखों से हमदर्दी के साथ उसकी तरफ़ देखने लगे ! लड़की ने कहा—'प्यारे हंसो, मुझे क्या देखते हो ? तुम बेचारों को क्या ख़बर कि मुझ पर इन दिनों क्या गुज़र रही है ! मेरा जी चाहता है कि ऐसी बेबसी की ज़िन्दगी से अब किनारा कस लूँ ! मैं क्या करूँ ? क्या, तुम भी मेरी कोई मदद नहीं कर सकते !'

यह सुनकर हंसों में मानों सन्नाटा-सा छा गया। अचानक उनमें से एक ख़ूबसूरत हंस को न जाने कैसे आदमी की बोली मिल गई ! वह आगे बढ़ा और अपनी लम्बी गर्दन उठाकर उस लड़की से कहने लगा—'हमारी प्यारी रखवालिन, हम तेरे दुःख को जानते हैं और हमें यह भी मालूम है कि तेरे नाज़ुक दिल पर इस समय क्या गुज़र रही है। हमें कितनी ख़ुशी होगी जब तू महारानियों की तरह उस जल्से में जाएगी और तुझे राजसी कपड़ों में देखकर तेरे दुश्मनों की आँखें चौंधिया जाएँगी ! हम कई दिनों से इसी फेर में थे कि किस तरह तेरी मदद करें और अब हमने अपना रास्ता तय कर लिया

अब तो इस लड़की के लिए सब्र करना मानों बस के बाहर हो गया और वह चीख़ मारकर रो पड़ी……

है। प्यारी रखवालिन, हम तुझे विश्वास दिलाते हैं कि तू इस सभा में ज़रूर जाएगी और ठाठ से जाएगी ! आज तू जंगल से जल्दी ही लौट आना। फिर देखना हम किस तरह तेरा बनाव-सिंगार करेंगे ! हम तुझे वह लिबास पहनाएँगे कि राजा इन्द्र की परियाँ भी उसको देखकर झेंप जाएँगी !'

हंस की यह बात सुनकर वह बेचारी लड़की चकरा गई और कहने लगी कि 'मुझे मालूम न था कि तुम मुझसे मेरी ही बोली में बातें भी कर सकते हो और मेरे दुःख-दर्द को अच्छी तरह समझते-बूझते हो ! प्यारे हंस, तुम्हारी इस हमदर्दी के लिए किस तरह धन्यवाद दूँ !'

हंस ने जवाब दिया—'तुम हमारी महारानी हो और इस बात का हम सब यह क़रार करते हैं कि हम अपनी महारानी की शान रखने के लिए कोई भी बात नहीं उठा रक्खेंगे। परन्तु हम तुमसे भी यह वादा चाहते हैं कि जब तुम्हारे दिन फिर जाएँ तो तुम हमें कहीं भूल न जाना ! क्योंकि अगर ऐसा हुआ तो हमको बहुत दुःख होगा आख़िर हमारी ज़िन्दगी का सहारा तुम्हीं तो हो !'

लड़की ने कहा—'मेरे भोले-भाले हंसो, अगर ऐसा हुआ तो तुम विश्वास रक्खो कि मैं ज़िन्दा भी न रहूँगी ! भला मैं तुम्हें भी कभी भूल सकती हूँ !'

शाम होते ही उस लड़की ने रोज़ की तरह अपने उन हंसों को इकट्ठा किया और वह जंगल से वापस घर की तरफ़ रवाना हो गई। रास्ते में वह बराबर हंसों के उस दिन के वादे पर विचार करती रही। घर पहुँचकर उसने हंसों को जब उनके बाड़े में बन्द करना चाहा, तो उनके सरदार ने आगे बढ़कर कहा कि 'महारानी, अब तुम्हारी सजावट का वक़्त आ गया है। आओ, हमारे पास आओ।' इस पर लड़की के अचंभे का पार न रहा, पर वह विश्वास करके उन हंसों के झुरमुट में चली गई और वे सब उसके आसपास क़तार बाँधकर खड़े हो गए ! अब हंसों के सरदार ने कहा कि 'महारानी, जल्दी करो। तुम अपना लिबास उतारकर हमें देदो। हम तुम्हारे लिए एक नई पोशाक तैयार कर दें !'

ग़रीब लड़की ने उनका कहना मान अपना मैला-कुचैला ओढ़ना, जिसमें ढेरों गर्द और मैल जमा थी, उतारकर हंसों को दे दिया। उन्होंने उसे अपनी चोंचों में थाम लिया और पटक-पटककर वे उसकी धूल उड़ाने लगे ! फिर उन्होंने अपनी नोकदार चोंचों से उस पर जमी हुई मैल का एक-एक कण चुन लिया और पर मार-मारकर उसकी तमाम धूल झाड़ दी। जब कपड़ा पूरी तरह साफ़ हो गया, तब उन्होंने अपने रेशम-जैसे मुलायम परों से, जो चाँदी के पत्तरों की तरह चमक रहे थे, उसके आसपास एक ख़ूबसूरत झालर टाँकना शुरू किया और उस पर अपने छोटे-छोटे सफ़ेद परों से ऐसी कढ़ाई की कि वह परियों के ख़ूबसूरत जामे से भी कहीं ज़्यादा सुन्दर बन गया ! उसे इस तरह सजाने के बाद उन्होंने उसकी चोली और साये को भी साफ़ किया और उन पर भी अपने परों से ऐसे अजीब-अजीब बेलबूटे बना दिए कि सब देखकर दंग रह जाएँ ! जब यह अनमोल जोड़ा तैयार हो गया तो उन्होंने अपने नाज़ुक परों से उस लड़की के बदन को भी साफ़ करना शुरू किया। थोड़ी ही देर में वह ऐसी हो गई जैसे संगमर्मर की मूर्त्ति हो ! अब ख़ुशी से झूमते हुए उन हंसों ने अपनी उस महारानी को वह अनोखी पोशाक पहना दी और जब वह उसमें एक परी की तरह दिखाई देने लगी तो हंसों के सरदार ने उसकी ओर ग़ौर से देखा और कहा— 'नहीं, अभी एक कसर रह गई है। यह कपड़े ख़ाली अच्छे नहीं लगते। ये ज़ेवर भी माँगते हैं !'

लड़की ने कहा—'प्यारे हंसो ! ज़ेवर तुम कहाँ से ला सकोगे ?' इस पर एक बूढ़ा हंस बोला—'महारानी, भगवान् ने हमें बड़ी गहरी निगाह दी है। अक्सर लापरवाह औरतें अपना क़ीमती ज़ेवर इधर-उधर छोड़ जाती हैं और हम उसे निगल लेते हैं। हमारे पेट में ऐसे न जाने कितने गहने हैं। जब ज़रूरत पड़ती है तब हम उन्हें अपने पेट से बाहर निकालते हैं।

आज तुम्हारी सजावट के लिए हमारा वह सारा ख़जाना सामने आ जायगा।' यह कहकर उस बूढ़े हंस ने अपने पेट में से बड़े-बड़े मोतियों की एक माला उगली और उसकी देखा-देखी फ़ौरन् ही दूसरे हंसों ने भी एक के बाद एक ज़ेवर उगलना शुरू किया! देखते ही देखते तरह-तरह के क़ीमती ज़ेवरों का सामने ढेर लग गया! लड़की ने ऐसे ख़ूबसूरत और अनमोल गहने कभी सपने में भी न देखे थे। वह उनको देखकर ख़ुशी के मारे उछल पड़ी! अब हंसों ने चुन-चुनकर उसे तरह-तरह के ज़ेवर पहनाना शुरू किया। उँगलियों में हीरे की अँगूठियाँ, हाथों में रत्नों से जड़ी चूड़ियाँ, नाक में नलिम की कील, पैरों में मोतियों के पायज़ेब और इसी तरह मालाएँ, बाजूबंद, बालियाँ, पत्ते, नथ और न जाने क्या-क्या गहने उन्होंने अपनी महारानी को पहना दिए। जब वह उन गहनों से लद गई तो हंस क़तार बाँधकर उसके आसपास नाचने लगे। नाचते-नाचते हंसों के सरदार ने कहा कि 'महारानी! अब तुम्हें उस जल्से में जाना चाहिए। देखना, लोग तुम्हारी राह में मानों आँखें बिछा दग!

अब हंसों ने चुन-चुनकर उसे तरह-तरह के ज़ेवर पहनाना शुरू किया। उँगलियों में हीरे की अँगूठियाँ, हाथों में रत्नों से जड़ी चूड़ियाँ, नाक में नीलम की कील, पैरों में मोतियों के पायज़ेब.....................

लेकिन तुम इतराना मत और हमें भी मत भूलना। अगर तुमने हमें भुला दिया तो फिर हम तुम्हें यहाँ नहीं मिलने के।'

लड़की ने कहा कि 'मेरे प्यारे हंसो, कहीं ऐसा हो सकता है कि मैं तुमको ही भुला दूँ!' यह कहकर उसने उन हंसों से विदा माँगी, और बनठनकर वह मुस्कराती हुई जल्से की तरफ़ रवाना हुई। ज्योंही वह सभामंडप के द्वार पर पहुँची तो लोग उसके ठाट-बाट और वेश को देखकर हक्का-बक्का रह गए। उन्होंने समझा कि ज़रूर यह कोई महारानी या कोई परी है! फ़ौरन सब लोग उसको जल्से में ले आए। उन्होंने उसे सबसे ऊँचे सिंहासन पर बिठाया और जब नाच-रंग शुरू हुआ तो सबने डरते-डरते उससे भी उसमें शरीक़ होने की प्रार्थना की। लड़की तो बहुत दिनों से इसी बात का सपना देख रही थी। वह सभा के आँगन में उतर पड़ी और ऐसी नाची, ऐसी नाची कि बड़े-बड़े नचैया और नट भी कान पकड़ गए! इसी तरह तमाम रात रँगरेलियाँ होती रहीं और उसे यह ख़याल ही न रहा कि हंस बेचारे उसका रास्ता ताक रहे होंगे! सुबह होने पर उसे उन हंसों का ख़्याल ज़रूर आया, परन्तु जल्सा अभी जारी था और उसका जी न चाहता था कि इतने बड़े जल्से को छोड़कर वह लौट जाय। दूसरे रोज़ भी वह इसी तरह नाच-रंग में लगी रही और सब लोग उसे घेरे बैठे रहे तीसरे रोज़ जब सूरज छिपे जल्सा ख़त्म हुआ, तब वह लड़की इतनी थक गई थी कि एक क़दम भी न चल सकती थी। मजबूर होकर वह पड़कर सो गई। इधर दो दिन तक हंस अपने बाड़े में घिरे अपनी रानी की बाट जोहते रहे। पर जब तीसरा दिन हुआ तो भूख-प्यास के मारे उन हंसों का अजीब हाल होने लगा। तब उनके सरदार ने कहा कि 'साथियो! मैं जो शक करता था वही हुआ! हमारी रानी ने नाच-रंग में हमें भुला दिया है! अब वह हमें वापस नहीं मिल सकती। वह अपने वादे को भुला चुकी है। तो फिर आख़िर हम कब तक उसका इन्तज़ार करें! चलो, निकल चलो!' यह सुनकर तमाम हंस उस बाड़े से निकल गए और पर फटफटाकर वे उड़ते हुए न जाने कहाँ चले गए।

चौथे रोज़ जब हंसों की वह महारानी वापस अपने घर आई तो उसने देखा कि उसके हंसों का बाड़ा वीरान पड़ा है और घर भी मानों काटने को दौड़ रहा है ! उसे उन हंसों की बात याद हो आई और उसकी आँखों से आँसू बहने लगे। वह उल्टे पाँव उन हंसों को ढूँढते-ढूँढते जंगल की ओर भागी, पर वहाँ हंस कहाँ मिलने को थे ! उसने पहाड़ों का कोना-कोना छान मारा, पर उसके हंसों का कहीं पता भी न था । रास्ते भर वह जंगल और पहाड़ में इधर से उधर दौड़ती-भागती हुई अपने प्यारे हंसों को पुकारती फिरती थी, पर उसकी पुकार सुननेवाला वहाँ कौन था ! सुबह होते-होते उसने कहीं दूर से उन हंसों के गाने की एक धीमी-सी आवाज़ सुनी। वे दूर से यह गीत गा रहे थे—

रास्ते भर वह जंगल और पहाड़ों में इधर-उधर दौड़ती-भागती हुई अपने प्यारे हंसों को पुकारती फिरती थी, पर उसकी पुकार सुननेवाला वहाँ कौन था ....

तनाना तनाना, तनाना तुन !

प्रीति का वादा हमने ना तोड़ा,
तुमने हमारा साथ है छोड़ा,
नाहक तुमसे नाता जोड़ा,
तनाना तनाना तनाना तुन !

जीवन है एक बाग़ निराला,
प्रेम ही है उसका रखवाला।
प्रेम नहीं तो वीरान यह बगिया;
कौन है इसको सींचनेवाला !

इस बगिया के फूल न चुन !
तनाना तनाना तनाना तुन !!

लड़की ने दूर से हंसों के गाने की वह आवाज़ जो सुनी तो वह उस तरफ़ लपकी, पर हंस वहाँ से पहले ही उड़ चुके थे। बेचारी लड़की भागते-भागते थक गई। आख़िर वह दौड़ते-दौड़ते गिर पड़ी, उसकी वह ख़ूबसूरत पोशाक टुकड़े-टुकड़े होकर बिखर पड़ी, उसके वे गहने भी गिर गए, उसके बालों की लटों में फिर से धूल भर गई और हंसों की वह महारानी ज़रा-सी भूल-चूक के कारण फिर से वही ग़रीब भिखारिन लड़की बन गई !